साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२१ अंक-१० ❖ पृष्ठ ८८ | वैशाख-ज्येष्ठ, संवत्-२०७३ | मई २०१६

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय

कुछ अपनी, पनामा पेपर्स का खुलासा... ४

प्रतिस्मृति

बीवी की छुट्टियाँ/ *आर.के. नारायण* १०

कहानी

फैसला/ *नताशा अरोड़ा* १३

एक चिट्ठी ऐसी भी/ *श्रद्धा पांडेय* २०

उधार का सुख/ *शशिभूषण सिंहल* २८

एक सच स्त्री और स्त्री का/ *दया दीक्षित* ३६

एक रुपए में खुशी/ *सत्य प्रकाश भारतीय* ४७

भूतपूर्व मंत्री से.../ *डी.एन. श्रीनाथ* ५९

सुझाव/ *ममता चंद्रशेखर* ६२

आलेख

विद्यालयों में नैतिक शिक्षा/ *महेश चंद्र शर्मा* १६

पाश्चात्य समीक्षकों की दृष्टि में गीतांजलि/ *छन्दा बैनर्जी* २३

मान-सम्मान की प्रतीक—पाग/ *शिवनंदन कपूर* ३३

सेवा परमो धर्मः/ *चितरंजन लाल भारती* ५०

शिवाजी और आगरा/ *सतीश चंद्र चतुर्वेदी* ५४

श्रीराम के पुरातात्त्विक कला-शिल्प/ *ललित शर्मा* ६०

लघुकथा

भीख/ *अनीता प्रभाकर* १९

सीख/ *अनीता प्रभाकर* ३५

गुड बाय डार्लिंग/ *लता कादंबरी* ४२

बूढ़ा-बुढ़िया/ *लता कादंबरी* ६५

कविता

ओ राष्ट्र प्रहरी!/ *चंद्रकांत पचौली शास्त्री* १२

ढूँढ़ती हूँ उसका स्पर्श/ *सुनीता जैन* १८

कवि/ *ओम् प्रकाश शर्मा 'प्रकाश'* २२

दुखड़े बदलते रहते हैं/ *जहीर कुरेशी* २७

उनकी कविता/ *अनुरक्ति चतुर्वेदी* ३२

पेड़/ *शरद नारायण खरे* ५८

संदेहों का कल/ *गोपीनाथ कालभोर* ७१

राम झरोखे बैठ के

मुरगे का मुगालता/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४०

ललित-निबंध

कविता और सोच/ *पंकज परिमल* ५२

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

दुआ/ *केशुभाई देसाई* ५६

व्यंग्य

यमपुरी में हड़कंप/ *अर्चना चतुर्वेदी* ६४

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

दंपती/ *फ्रैंज काफ्का* ६६

लोक-साहित्य

बुंदेलखंडी जनजातियाँ व उनके लोकोत्सव/ *एम.डी. मिश्रा 'आनंद'* ६९

यात्रा-संस्मरण

सौराष्ट्र की तीर्थ परिक्रमा/ *प्रेमपाल शर्मा* ७२

बाल-संसार

अम्माँ है पहला स्कूल/ *होड़िल सिंह 'मधुर'* ७८

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७९

वर्ग-पहेली ८०

साहित्यिक गतिविधियाँ ८१

संपादकीय

कुछ अपनी, पनामा पेपर्स का खुलासा, वंदे मातरम् और भारतमाता की जय स्वतंत्रता संग्राम की देन

काफी समय के उपरांत 'साहित्य अमृत' के पाठकों से पुन: संपर्क एवं विचार-विनिमय हो रहा है। यकायक अस्वस्थता और एक लंबे अरसे तक अस्पताल में रहने के कारण संपादकीय के माध्यम से जो विचार-विमर्श होता था, उससे वंचित रहा। धीरे-धीरे स्वास्थ्य में सुधार हो रहा है। अनेक पाठकों ने शीघ्र स्वस्थ होने की शुभकामनाएँ प्रेषित कीं। हम उनके प्रति हृदय से आभार प्रकट करते हैं। संतोष की बात यह है कि हमारे सहयोगी संयुक्त संपादक डॉ. हेमंत कुकरेती ने 'साहित्य अमृत' के पाठकों को किसी प्रकार के अभाव की प्रतीति नहीं होने दी। यद्यपि उसी समय उन्हें अपनी मातृश्री के देहावसान का दु:ख भी झेलना पड़ा। 'साहित्य अमृत' के प्रति अपने दायित्व के प्रति पूरी तरह सजग रहे।

पिछले चार महीनों में देश-विदेश में अनेकों घटनाएँ हुई हैं। उनमें से कुछ चुनी हुई समस्याओं पर संक्षेप में चर्चा करना चाहेंगे। जब हम आज के बाजारीकरण और अंतरराष्ट्रीय विश्व में रह रहे हैं, तो अनेक प्रकार से राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय समस्याएँ एक-दूसरे से जुड़ जाती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ लोगों ने जब हमारे यहाँ तथाकथित असहिष्णुता का मुद्दा उठाया और कुछ लोगों ने अपने-अपने व्यक्तिगत एजेंडे के अनुसार साहित्य अकादेमी तथा अन्य सरकारी पुरस्कार लौटाने का बीड़ा उठाया। उसकी मात्र भनक ही विदेशों में नहीं सुनाई पड़ी, बल्कि बड़ी अतिरंजित टिप्पणियाँ और प्रतिक्रियाएँ भी देखने को मिलीं। पूरे तथ्यों से अवगत न होने के कारण और इलेक्ट्रॉनिक व प्रिंट मीडिया में प्रतिदिन गरमागरम बहसों एवं उत्तेजनापूर्ण आलेखों के द्वारा तरह-तरह की भ्रांतियाँ फैलीं और छोटे-मोटे स्पष्टीकरण इन पर पूरी तरह रोशनी डालने में सफल नहीं हो सके। धीरे-धीरे लोगों की समझ में आने लगा कि आखिर इस अभियान के पीछे क्या मंतव्य था। पर अभी यह अभियान समाप्त नहीं हुआ है। अलग-अलग रूपों में उसकी चेष्टा होती रहती है, क्योंकि वे लोग नरेंद्र मोदी सरकार के अस्तित्व को पचा नहीं पा रहे हैं, कुछ के अपने निहित स्वार्थों पर चोट लगी है, अत: वे बेचैन हैं। तिल का ताड़ बनाने के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं। इसकी चर्चा आगे करेंगे। उसके पहले हम एक व्यक्तिगत चर्चा और करना चाहेंगे।

साहित्य अकादेमी से जुड़ाव

इस वर्ष साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित साहित्य समारोह में हमें आमंत्रित किया गया। यह हमारे लिए आश्चर्य था। हमने कहा भी कि हमें किसी तरह के साहित्यकार होने का भ्रम नहीं है और हम अपने को इस आदर का अधिकारी नहीं मानते हैं। इसमें किसी प्रकार की कृत्रिम नम्रता का दिखावा नहीं है, एक वास्तविकता का एहसास है। हमारे हृदय में साहित्यकारों और रचनाकारों के प्रति सम्मान की उत्कट भावना है। चाहे बड़े हों अथवा छोटे रचनाकार, सभी आदर के पात्र हैं, क्योंकि उनमें कुछ-न-कुछ अपनी एक आंतरिक विशिष्टता है; जनहित के लिए ये रचनाकार अलग-अलग विधाओं में प्रकट होते हैं। इस सम्मान-भावना के पीछे शायद थोड़ा-बहुत पारिवारिक परिवेश भी रहा हो। अपनी अपात्रता का भान होते हुए भी अधिकारियों के आग्रह के कारण आखिरकार निमंत्रण स्वीकार कर लिया। समय-समय पर कुछ आयोजनों में श्रोता और दर्शक के रूप में यदि सूचना मिली और विषय में रुचि हुई तो अकादमी जाना हो जाता है। वैसे साहित्य अकादेमी के प्रकाशनों को प्राप्त करने के लिए प्राय: जाना होता है, जिनकी संख्या और गुणवत्ता दिनोदिन बढ़ती जा रही है। साहित्य अकादेमी के अधिकारीगण इसके लिए बधाई के पात्र हैं। वैसे हम इसलिए भी बधाई देना चाहेंगे कि साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष, जो स्वयं प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं, उन्होंने किस संयम और सूझ-बूझ के साथ एक विवादास्पद स्थिति का मुकाबला किया, जबकि अन्यत्र कहीं घटी कुछ घटनाओं के कारण व्यर्थ में तरह-तरह के आक्रमण उन पर हो रहे थे और एक पूर्व निर्धारित नीति के तहत कराए जा रहे थे, उनका निराकरण साहित्योत्सव में किया। साहित्य अकादेमी के अस्तित्व और उद्देश्यों का शालीनता से संरक्षण किया। अंततोगत्वा अस्वस्थता के कारण दृढता से नहीं जा सका।

अस्पताल में पड़े-पड़े हमें यकायक स्मरण आया कि साहित्य अकादेमी से हमारा भावनात्मक संबंध उसकी स्थापना के समय से है। यह कहने में विचित्र सा लगता है, पर इसे एक संयोग ही कहा जाएगा। अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा में सफल होने के बाद एक प्रशिक्षु की हैसियत से जाना हुआ; चूँकि मेटकाफ हाउस, दिल्ली में, जो अब सुरक्षा

मंत्रालय से संबंधित डी.आर.डी.ओ. के अंतर्गत है और अत्यंत सुरक्षित स्थान घोषित है, विभाजन के उपरांत वहाँ प्रशिक्षण की कामचलाऊ व्यवस्था की गई थी। ७ अगस्त, १९५० को मैं मेटकाफ हाउस के प्रारंभिक प्रशिक्षण में सम्मिलित हुआ था। तब देश के मानचित्र में राजस्थान एक नए राज्य के रूप में उभरा था, हमें भारत सरकार द्वारा वहाँ सेवा के लिए भेजा गया था। छह महीने की ट्रेनिंग के बाद, दो साल के लिए उत्तर प्रदेश में, दो साल के लिए जमीनी यानी प्रैक्टिकल (व्यावहारिक) प्रशिक्षण के लिए भारत सरकार के आदेशानुसार इलाहाबाद और मुरादाबाद जिलों में नियुक्ति हुई। वर्ष १९५३ में सितंबर अथवा अक्तूबर के महीनों में अपने काडर में राजस्थान की राजधानी जयपुर में सबडिवीजनल ऑफिसर के पद पर हमारी नियुक्ति हुई। करीब डेढ़ साल ही इस पद पर बीते थे कि वहाँ सत्तादल कांग्रेस में आंतरिक मतभेदों के समाचार अखबारों में आने लगे। बहुत पुराने राजनेता जयनारायण व्यास मुख्यमंत्री थे। दल में आंतरिक विरोध होने के कारण कांग्रेस हाईकमांड ने दल के नेता के पुन: चुनाव का आदेश दिया और व्यासजी के स्थान पर मोहनलाल सुखाड़िया नए नेता निर्वाचित हुए, जो व्यास मंत्रिमंडल में रेवेन्यू मिनिस्टर थे। इस राजनीतिक परिवर्तन के उपरांत यकायक हमें मुख्यमंत्री के सचिव (प्रशासनिक, निजी सचिव नहीं) के पद पर नियुक्ति के आदेश मिले। हम सकते में आ गए कि हमारे लिए राजस्थान नया और हम राजस्थान के लिए नए हैं। मुश्किल से उ०प्र० में कार्य मेटकाफ हाउस प्रशिक्षण समेत केवल चार साल का ही प्रशासनिक अनुभव था। डरते हुए पद सँभाला।

हमारे पूर्व मुख्यमंत्री व्यासजी के सचिव बड़े अनुभवी निवर्तमान बोर्ड ऑफ रेवन्यू के अध्यक्ष एक मुसलिम वरिष्ठ अधिकारी थे। जब मैं सचिवालय में मुख्यमंत्री के कार्यालय में पहुँचा तो धीरे-धीरे अपने दायित्व के विषय में तथा मुख्यमंत्री कार्यालय की जानकारी प्राप्त करने के लिए कागजात देखने लगा। कुछ महीनों की राजनीतिक उथल-पुथल के कारण मुख्यमंत्री का कार्यालय एक प्रकार से ठप्प पड़ा था। बहुत सी डाक बिना खुली ही पड़ी थी। उन्हीं कागजों में साहित्य अकादेमी की स्थापना संबंधी कुछ पत्राचार भी थे। जहाँ तक स्मरण है, प्रधानमंत्री नेहरू और शिक्षामंत्री मौलाना आजाद के पत्र भी थे। राजनीतिक अनिश्चितता के कारण उन पर कोई काररवाई नहीं हुई थी। सब डाक अस्त-व्यस्त पड़ी थी। इस प्रकार यह एक संयोग ही था कि हमें करीब-करीब अपने सेवाकाल के प्रारंभ में ही अकादेमी के बारे में जानकारी प्राप्त हुई। उस समय साहित्य अकादेमी विषयक प्रकाशित कुछ साहित्य भी मुख्यमंत्री कार्यालय में पड़ा था। इस प्रारंभिक परिचय के उपरांत जब-जब दिल्ली आना हुआ, उत्सुकतावश साहित्य अकादेमी गया। बाद में भी चाहे मैं दिल्ली में किसी पद पर था या दिल्ली के बाहर नियुक्त हुआ, दिल्ली आने पर अवश्य कोशिश करता कि कुछ समय के लिए अकादेमी हो आऊँ, नए प्रकाशनों को भी देख लूँ। इसी कारण साहित्य अकादेमी के विभिन्न स्तर के अधिकारी और कर्मचारी भी पहचानने लगे और सदैव बड़े आदर से स्वागत करते। चाहे साहित्य अकादेमी के कार्यालय में जाऊँ अथवा पुस्तक मेले के स्टॉल पर अथवा वार्षिक पुस्तक मेले के आयोजन में, उनकी सदाशयता के लिए अनुगृहीत हूँ। यह साहित्य अकादेमी से व्यक्तिगत लगाव की कहानी है।

पनामा कागजात का खुलासा

गत वर्ष 'स्विस लीकस' के माध्यम से एक सूची प्रकाशित हुई थी, उसमें शामिल थे करीब एक हजार भारतीयों के नाम, जिनके सीक्रेट एकाउंट या गुप्त खाते एच.एस.बी.सी., जेनेवा में थे। उस खुलासे से कालेधन के संबंध में चर्चा और काररवाई शुरू हुई। इसके पहले मनमोहन सिंह के कार्यकाल के दौरान फ्रांस के जरिए भारतीयों के कुछ गुप्त खातों की जानकारी मिली थी। इसके बाद जर्मनी के माध्यम से भी एक और सूची प्राप्त हुई थी। सर्वोच्च न्यायालय ने एक एस.आई.टी. यानी दो न्यायाधीशों की एक विशेष खोजी टीम नियुक्त की थी, जो कालेधन के मामले में सक्रिय है। सरकार की अन्य एजेंसियों ने भी अपना कार्य करना शुरू कर दिया। इस सबकी मीडिया और संसद् में भी अलग-अलग ढंग से चर्चा हुई। अब एक अंतरराष्ट्रीय कंसर्टोरियम (संघ) खोजी पत्रकारिता को, जिसका एक सदस्य प्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक इंडियन एक्सप्रेस भी है, लाखों दस्तावेजों की छानबीन करके भारतीय नागरिकों के नाम और उनके एकाउंट कहाँ-कहाँ हैं और वे देश जो 'टैक्स हेवेन' के नाम से जाने जाते हैं और जहाँ फर्जी कंपनियों में कभी-कभी बेनामी खाते खोले जाते हैं। इन कंपनियों में, इस प्रकार कालाधन, जो टैक्स बचाकर एकत्र होता है, उसको सफेद धन में परिवर्तित किया जाता है। यह सब काररवाई पनामा की एक फर्म मोजेक फोनेस्का के द्वारा की गई है। ऐसे फर्म और भी हैं। जैसे ही इंडियन एक्सप्रेस ने नामों की पहली सूची प्रकाशित की, देश में खलबली मचना स्वाभाविक था। करीब पाँच सौ भारतीयों के नाम इस सूची में आए हैं। परंतु पनामा पेपर्स के खुलासे का दायरा बहुत बड़ा है।

पनामा लीक का मामला जैसे ही सरकार के संज्ञान में आया कि प्रधानमंत्री के आदेशानुसार मल्टी एजेंसीज यानी बहुएजेंसी टीम गठित की गई, ताकि मामले की जाँच-पड़ताल अधिकृत रूप से हो सके। ये सब एजेंसियाँ ऐसे आर्थिक विषयों की जाँच के लिए ही स्थापित की गई हैं। मल्टी एजेंसी टीम का एक सदस्य रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया, यानी भारतीय केंद्रीय बैंक भी है। इन सब एजेंसियों की अपनी-अपनी विशेष क्षमताएँ या एक्सपर्टाइज हैं। अच्छा ही है कि सब मिलकर इस मामले को देखें तो अधिक विलंब भी नहीं होगा और आपसी बातचीत के द्वारा अपने सुझावों के साथ सच्ची जानकारी सरकार के सामने पेश कर सकते हैं कि आगे क्या काररवाई की जाए। जो नाम आए हैं, वे सभी वर्गों के हैं, बड़े लोग हैं और प्रभावी भी माने जाते हैं। उनका कोई दबाव मल्टीएजेंसी पर नहीं पड़ेगा, ऐसा माना जा सकता है। इन टैक्स हेवेनों में निवेश करनेवाले केवल उद्योगपति या व्यापारी ही नहीं हैं, राजनेता हैं,

अधिकारी हैं, डॉक्टर, वकील, स्पोर्ट्समैन, चार्टर्ड एकाउंटेंट आदि भी हैं। उनमें से बहुत से ऐसे भी हैं, जो ब्रांड एंबेसडर और रोल मॉडल कहे जाते हैं। उन सबकी सत्यता सामने आनी चाहिए।

इंडियन एक्सप्रेस ने नाम छापने के पहले इन व्यक्तियों से अपनी सफाई देने के लिए संपर्क किया। अधिकतर लोगों ने उत्तर दिया कि जो उन्होंने किया है, वह कानून के अनुसार किया है और उसमें कुछ भी अनुचित नहीं है। रिजर्व बैंक की एक स्कीम है, जिसके अनुसार विधिवत् एक सीमा तक कोई भी व्यक्ति धन विदेश में निवेश के लिए ले जा सकता है। इसीलिए रिजर्व बैंक के प्रतिनिधि का मल्टी एजेंसी में रहना अत्यावश्यक है। सवाल यहाँ यह उठता है कि अधिकारियों को सब आवश्यक सूचनाएँ देकर और वैध ढंग से पैसा बाहर भेजा गया है या नहीं? यह कहना सही नहीं है कि सरकार ने मल्टी एजेंसी की नियुक्ति लीपापोती के लिए की है। यह स्मरण रखना है कि अंततोगत्वा सर्वोच्च न्यायालय की आँख कालेधन पर है। उसके द्वारा नियुक्त विशेष एस.आई.टी. है, वह भी इनकी रिपोर्ट का विश्लेषण करेगी। यदि सरकार सर्वोच्च न्यायालय को पनामा पेपर्स भेज भी दे तो भी वह स्वयं तो इन दस्तावेजों की और हजारों मामलों की जाँच नहीं कर सकता। वह भी तो इन सरकारी एजेंसियाँ को यह काम सौंपता है। यदि कोई शक पैदा होता है तो मीडिया तो अत्यंत सक्रिय है ही। सर्वोच्च न्यायालय स्वयं जैसा चाहे आदेश दे सकता है। आशा की जाती है कि शीघ्रता और निष्पक्षता से यह मल्टी एजेंसी अपने इस बड़े दायित्व का निर्वाह करेगी। यह भी समाचार आया है कि मल्टी एजेंसी की स्टेट्स रपट प्रधानमंत्री के पास शीघ्र आनी चाहिए, ऐसे आदेश हुए हैं। पनामा पेपर्स का मामला अत्यंत गंभीर है और बड़ा पेचीदा भी। जो छोटे-छोटे राज्य, जिन्हें टैक्स हेवेन कहा जाता है, जहाँ ये फर्जी कंपनियाँ स्थापित करने का काम होता है और उनके जरिए टैक्स चोरी अथवा अन्य प्रकार के धन का निवेश कर काले धन का शोधन होता है। यह सब काम बड़ी चतुराई से होता है। उस आर्थिक गोरखधंधे को समझना और सुलझाना आसान नहीं है। यह बड़ा समय साध्य है और इसमें तरह-तरह की आर्थिक कुशलता की आवश्यकता है।

वित्तमंत्री ने आश्वासन दिया है कि इस फर्जीवाड़े से संबंधित व्यक्ति आराम की नींद नहीं सो सकेंगे और किसी दोषी को छोड़ा नहीं जाएगा। मोजक फोनक्सा एक बहुत बड़ी एवं शक्तिशाली फर्म है। पनामा लीक में विश्व के अनेक देशों के बड़े-बड़े राजनेताओं के नाम भी हैं। धीरे-धीरे बहुत सी चीजें सामने आएँगी। टैक्स की चोरी का दायरा बहुत बड़ा है। अवैध और गैरकानूनी, जैसे नशीले पदार्थों के व्यापार आदि का पैसा इन फर्जी फर्मों में जमा होता है। एक अर्थशास्त्री जेब्राइल जुमान ने अपनी पुस्तक 'द हिडेन वेल्थ ऑफ नेशन्स : नस्काउर्ज ऑफ टैक्स हेवन्स' में आकलन किया है कि करीब ७५ ट्रिलियन डॉलर इन टैक्स हेवेनों में जमा है। यह वैश्विक अर्थव्यवस्था की बहुत बड़ी विडंबना है। पनामा पेपर्स एक प्रकार से भानुमती का पिटारा है। पता नहीं, उसमें से क्या निकले। वित्त मंत्रालय ने जिनके इन 'ऑफ शोर हॉलडिंस' या खाते हैं, उनको नोटिस दिए हैं। टैक्स सूचना के लिए अब प्रमुख देश आपस में बातचीत कर रहे हैं। भारत इस बातचीत में सक्रिय है। भारत सरकार के लिए भी पनामा पेपर्स एक बड़ी चुनौती है।

बैंकों की एन.पी.एन. तथा राइट ऑफ नीति

पिछले दिनों बैंकों द्वारा दिए गए करोड़ों के कर्ज माफ करने या 'राइट ऑफ' करने की प्रक्रिया पर सर्वोच्च न्यायालय ने रोष प्रकट किया और रिजर्व बैंक को आदेश दिए कि पाँच सौ करोड़ रुपए से ऊपर के जिन पार्टियों के कर्ज माफ किए गए हैं, उनके नाम बताए जाएँ। रिजर्व बैंक ने वह सूची सर्वोच्च न्यायालय को प्रेषित कर दी है, इस अनुरोध के साथ कि कहीं निवेश के वातावरण पर प्रतिकूल असर न पड़े। उनके नाम प्रकाशित न किए जाएँ। रिजर्व बैंक का कहना है कि हर कोई उद्योगपति जान-बूझकर कर्ज वापस नहीं करता है, कभी-कभी बिजनेस के उतार-चढ़ाव के कारण मजबूरी भी हो जाती है। ऐसे कर्जों को बैंक एन.पी.ए. या नॉन पेइंग एसेट्स कहते हैं और बैंक के हिसाब-किताब को साफ दिखाने के लिए वे राइट ऑफ करने का रास्ता अपनाते हैं। एन.पी.ए. का मामला काफी पेचीदा है। यह बहुत बार संसद् के सामने भी आया है। हमने स्वयं राज्यसभा में तत्कालीन वित्त मंत्री डॉ. मनमोहन सिंह से एक बार उन उद्योगपतियों के नाम बताने की माँग की थी, जो कर्ज अदायगी समय पर नहीं कर रहे। ऐसे लोगों को किसी दूसरे बैंक से और कर्ज लेने से वंचित किया जाए। एन.पी.ए. के मामले में बैंक के अधिकारियों और डायरेक्टरों की कोताही के मामले सामने आए हैं। राजनेता इन लोगों को कर्ज दिलाने में अपने प्रभाव का अनुचित इस्तेमाल करते हैं, ऐसी शिकायतें भी आती रहती हैं। विजय माल्या प्रकरण के कारण इस मामले ने और तूल पकड़ लिया, क्योंकि बैंकों को ९००० करोड़ रुपए की देनदारी होने के बावजूद तथा राज्यसभा के सदस्य होते हुए भी माल्या यकायक विदेश चले गए, जबकि बैंकों के कन्सार्टियन अदालत समेत अलग-अलग फोरमों में अपनी गुहार लगा रहे थे और सी.बी.आई. इसकी जाँच कर रही थी।

आश्चर्य इस बात का है कि माल्या की दिखावे और ऐश-आराम की जीवनशैली किसी से छिपी नहीं थी। बैंक उनको कर्ज देते रहे और अकसर नियमों की अवहेलना करते रहे। अब माल्या निदेशालय यानी इनफोर्स डायरेक्टरेट को अपना स्पष्टीकरण देने के लिए भारत आने में आनाकानी कर रहे हैं। फिलहाल माल्या ने बैंकों को ४००० करोड़ रुपए लौटाने की पेशकश की है, पर बैंकों ने लेने से इनकार कर दिया। सर्वोच्च न्यायालय ने माल्या को देश-विदेश में अपनी पत्नी और पुत्र समेत, जो भी उनकी जायदाद आदि है, सबका ब्योरा एक निश्चित तारीख तक देने का आदेश दिया है। प्रवर्तन निदेशालय माल्या के पासपोर्ट को वापस लेने के मूड में है, देखें आगे क्या गुल खिलते हैं। ऐसे मामलों के कारण देश में अविश्वास का वातावरण गहरा होता जाता है, इस

कारण सरकार को इन सब मामलों में अधिक सतर्क रहने की आवश्यकता है। सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार और रिजर्व बैंक को आड़े हाथ लेते हुए कहा कि आश्चर्य है, करोड़ों रुपए के कर्जदार हेरा-फेरी कर निकल जाते हैं और एक किसान पर बैंक कर्जा अदायगी के लिए इतना दबाव डालते हैं कि वह आत्महत्या कर लेता है। न्यायालय ने रिजर्व बैंक के 'वाचडॉग' होने और निगरानी रखने की क्षमता पर प्रश्न उठाए। तमाशा यह है कि राइट ऑफ करने अथवा अपने खाते से निकाल देने में बैंक अलग-अलग प्रणाली अपनाते हैं। यह पता नहीं चलता है कि आखिर बैंक में किसको यह अधिकार प्राप्त है। जनसाधारण में यह भावना बैठती जाती है कि कानून का राज केवल साधारण व्यक्तियों के लिए है, यह प्रकट भी होता है। टी.वी. पर ऐसे मामलों के बारे में गरमागरम बहस के दौरान जनसाधारण न्यायपालिका की इसीलिए दुहाई देता है।

जेएनयू और हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय विवाद

पिछले दिनों जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय और हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय सुर्खियों में रहे। इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया में बहुत गरमागरम बहसें सुनने, देखने और पढ़ने को मिलीं। केंद्रीय विश्वविद्यालय, हैदराबाद का एक रिसर्च स्कॉलर छात्र रोहित वोमुला, जो अनुसूचित जाति का था, उसने आत्महत्या कर ली। यह एक दुखद प्रकरण था। उसने आत्महत्या के बारे में एक पत्र लिखा, उसमें किसी विशेष व्यक्ति को दोषी नहीं ठहराया, किसी को आत्महत्या के लिए जिम्मेदार भी नहीं बतलाया। जातिगत भेदभाव और उसके कारण पैदा हुई परेशानियों का जिक्र किया। उस समय वहाँ जो कुलपति थे, उनको कुछ समय के लिए अवकाश पर भेज दिया गया। प्रशासनिक जाँच भी शुरू हुई और पुलिस ने मुकदमा दर्ज किया। उत्तेजना फैलना स्वाभाविक था। वैसे हर प्रकार का भेदभाव असंवैधानिक है और संपूर्ण समाज को उसके निराकरण के लिए निरंतर प्रयास करना है, किंतु इस घटना का राजनीतीकरण हो गया और संसद् से लेकर सड़क तक इसकी चर्चा हुई। अवकाश से कुलपति के वापस आने पर कुछ विद्यार्थियों और शिक्षकों ने राजनीतिक दलों के सहयोग से आंदोलन को फिर तेज करने की चेष्टा की, पुलिस को हस्तक्षेप करना पड़ा। सामान्य स्थिति बहाल होने में समय लग रहा है।

संसद् पर आक्रमण का एक अभियुक्त अफजल गुरु, जिसे घटना का मास्टर माइंड माना गया, उसे फाँसी दे दी गई थी। सर्वोच्च न्यायालय ने कई बार अफजल गुरु के मामले में विचार कर मौत की सजा बहाल रखी। राष्ट्रपति महोदय ने अफजल गुरु की दया याचिका को अस्वीकार किया। यह सब जब यू.पी.ए. सरकार सत्ता में थी, उस समय की बात है। पूरी तरह संवैधानिक प्रक्रिया के बाद ही संपूर्ण काररवाई हुई थी। पहले भी अफजल गुरु को फाँसी के विरोध में जे.एन.यू. के कुछ छात्र छोटे-मोटे आंदोलन करते रहे, किंतु इस वर्ष एक शोध छात्र उमर खालिद ने कुछ और छात्र नेताओं से मिलकर छात्र संघ के अध्यक्ष कन्हैया कुमार के समर्थन में एक आयोजन किया। स्पष्ट नहीं है कि विश्वविद्यालय की अनुमति आयोजन के लिए ली गई थी या नहीं। विशेष बात यह है कि इस तथाकथित विरोध सभा में अफजल गुरु को कश्मीर की आजादी की माँग से जोड़ा गया। वहाँ जो नारे लगे, वे राष्ट्रविरोधी थे। कुछ नारे इस प्रकार के थे—'जंग जारी रहेगी भारत की बरबादी तक', 'भारत के टुकड़े-टुकड़े होंगे', 'अफजल हम शर्मिंदा हैं, तेरे कातिल जिंदा हैं', 'घर-घर से अफजल निकलेगा' आदि-आदि। समाचार-पत्रों में यह सबकुछ आ चुका है।

विद्यार्थियों के एक गुट ने इसका विरोध किया। पुलिस भी आ गई। कन्हैया कुमार कम्युनिस्ट पार्टी के विद्यार्थी संगठन से संबंधित हैं। पुलिस ने आयोजकों के खिलाफ देशद्रोह का मुकदमा भी दर्ज किया। हो सकता है, पुलिस ने देशद्रोह का मामला दर्ज कराने में जल्दबाजी की हो। कानून की और दफाएँ ही शायद काफी होतीं। बहरहाल, यह मामला अब अदालत के अधीन है। इसके विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है। जो भी घटना जे.एन.यू. में हुई, उसका बहुत जबरदस्त राजनीतीकरण हुआ। कम्युनिस्ट दलों के नेता ही नहीं, कांग्रेस के उपाध्यक्ष राहुल गांधी भी हमदर्दी जताने के लिए इसमें शामिल हुए। हैदराबाद विश्वविद्यालय और जे.एन.यू. दोनों घटनाओं के लिए सरकार को दोष दिया गया और यह कहा गया कि सरकार किसी और प्रकार की विचारधारा को बरदाश्त करने के लिए तैयार नहीं है।

कन्हैया कुमार को तो कुछ लोगों ने देश के एक नए मसीहा के रूप में उछालने की कोशिश की। कन्हैया कुमार को न तथ्यों की सही जानकारी है और न वाणी का संयम है। शशि थरूर जैसे समझदार व्यक्ति ने उसकी तुलना भगतसिंह से कर डाली। हैदराबाद विश्वविद्यालय और जे.एन.यू. की घटनाओं को बार-बार दोहराया जा रहा है और युवाओं, अल्पसंख्यकों तथा दलितों को भड़काने की कोशिश की जा रही है कि मोदी सरकार उनके विरुद्ध है। राजनीतिक दोहन की कोशिश जारी है। कुछ वामपंथी तत्त्व जे.एन.यू. और हैदराबाद विश्वविद्यालय समेत कुछ अन्य शिक्षण संस्थाओं को अपने वश में रखने की कोशिश में शुरू से ही हैं। वहाँ से वे अपना काडर तैयार करने का प्रयत्न करते हैं। अपनी विचारधारा के अतिरिक्त और किसी को तो वे फैकल्टी में आने ही नहीं देना चाहते हैं। शिक्षार्थियों में भी यदि अन्य किसी विचारधारा का है, चाहे कितना भी मेधावी हो, उसे प्रोत्साहित नहीं करते। मीडिया में तथाकथित सेकुलरिस्टों द्वारा देश-विदेश में भ्रम फैलाने के लिए विश्वविद्यालय की स्वायत्तता और अभिव्यक्ति के अधिकार की दुहाई दी जाती है।

सरसरी तौर पर हमने दोनों घटनाओं का जिक्र किया है। उनके विवरण में जाने की आवश्यकता नहीं है। मामले की जाँच-पड़ताल चल रही है। मामला अदालत में विचाराधीन भी है। यह अलग प्रश्न है। चिंता तो केवल यह है कि अलगाववादी और संवैधानिक नारे क्या देश की अखंडता और संप्रभुता पर प्रहार नहीं हैं ? देश को तोड़ने की बात करना किस हद तक सहन करना चाहिए। देश अखंड है, राज्य की सीमाओं में

तब्दीली हो सकती है। संविधान के अंतर्गत यह हुआ भी है। हैदराबाद और मैसूर राज्य थे, वे समाप्त हो गए। उनके स्थान पर आंध्र प्रदेश, तेलंगाना और कर्नाटक राज्य बने हैं। कुछ ही वर्ष हुए, उत्तराखंड, झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश से अलग होकर नए राज्यों के रूप में सामने आए। कश्मीर भी भारत का अभिन्न अंग है, केवल पाकिस्तान या कुछ अन्य अलगाववादी तत्त्वों के कहने या दबाव से ही आजादी की माँग न्यायसंगत नहीं कही जा सकती।

विश्वविद्यालयों में सदैव से विचारधाराओं का टकराव रहा है, युवा हर प्रकार की विचारधारा की जानकारी प्राप्त करते रहे हैं, उन पर मनन करते रहे हैं। बौद्धिक विचार-विमर्श जारी रहे, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है। देश के विभाजन या अन्य प्रकार से अहितकारी हों, क्या इस प्रकार के उत्तेजक और भड़काऊ नारे उचित हैं? यह साधारण अनुशासनहीनता नहीं है। यह मनोवृत्ति देश की एकता के लिए घातक है। इससे केवल देश के दुश्मनों का ही उत्साहवर्धन होता है। देश के नागरिकों के मनोबल गिरने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। सुधी पाठक जानते हैं कि हम पुस्तकों को जलाने, उन पर रोक लगाने आदि के सदैव विरोधी रहे हैं और विचारों की अभिव्यक्ति के समर्थक रहे हैं, पर ऐसे दुष्प्रचार को, ऐसी भावनाएँ उभारने वाले नारों को, जो अराजकता पैदा करते हैं, देशवासियों के मनोबल को क्षीण करें और दुश्मनों को उत्साहित करें, विचार अभिव्यक्ति की श्रेणी में लाना अभिव्यक्ति के अधिकार का उपहास ही प्रतीत होता है। यह संविधान की अवहेलना भी है। एक आश्चर्य यह भी होता है कि जे.एन.यू. और हैदराबाद विश्वविद्यालय के मामलों में मीडिया में शोर मचानेवाले श्रीनगर की नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलोजी में जो हादसा हुआ, इस पर बिल्कुल चुप्पी साधे हुए हैं।

भारतमाता की जय और वंदेमातरम्

'भारतमाता की जय' और 'वंदेमातरम्' के संबंध में भी व्यर्थ विवाद खड़ा किया जाता है। वंदेमातरम् की रचना बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय ने आनंदमठ के तहत की थी। अंग्रेजी शासन था। बंकिम बाबू ने आनंदमठ में संन्यासी विद्रोह के माध्यम से स्वाधीनता का प्रतिपादन परोक्ष रूप से करने का प्रयास किया। वंदेमातरम् को स्वदेशी आंदोलन और बंगाल के क्रांतिकारियों ने अपना मूल मंत्र बना लिया। बहुत से क्रांतिकारी वंदेमातरम् का उच्चारण करते हुए बलिदान हो गए। वंदेमातरम् का एक आरंभिक अंश ही राष्ट्रगीत के रूप में स्वीकार किया गया। बंकिम के वंदेमातरम् पर पहले भी एक समुदाय के कुछ लोगों ने एतराज किया और समय-समय पर करते रहे हैं। वैसे बंकिम का वंदेमातरम् केवल देश की अहिंसा और गरिमा का ही बखान है। वह कोई धार्मिक गीत नहीं है। संविधान निर्मात्री सभा ने रवींद्रनाथ ठाकुर के गान 'जन-गण-मन अधिनायक' को राष्ट्रगान और बंकिमबाबू के 'वंदेमातरम्' को राष्ट्रगीत के रूप में स्वीकृति दी, यद्यपि वंदेमातरम् से बलिदानों की स्मृतियाँ जुड़ी हैं। राजकीय अवसरों पर ऑकेस्ट्रा पर ध्वनि की दृष्टि से रवि बाबू के गीत को अधिक सुविधाजनक माना गया। रवि बाबू की रचना भी विवाद का विषय बन गई थी। उन्होंने अपने जीवनकाल में ही स्पष्ट कर दिया था कि उनकी रचना ब्रिटेन के बादशाह के स्वागत के लिए नहीं लिखी गई थी। रवि बाबू ने कांग्रेस के कलकत्ता सेशन में स्वयं इसको गाया था। इस विषय में भी विवाद समाप्त होना चाहिए और दोनों रचनाएँ हमारे लिए समान रूप से सम्मान की अधिकारी हैं, यह भी तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने स्पष्ट किया था।

'भारतमाता की जय' और 'वंदेमातरम्' दोनों हमारे स्वतंत्रता संग्राम की अमर धरोहर हैं। १५ अगस्त, १९४७ के पहले यही नारा जनबैठकों और जुलूसों में लगाया जाता था। 'भारतमाता की जय' और 'वंदेमातरम्' न तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने ईजाद किया और न गढ़ा। वह देन है, आजादी की लड़ाई की और उसी रूप में हमें देखना चाहिए। भारतमाता के चित्र की कल्पना सर्वप्रथम एक पारंपरिक भारतीय महिला के रूप में प्रसिद्ध चित्रकार अवनींद्रनाथ टैगोर ने की थी। समय-समय पर अन्य चित्रकारों ने भी अपनी कल्पनाशक्ति और सोच के आधार पर भारतमाता के चित्र बनाए। अकसर अंग्रेजी राज में भारतमाता के चित्र बंदिनी, हथकड़ी-बेड़ी में जकड़ी माँ के रूप में पत्रिकाओं में प्रकाशित होते थे। भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव के बलिदान के बाद असहाय भारतमाता को बिलखते दिखाते हुए चित्र प्रकाशित हुए थे। कुछ चित्रकारों ने भारतमाता की कल्पना एक 'शक्तिशाली' और 'सर्वरक्षणी माँ' के रूप में की और उनका वाहन सिंह चित्रित किया। अपनी भावनाओं के अनुसार चित्रकारों ने अमूर्त भारतमाता को अपनी कल्पना के आधार पर चित्रित किया। प्रख्यात तमिल क्रांतिकारी कवि सुब्रमण्यम भारती ने उन्हें पराशक्ति के रूप में देखा। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने भारतमाता के चित्र को एक आक्रामकता प्रदान की। यह कहना भी सही नहीं है। सिंह वाहिनी भारतमाता का चित्र बहुत पहले से प्रचलित रहा है। यह अलग बात है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने सिंह वाहिनी माँ वाला रूप अपनाया। भारतमाता के विभिन्न प्रकार के चित्रों की कहानी लंबी है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मोहन भागवत के एक बयान कि 'भारतमाता की जय' सबको कहनी चाहिए, पर कुछ लोगों ने बवाल मचा दिया। यद्यपि उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि हर एक के लिए यह अनिवार्य नहीं है, पर यह राष्ट्रीयता और देशभक्ति की परिचायक है। अत: भारतीयों की प्रतिबद्धता होना वांछनीय है। ऑल इंडिया मजलिसे इत्ते मुसलिम हादुल के अध्यक्ष ओवैसी ने एक चुनौती देते हुए कहा कि हमारे गले पर चाकू भी कोई रख दे तब भी 'भारतमाता की जय' नहीं कहेंगे। यह वही हैदराबादी रजाकारों की संस्था है, जिसका सरगना रिजवी जब पाकिस्तान भाग गया तो संस्था का दायित्व ओवैसी के पितामह ने ले लिया। ऑल इंडिया शब्द बाद में जोड़ा गया। ओवैसी ने अपने पिता के बाद पार्टी का दायित्व सँभाला और उसको न केवल अधिक आक्रामक बनाने की चेष्टा में है बल्कि उसको अन्य राज्यों में

फैलाने की कोशिश कर रहे हैं। महाराष्ट्र विधान सभा चुनाव में उसकी पार्टी को चुनावों में सफलता मिली, किंतु बिहार चुनाव में असफल रही। उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों में भी पैर फैलाने की कोशिश जारी है। इससे सांप्रदायिक तनाव बढ़ने की आशंका है। ओवैसी को कड़ा उत्तर तो प्रसिद्ध शायर जावेद अख्तर ने राज्यसभा में अपने कार्यकाल के समाप्त होने पर दिया। 'वंदेमातरम्' का नारा भी लगाया और कहा कि 'मादरे वतन की जय' बोलने में कोई परहेज नहीं होना चाहिए।

डॉ. फारुख अब्दुल्ला ने भी टी.वी. पर कहा कि जोर-जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए, वैसे 'भारतमाता की जय' कहने में कोई एतराज नहीं होना चाहिए। वही हमें पालती-पोसती है। अन्य उदार मुसलमानों ने भी यही भावना व्यक्त की, किंतु दारूल उलूम देवबंद ने 'भारतमाता की जय' बोलने से मना करते हुए फतवा जारी कर दिया कि ऑल इंडिया मुसलिम लॉ बोर्ड तथा एक-दो अन्य मुसलिम संस्थाओं जैसे जमायते इसलामी ने उसका समर्थन किया। लखनऊ में जो एक अन्य इसलामी तालीम का केंद्र है, उसने कहा कि हर मामले में फतवा जरूरी नहीं है। ऐसे मामले में फतवा देने से समुदायों में मनमुटाव और आपसी तनाव पैदा होता है। वैसे कांग्रेस के प्रवक्ता और दिग्विजय सिंह ने कहा है कि 'भारतमाता की जय' से किसी को कोई एतराज नहीं होना चाहिए। महाराष्ट्र में ओवैसी की पार्टी के सदस्य वारिस पठान को सेशन के बीच निष्कासित करने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ। कांग्रेस और शरद पवार की राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्यों का पूर्ण समर्थन प्राप्त हुआ। बाद में कुछ लोगों ने प्रस्ताव की वैधता पर प्रश्नचिह्न उठाए हैं। इस मामले में कांग्रेस का क्या रुख है, अधिकृत रूप से यह स्पष्ट नहीं हो सका है। वैसे प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में जिक्र किया है कि जहाँ वह चुनावों के दौरान सभाओं में जाते थे तो लोग 'भारतमाता की जय' के नारे लगाते थे। अतएव, उन्होंने जनता से पूछा कि 'भारतमाता' से वे क्या समझते हैं। उनका उत्तर था— भारत देश और वहाँ की धरती पर ही उनका जीवन आधारित है। पंडित नेहरू ने कहा—उसमें वे सब लोग भी शामिल हैं, केवल भूमि ही नहीं और 'भारतमाता की जय' का मतलब हम सब से भी है। सभी की जय हो। श्रीअरविंद ने भी अपने राजनीतिक कार्यकाल में इसी प्रकार की व्याख्या की थी। भारत की अवधारणा केवल भौगोलिक ही नहीं है, वह एक प्रकार से समावेशी धारणा है। मणिशंकर अय्यर, जिनका राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रति रुख जग-जाहिर है, कहते हैं—यदि यही भारतमाता के माने हैं, तो वह भी भारतमाता कहने को तैयार हैं। आखिरकार भारतमाता का और क्या तात्पर्य हो सकता है। उसमें किसी प्रकार की सांप्रदायिकता को जोड़ना बेमानी है। फिर भी देशभक्ति की क्या परिभाषा है और क्या 'भारतमाता की जय' या 'वंदेमातरम्' जैसे नारे ही देशप्रेम की पहचान हैं। इसमें भी सियासत और राजनीति का खेल शुरू हो गया है, इससे बचना चाहिए। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन को लोग भूल जाते हैं। जब वंदेमातरम् और भारतमाता के नारों पर बंगाल की तत्कालीन सरकार ने रोक लगाई थी, वारीलाल में बंगाल प्रॉविंशियल कॉन्फ्रेंस को भी बैन किया तो मौलाना मु. रसूल की नुमाइंदगी में उसके आयोजन की कोशिश की गई। पुलिस ने लाठी चार्ज किया। उसमें सुरेंद्रनाथ बनर्जी और अरविंद घोष आदि नेता सम्मिलित हुए तथा लाठियों की चोट खाई। पुलिस ने नारे लगाते हुए जुलूस को तितर-बितर करने की कोशिश की। 'भारतमाता की जय' और 'वंदेमातरम्' तो स्वतंत्रता संग्राम की देन हैं।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का कहना है कि संविधान उनके लिए सर्वोपरि है, फिर भी व्यर्थ में ऐसे राजनीतिक कारणों से विवाद पैदा किया जाता है। एक पहलू जरूर है, जिस पर ध्यान देना आवश्यक है। बहुत से लोग, जो अपने को राजग का समर्थक कहते हैं या भाजपा के सदस्य और मंत्री हैं या अन्य पदों पर हैं, वे भी अकसर अनापशनाप बोल जाते हैं, जिससे भ्रांति फैलती है। बाबा रामदेव का बयान इसका एक उदाहरण है। किसी प्रकार की हिंसा की चर्चा करना सर्वथा अनुचित है। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री फड़नवीस ने भी एक सभा में कह दिया कि जो 'भारतमाता की जय' कहने से इनकार करते हैं, उनके लिए भारत में कोई जगह नहीं। बाद में स्पष्टीकरण देते हैं कि उनका यह मतलब नहीं था। वे संवैधानिक पद पर हैं और उनको अपनी वाणी को संतुलित रखना चाहिए, सोच-समझकर बोलना चाहिए। भारत बहुलतावादी देश है, यहाँ तरह-तरह के धर्मों, भाषाओं और विचारधाराओं के लोग हैं, सभी को संविधान ने समान अधिकार दिए हैं। वैचारिक विभिन्नता हो सकती है। राष्ट्रीयता और देशभक्ति को किसी सीमा में नहीं बाँधा जा सकता है। जो बातें गलतफहमी फैलाती हैं, संकीर्णता की परिचायक हैं, वे ही प्रधानमंत्री के 'सबका साथ, सबका विकास' के एजेंडे के संबंध में जाने-अनजाने रोड़ा अटकाती हैं। इतना ही नहीं, इन बातों से देश-विदेश में भारत की छवि धूमिल होती है। अत: अतिवादी प्रतिक्रियाओं से बचना आवश्यक है। यह जरूरी नहीं है कि किसी ने कुछ कहा तो हमें उसपर तीखी प्रतिक्रिया देनी है, बहुत सी बातों की अनदेखी करना भी बुद्धिमानी है। टी.वी. पर दिखाए और समाचार-पत्रों में पढ़ने के लोभ के कारण लोग बहक जाते हैं। बड़बोलों पर कुछ अंकुश लगना ही चाहिए। शब्दों के क्या माने निकाले जा सकते हैं, इस पर बिना ध्यान दिए, भावनाओं में बहकर कुछ कह देना हानिकर ही होता है। सार्वजनिक जीवन में समझ-बूझकर, शब्दों की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए ही कुछ कहना हितकर होता है। अपनी प्रतिबद्धताओं को किसी पर थोपने की आवश्यकता नहीं है। राष्ट्रभक्ति और देशभक्ति के आधार-स्वरूप ही संविधान का निर्माण हुआ। राष्ट्रनिर्माण और राष्ट्रीय सौहार्द के लिए उत्तम यही है कि हम यही प्रार्थना करें कि सबको सुमति दें भगवान्!

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

बीवी की छुट्टियाँ

● **आर.के. नारायण**

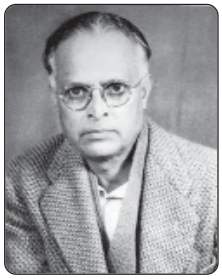

आर.के. नारायण का पूरा नाम रासीपुरम कृष्णस्वामी अय्यर नारायण स्वामी था। उनका जन्म १० अक्तूबर, १९०६ को हुआ। वे अंग्रेजी साहित्य के सबसे महान् उपन्यासकारों में गिने जाते हैं। उन्होंने दक्षिण भारत के काल्पनिक शहर 'मालगुडी' को आधार बनाकर अपनी रचनाएँ कीं। आर.के. नारायण मैसूर के यादव गिरी में करीब दो दशक तक रहे। कहते हैं कि मैसूर स्थित घर में ही आर.के. नारायण ने 'बेरूप' उपन्यास लिखा था। पच्चीस से अधिक उपन्यास व कहानी-संग्रह अंग्रेजी में प्रकाशित, तत्पश्चात् अनेक भारतीय व विदेशी भाषाओं में प्रकाशित होकर बहुप्रशंसित हुए। नारायणजी की पुण्य तिथि (१३ मई) पर उनकी एक चर्चित कहानी यहाँ दे रहे हैं।

कन्नन अपनी झोंपड़ी के दरवाजे पर बैठा गाँव के लोगों की आवाजाही देख रहा था। तभी तेल बेचनेवाला सामी अपने बैलों को हाँकते हुए आया और वहाँ से गुजरते हुए कहने लगा, ''आज तुम्हारे लिए फुरसत का दिन है, है न? तो फिर दोपहर को तुम मंटपम में क्यों नहीं आ जाते?''

इसके बाद और भी कुछ लोग वहाँ से गुजरे, लेकिन कन्नन ने शायद ही किसी की तरफ ध्यान दिया हो। तेल बेचनेवाले के शब्दों से वह सपनों में खो गया था। मंटपम खंभों पर खड़ा हुआ एक पुराना ढाँचा था, जिसमें जगह-जगह दरारें पड़ गई थीं और जिसकी चिनाई झड़-झड़कर तालाब में गिरती रहती थी। कन्नन और उसके दोस्तों के लिए वह जगह क्लब हाउस की तरह थी। वे सब अकसर दोपहर में वहाँ जुटते और पूरे जोशो-खरोश के साथ पाँसे खेला करते थे। कन्नन को वह जगह तो पसंद थी ही, वहाँ की मिट्टी की गंध भी खासतौर पर उसे अच्छी लगती थी। मंटपम की बड़ी-बड़ी दरारों से झाँकते आसमान और दूर दिखती पहाड़ियों का नजारा उसे खूब आकर्षित करता था। यह सब सोचते ही वह मन-ही-मन कोई धुन गुनगुनाने लगा।

वह जानता था कि अकसर दरवाजे पर बैठे देख लोग उसे आलसी कहते थे। लेकिन उसे इसकी फिक्र नहीं थी। उसे काम पर नहीं जाना था, क्योंकि जाने के लिए कहनेवाला घर में कोई था ही नहीं। बीवी अब भी बाहर थी। बीवी को बैलगाड़ी में बिठाकर उसने जब कुछ दिनों के लिए मायके भेजा तो बड़ा खुश हुआ था। उसे उम्मीद थी कि उसके माँ-बाप उसको अभी कम-से-कम दस दिन और रोकेंगे। हालाँकि इसका मतलब यह भी था कि उसे अपने छोटे से बच्चे से भी इतने दिन के लिए दूर रहना पड़ेगा। लेकिन उसने मान लिया था कि बीवी को खुद से दूर भेजने के लिए इतनी कीमत तो चुकानी ही पड़ेगी। उसने मन-ही-मन सवाल किया, ''वह अगर यहाँ होती तो क्या मुझे इस तरह आराम करने देती?'' वैसे, उसे नारियल के पेड़ों पर चढ़ना पड़ता था। उस पर मँडराते कीड़े-मकोड़े हटाकर नारियल तोड़ने होते थे। इन पेड़ों के लालची मालिकों से मोल-भाव भी करना पड़ता था, तब कहीं जाकर दिन भर में एक रुपए की कमाई हो पाती थी।

बहरहाल, अभी वह बीवी के न होने का मजा ले रहा था। पूरे दिन घर में ही पड़ा रहता था। हालाँकि इससे एक दिक्कत यह हो गई थी कि अब उसके पास रोज के खर्च के लिए चवन्नी भी नहीं बची थी और आज जब तक वह पेड़ पर नहीं चढ़ता, पैसा मिलेगा भी नहीं। उसने एक अँगड़ाई ली और सोचने लगा कि अगर अभी वह पेड़ पर चढ़ा तो कैसा लगेगा। बेशक, घर के पिछवाड़े में मौजूद दस पेड़ निगाह डालने लायक हो चुके थे। यानी काम उसका इंतजार ही कर रहा था, बस वहाँ जाने की देर थी। लेकिन जाता कैसे? इतने दिनों से निठल्ले बैठे-बैठे हाथ-पाँव अकड़ से गए थे। काम पर जाने को तैयार ही नहीं थे, बल्कि वे तो मंटपम जाने की तैयारी में थे। लेकिन वहाँ भी खाली हाथ जाने का क्या मतलब? अगर उसके पास चार आने भी होते तो शायद वह शाम तक मंटपम से एक रुपए लेकर लौट सकता था। लेकिन यह औरत न! बीवी का खयाल आते ही उसका मूड उखड़ गया। कभी नहीं समझ सकी कि उसके हाथ में भी कम-से-कम एक आना होना चाहिए। कम-से-कम इतना हक तो उसे है। चार आने पर भी अपना हक जताए बिना वह सालोसाल से हाड़तोड़ मेहनत किए जा रहा था।'''अब तो उसने इस बारे में सोचना ही बंद कर दिया था, क्योंकि इसके बारे में सोचते ही वह जोड़-घटाव, गुणा-भाग के जटिल काम में उलझ जाता और हाथ कुछ नहीं आता था। हाँ, चौपड़ पर पाँसे खेलते वक्त उसके लिए यही सब एकदम आसान होता था।

तभी एक आइडिया उसके दिमाग में कौंधा और वह दरवाजे से उठकर घर के भीतर की ओर लपका। कोने में एक बड़ा संदूक रखा हुआ था। सालों पहले इस पर काला रंग पोता गया था। घर की सभी चीजों में इस संदूक की अहमियत सबसे ज्यादा थी। पत्नी का था, जिस पर पुराने जमाने का बड़ा सा ताला लटक रहा था। वह उसके सामने जा बैठा और ताले पर निगाह जमा दी। उम्मीद नहीं थी, फिर भी एक कोशिश की। ताले को जोर की ठोकर मारी, और उसके अचरज की सीमा न रही, जब एक ही ठोकर से ताला खुल गया।

''भगवान् ने आज मुझ पर बड़ी दया की है।'' उसने खुद से कहा और संदूक का ढक्कन खोल दिया। उसमें रखी पत्नी की चीजों को देखने लगा। कुछ ब्लाउज थे और दो-तीन साड़ियाँ। एक तो उसने उसे शादी के वक्त खुद ही उपहार में दी थी। यह देख उसे अचरज हुआ कि वह साड़ी उसने अब तक सँभालकर रखी हुई है, जबकि यह···यह···वह फिर आँकड़ों में उलझ गया था। शायद कीमत याद कर रहा था। याद नहीं आई तो दूसरी वजह सोच ली, ''मेरे खयाल से वह बड़ी लोभी है, इसलिए इसे सँभालकर रखा होगा!'' और सोचकर हँस दिया। वह बीवी के बारे में इस बदनतीजे पर पहुँचकर खुश था। पर अभी उसे लकड़ी के छोटे से बक्से को ढूँढ़ना था, जिसमें उसकी बीवी नकदी रखती थी। उसने सभी कपड़े किनारे रख दिए और उसे तलाशने लगा। वह मिला तो जरूर, लेकिन खाली। बस, खुशकिस्मत के लिए ताँबे का टुकड़ा पड़ा हुआ था। ''आखिर पूरी नकदी कहाँ गई?'' उसने गुस्से में सवाल किया। वह सोच रहा था, 'यकीनन वह एक-एक आना भाई या किसी और के लिए अपने साथ ले गई है। तो क्या मैं यहाँ गुलामों की तरह मेहनत करके उसके भाई के लिए एक-एक आना जमा कर रहा हूँ?···अगली बार मैं देखता हूँ उसके भाई को, गरदन न मरोड़ दी तो देखना।' उसने इतना कहकर खुद को दिलासा दी।

आगे कुछ और सोच ही रहा था कि उसकी नजर सिगरेट के लाल रंग के टीन के डिब्बे पर पड़ गई। उसे हिलाकर देखा। अंदर सिक्के बज रहे थे। उस डिब्बे को देखते ही वह स्नेह से भर गया। यह डिब्बा उसके बेटे का था। एक दिन वह इसे पर्यटक बँगले के पीछेवाले कचरे के ढेर से उठा लाया था। इसे सीने से चिपकाकर दौड़ा-दौड़ा आया था। इसके बाद तो वह पूरा-पूरा दिन गली में इसी डिब्बे से खेलता रहता। कभी इसमें धूल-मिट्टी भरता तो कभी खाली करता। यह देख एक दिन कन्नन से उसे सुझाव दिया कि वह इस डिब्बे को पैसे जमा करने के काम में ले सकता है। बच्चे ने पहले तो इसका जोरदार विरोध किया, लेकिन जब कन्नन ने उसे प्यार से समझाया तो खुशी-खुशी राजी हो गया। बल्कि इसके बाद तो उसने योजनाएँ बनानी शुरू कर दीं। कहने लगा, 'जब इसमें खूब पैसे जमा हो जाएँगे तो उस बड़े मकानवाले लड़के की तरह मैं भी मोटरकार खरीदूँगा। एक हरी पेंसिल और मुँह से बजानेवाला हारमोनियम भी।' बच्चे की योजनाएँ सुनकर कन्नन ठहाका मारकर हँस पड़ा था। वह डिब्बे को लोहार के पास ले गया। डिब्बे के मुँह पर ढक्कन लगवाया और उसमें सिक्के डालने के लिए एक छोटा सा कट लगवा दिया। इसके बाद तो यह डिब्बा ही उस छोटे से बच्चे का खजाना हो गया था। वह जब-तब इसे पिता के सामने कर देता, ताकि वह इसमें सिक्का डालें। फिर बीच-बीच में कभी-कभार उत्सुकता से पूछ भी बैठता, 'पिताजी, क्या यह भर गया है? मैं इसे कब खोल सकता हूँ।' वह हमेशा यह डिब्बा माँ के संदूक में साड़ियों के बीच सँभालकर रखता और तब तक नहीं सोता था, जब तक यह न देख ले कि संदूक का ताला ठीक से बंद हुआ है या नहीं। उसे देख कन्नन अकसर कहा करता था, 'देखो, कितनी सावधानी बरतनेवाला बच्चा है। जरूर आगे चलकर कुछ बड़ा करेगा। इसे हम शहर के स्कूल जरूर भेजेंगे।'

लेकिन अभी तो कन्नन उस डिब्बे को हिलाकर देख रहा था। वह उसे कुछ उजाले में ले गया। सिक्के डालनेवाले कट से अंदर देखकर अंदाज करने की कोशिश की कि आखिर इसमें कितने पैसे होंगे। कुछ अनमना सा भी हुआ, यह सोचकर कि बीवी को उसके इस घटिया खयाल के बारे में पता चल गया तो वह उसका शिकार ही कर डालेगी। लेकिन उसने अगले ही पल इस खयाल को दिमाग से झटक दिया। डिब्बे को उल्टा कर जोर-जोर से झटके देने लगा। इतनी तेज कि आवाज सुनकर कोई बहरा ही हो जाए। लेकिन एक भी सिक्का बाहर नहीं गिरा। लोहार ने बहुत जबरदस्त काम किया था। ढक्कन पर जो कट लगाया था, वह बिल्कुल उतना ही चौड़ा था, जितनी सिक्के की मोटाई होती है। इससे सिक्का अंदर तो डाला जा सकता था, लेकिन दुनिया की कोई ताकत एक भी सिक्के को बाहर नहीं निकाल सकती थी। परेशान हो गया तो कन्नन कुछ देर के लिए रुका।

अपने आप से सवाल किया, 'क्या मैं अपने बच्चे के पैसे निकालकर सही कर रहा हूँ? क्यों नहीं?' भीतर से किसी दूसरी आवाज ने उसे भरमाया, 'पिता और बेटा एक ही तो हैं। और फिर, तुम ये पैसे दो-तीन गुना करने के लिए ले जा रहे हो। जैसे ही ये बढ़ जाएँगे, इन्हें वापस लाकर फिर इसी डिब्बे में रख दोगे। इस तरह तो तुम इस डिब्बे को खोलकर अपने बेटे का फायदा ही करनेवाले हो।' इस विचार ने उसे राहत दी थी। अब वह किसी ऐसी चीज की तलाश में लग गया जिससे डिब्बे का सिक्के डालनेवाला कट चौड़ा किया जा सके। कबाड़ पड़े सामान में काफी-कुछ तलाशा। तार, बोतल की कॉर्क, बैल के पैर की बेकार नाल—और भी न जाने क्या-क्या। लेकिन नुकीली धारवाला एक भी औजार नहीं मिला। 'उस चाकू का क्या हुआ?' वह एक बार फिर बीवी के बारे में सोचकर झुँझलाया, 'औरत की आदत ही है हर चीज छिपाकर रखने की। या क्या पता, वह उसे भी अपने साथ ले गई हो, भाई के लिए।' थक-हारकर उसने बॉक्स को फर्श पर पटकना शुरू कर दिया। लेकिन इससे उस डिब्बे की शक्लो-सूरत ही बिगड़ी, सिक्के बाहर नहीं निकले। उसने घर के चारों तरफ नजर दौड़ाई।

दीवार पर गड़ी कील में भगवान् की तसवीर लटकी हुई थी। उसने लपककर वह तसवीर उतारी और नीचे रख दी। इसके बाद कील उखाड़ ली। इसी बीच, भगवान् की तसवीर पर नजर पड़ी तो कुछ असहज हो गया। आँखें उनके पैरों की ओर झुका लीं और फिर अपने काम में लग

गया। पत्थर का एक टुकड़ा ले आया और डिब्बे के मुँह पर कील रखकर दूसरे हाथ से उससे ठोकर मारने लगा। लेकिन कील फिसल गई और पत्थर उसके अँगूठे पर जा लगा। नीला पड़ गया। दर्द से कराह उठा। गुस्सा भी आया और डिब्बे को दूर फेंक दिया। फिर कोने में पड़े उस डिब्बे की तरफ देखकर घृणा से कहा, ''कुत्ते कहीं के!''

कुछ देर वह अपना अँगूठा सहलाते हुए बैठा रहा, फिर उस टीन के लाल डिब्बे की तरफ देखकर बोला, ''अब मैं देखता हूँ तुझे।'' वह रसोई में गया और दोनों हाथों से पत्थर की सिल उठा लाया। उसे उसने ऊँचा उठाया और डिब्बे पर दे मारा। यह चोट काफी थी। डिब्बा चपटा होकर इधर-उधर से फट भी गया था। यह देखते ही कन्नन भूखे की तरह उस पर झपट पड़ा। अंगुलियाँ डालकर सिक्के निकाले और उन्हें गिनने लगा। छह आना और तीन पैसे थे। उसने उन्हें उठाकर कमर में धोती के छोर से बाँधा, घर में ताला लगाया और बाहर चला गया।

मंटपम पर आज किस्मत उसका साथ नहीं दे रही थी। साथ क्या, आस-पास भी नहीं फटकी थी। थोड़े ही समय में वह पूरे पैसे हार गया। लेकिन मन नहीं माना तो उधार लेकर खेलने लगा। वह पैसे भी हार गया। तभी किसी ने सुझाव दिया, ''अब उठ जा, किसी दूसरे मालदार आसामी को खेलने दे।''

अनमने ढंग से कन्नन उठा और घर की ओर चल दिया। दिन का सूरज अब भी तप रहा था।

जैसे ही वह अपनी गली में पहुँचा, उसने देखा, बीवी सामने से चली आ रही है। उसके एक हाथ में गठरी है तो दूसरे से बच्चे को पकड़ रखा है। कन्नन जहाँ था, वहीं जड़ हो गया।

''क्या मैं कोई सपना देख रहा हूँ?'' वह बुदबुदाया।

तभी बीवी उसके एकदम पास आ पहुँची। बोली, ''एक बस इस तरफ आ रही थी। मैं भी उससे घर लौट आई।'' इतना कहकर वह घर के दरवाजे की तरफ चल पड़ी। पीछे-पीछे कन्नन। उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। घर में संदूक खुला पड़ा था। उसका सामान यहाँ-वहाँ बिखरा था। चपटा-टूटा लाल डिब्बा और भगवान् की तसवीर जमीन पर पड़ी थी। जैसे ही वह अंदर जाएगी, वह सब नजर आ जाएगा। यह सब सोच रहा कन्नन बिल्कुल नाउम्मीद हो रहा था। उसने आगे बढ़कर किसी मशीन की तरह दरवाजा खोला।

''तुम इतने परेशान क्यों दिख रहे हो?'' अंदर घुसते हुए उसकी बीवी ने पूछा। उसका बेटा हाथ में कुछ सिक्के लिये हुए था। उसने बताया, ''ये पैसे मामा ने दिए हैं। इन्हें बॉक्स में रख दीजिए।'' इतना कहते हुए उसने जैसे ही हाथ थामा, दर्द के मारे कन्नन की चीख निकल गई। ''अरे, ये आपने क्या कर लिया, पिताजी?'' बच्चे ने पूछा।

''कुछ नहीं। मेरे हाथ से ही पत्थर से अँगूठा दब गया।'' इतना कहकर वह माँ और बेटे के पीछे घर के अंदर घुस गया—आनेवाले तूफान का सामना करने की तैयारी करते हुए।

कविता

ओ राष्ट्र प्रहरी!

● **चंद्रकांत पचौली शास्त्री**

ओ! शाश्वत, शांत प्रहरी,
तेरे दर्शन को विकल यह हिंद-सिंधु लहरी,
यह धवलता या स्निग्ध हास,
या शिवा (पार्वती) का लास्याभास।
तुम निष्काम भाव तटस्थ स्वधर्म निभाते हो,
अपने अंतस्थल में अनंत अक्षय कोश छिपाते हो।
क्या तुमने नियंता के वशीभूत,
जड़ता का आवरण ओढ़ा है?
नहीं तुम जागरूक चैतन्य हो
चेतनता को 'भू' पर मोड़ा है।
तुम्हें पुकारे हिमवान कि हिंदुस्थान की पहचान,
नहीं तुम भारत-भू की अलौकिक शान।
राष्ट्र प्रहरी!
उज्ज्वल, किरीट धरा के मेरुदंड,
या शिव का प्रत्यंचा रहित को दंड।
भव्य भारत भू का अभिधान,

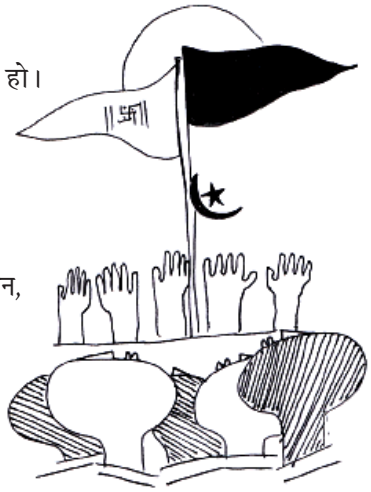

अस्मिता देश की तुझमें, तू ही अडिग स्वाभिमान।
कवि कालीदास के मानदंड,
अरि-दल के लिए भीम प्रचंड।
मेरु, सुमेरु कंचनजंघा,
आ-गांधार सीमा कामरूप औ बंगा,
तेरी क्रोड में जपी-तपी रहते निर्भय,
तू ही देता भारत को अहर्निश अभय।
तेरी स्तुति का संबल है उसको,
भारतात्मा की पहचान है जिसको।
जय जय जय देवों के आश्रय स्थल,
जय सीमा रक्षकों के आत्मिक बल!
जय भारत, जय देवालय,
जय आस्था-मूर्ति जय हिमालय!!

निवास, राधाकृष्ण विहार मुखानी
हल्द्वानी, जिला-चंपावत (उत्तराखंड)
दूरभाष : ०९६३९६३६५१६

फैसला

● नताशा अरोड़ा

पंखे की तेज हवा में दमयंती के हाथ का पत्र फड़फड़ा रहा था और वे थीं कि न जाने किन विचारों में खाई हुई थीं। डॉली ने चाय का कप साइड टेबल पर रखा, लेकिन उन्हें पता ही न चला। डॉली धीरे से बोली, ''मम्मीजी, चाय!''

कहीं दूर देश की वैचारिक यात्रा से वर्तमान में लौटते हुए दमयंती बोली। ''हाँ, हाँ, मैं पी लूँगी, अब तू जा।'' लेकिन डॉली वहीं कालीन पर बैठ गई और उनका घुटना सहलाती बोली, ''फिर सात समुंदर पार पहुँच गईं न? अरे मम्मीजी, अब इतना भी खुद को परेशान न करिए। ऐसे तो आप बीमार पड़ जाएँगी। डॉक्टर साहब ने क्या कहा था, भूल गईं, 'दमयंती जी, ज्यादा सोचा मत करिए, वरना दिल का यह दौरा जो आप झेल गई हैं, आगे झेलना मुश्किल होगा।' जानती हैं मम्मीजी, हमारी दादी यों तो अनपढ़ हैं, पर बातें बड़ी गियान की करती हैं, कहती हैं, रहिमन कठिन···अरे जाने क्या सुनाती हैं, वो क्या हाँ, चिता दहति निर्जीव को चिंता···अब हमें ठीक से याद नहीं, पर मतलब याद है कि चिता हमें मरने के बाद जलाती है, पर चिंता तो जीते जी जला डालती है। अब छोड़िए यह सोचना-विचारना, बस गरम चाय पीकर अपना कागज-कलम लेकर लिखने बैठ जाइए। आज हमने···

डॉली की बात तो एक बार शुरू हो जाए तो रुकने का नाम ही नहीं लेती। उसकी ज्ञान भरी बात पर दमयंती के चहरे पर मुसकान दौड़ गई। वैसे कभी-कभी खीझ भी जाती है, लेकिन इतनी प्यारी लड़की, वह भी आज के जमाने में मिलना क्या किसी चमत्कार से कम है। आज की सेविकाओं के नाम भी कैसे मॉडर्न हो गए हैं, और क्यों न हों, सिनेमा, टी.वी. कैसे-कैसे बदलाव ला देते हैं। अपने विचारों को बहकने से रोककर दमयंती ने चाय का कप उठा लिया और सोचने लगी कि आज उन्हें अपनी रचना हर हाल में पूरी करके भेजनी है। विशेषांक के लिए विभिन्न लेखकों के विचार माँगे गए हैं। उनके विचार बार-बार छिटके जा रहे हैं, कलम उठाती है और न जाने कहाँ खो जाती है—विषय भी तो ऐसा है कि उनकी दुखती रग छेड़ देता है—'वृद्धावस्था'।

उस दिन कितना प्रसन्न थे राघव, जब बेटे प्रतीक ने इंजीनियरिंग की डिग्री पाई थी। उसे स्टडीज के लिए अमरीका जाने का स्कॉलरशिप मिला था। अपने इकलौते बेटे के सुनहरे भविष्य की कल्पना ने उनमें ऐसी ऊर्जा भर दी थी कि···मैं भी क्या इन स्मृतियों को बार-बार दोहराने बैठ जाती हूँ। जानती हूँ कि अतीत से चिपके रहना ठीक नहीं, जिंदगी को हम

सुपरिचित लेखिका। अब तक प्राचीन भारत में न्याय व्यवस्था, इतिहास पर अन्य तीन पुस्तकें; 'बहुरंगी', 'मनरंगी' (कहानी-संग्रह); 'युगांतर', 'हिडिंबा', 'मुक्ति बोधन' (उपन्यास) एवं पत्र-पत्रिकाओं में १५० से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। छोटे-बड़े दर्जनभर सम्मान प्राप्त।

बँधे जल सा कर देते हैं, जिसमें दु:ख भरी यादों की सड़ाँध के सिवाय कुछ नहीं मिलता, फिर भी वही करती रहती हूँ। कागज पर आदर्श की बातें झाड़ना कितना सरल होता है। 'बीती ताहि बिसार कर आगे की सुधि लेने' के भाषण देती रहती हूँ, किंतु खुद क्या करती हूँ? ठीक ही तो कह रही है डॉली। अचानक खाली दुनिया से बाहर आई तो देखा कि डॉली जा चुकी है। स्वयं को ही स्वयं की दृढ इच्छाशक्ति का परिचय देने की चेष्टा में चाय पीकर उठ ली और अपनी मेज पर विशेषांक लिखने के लिए बैठ गई। लेखन विषय उन्हें बार-बार विगत में खींच रहा था। अचानक विचार कौंधा कि वह जिस विगत से उलझी है, वही तो विषय है। क्यों न मन को खुला छोड़कर लेखनी को दौड़ने दूँ—अपनी पीड़ा, राघव की पीड़ा, युवा पीढ़ी की अपनी सोच, सबकुछ।

प्रतीक ने स्कॉलरशिप लेकर अमरीका में पढ़ाई पूरी की। उसके लौटते ही दमयंती के पास लड़कियों के प्रस्तावों की झड़ी लग गई, किंतु प्रतीक ने साफ कह दिया कि वह ऐसी लड़की से रिश्ता करेगा, जो वहीं की नागरिक हो, ताकि उसे ग्रीन कार्ड मिल सके।

राघव दंपती सकते में आ गए। इकलौता बेटा सदा के लिए विदेश में बसने की योजना बना रहा था। वही कहानी उसके साथ भी घटने जा रही थी, जो आए दिन उन्होंने अपने मित्रों और परिचितों के साथ घटते देखी-सुनी थी। प्रतीक के ही शब्दों में, 'पापा-मॉम, पैसा कमाना है, बेहतर जिंदगी जीनी है, भारत में यह सब कहाँ मिलेगा? आपकी तरह संघर्ष में जीवन नहीं बिताना है, एन्जॉय करना है जिंदगी को··· ।' बेटे की इच्छा तो पूरी हो गई, वह चला गया। साल में एक छोटा सा ट्रिप लगा लेता था माता-पिता से मिलने के लिए। दो वर्ष बाद पोता होने की सूचना मिलने पर दमयंती का दिल नहीं माना था। राघव के मना करने पर भी उसने बेटे-बहू से बच्चे को लेकर आने की बात कह डाली थी। उत्तर बहू ने दिया था, 'मम्मी, यह पॉसिबल नहीं, इतने छोटे बेबी को इंडिया के

इतने पॉल्यूटेड इन्वायरमेंट में नहीं ला सकते।' बेटे ने और जोड़ दिया था, 'मॉम, थोड़ा बड़ा हो जाने दीजिए, फिर देखेंगे।'

बेटे-बहू से यह आस लगाना बेकार था कि वे उन्हें बुलाएँगे। दमयंती का दिल नहीं माना था, वह स्वयं को रोक न सकी थी—महिला संगीत का आयोजन कर डाला था, जिसमें उनके सँजोए अरमान तो थे, किंतु न जच्चा थी, न बच्चा। दमयंती ने टी.वी. स्क्रीन पर पोते की फिल्म दिखाने की व्यवस्था की थी। उन्हें यही तसल्ली काफी थी कि प्रतीक ने कम-से-कम फिल्म तो भेज दी। कैसा था दादी का मन, जो अंदर घुमड़ते भाव उसे छलना का शिकार बना रहे थे। सहेलियाँ भी पीठ पीछे उस पर तरस खा रही थीं। यही तसवीरें तो थीं, जो उन्हें दादी होने का एहसास दिलाती थीं।

फिर अचानक एक दिन बेटे के सपरिवार आने की सूचना मिली। राघव दमयंती भौंचक थे और गद्‌गद भी। यहाँ तक कि शंकित रहनेवाले राघव भी प्रसन्नता छिपा नहीं पा रहे थे। क्या-क्या तैयारियाँ नहीं की गई थीं, पूरे घर में रंग-रोगन कराया गया था। सोच-सोचकर वे चीजें लगवाई गई थीं, जो बहू को सुविधा दे सकें। जिस जमा-पूँजी पर वह जीवन गुजार रहे थे, उसमें से भी खर्च करना पड़ा था। वे आए और दमयंती तो पोते पर निहाल हो गई। बेटे-बहू ने बड़े ही प्यार से इसरार किया कि वह माता-पिता को लेने आए हैं। इस उम्र में यहाँ अब अकेले रहना ठीक नहीं। सब साथ रहेंगे। इतना प्यार भरा आग्रह वे दोनों न टाल सके। मन में कुलबुलाते सारे गिले-शिकवे कब कहाँ गायब हो गए, यह दोनों ही न जान सके।

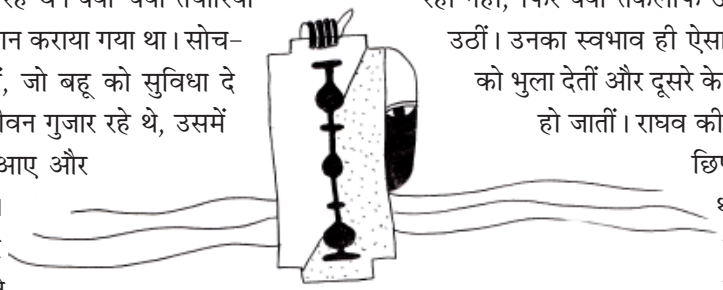

वहाँ परदेस में आरंभिक दिन बहुत अच्छे बीते। दमयंती ने अनजाने ही बेटे की पूरी गृहस्थी सँभाल ली, यह वह स्वयं ही न जान सकी। तीन वर्ष बाद पोती भी हो गई। राघव दमयंती के समान भावुक नहीं थे। मित्रों की बातें, 'यार, जा तो रहा है, पर ध्यान रखना, मेरे जैसा हाल न हो। बच्चे अपने जरूर हैं, पर उन्हें खुद की जरूरतें मजबूर करती हैं, तभी उन्हें हमारी याद आती है और फिर…,' राघव सोचते जरूर थे, लेकिन प्रतीक के व्यवहार की मधुरता और सम्मान उन्हें यह भी सोचने पर विवश कर देता कि सभी बेटे बुरे और स्वार्थी नहीं होते। इस ऊहापोह के बाद भी ये बातें दिमाग के कोने में बैठी उन्हें सजग करती रहती थीं। अंततः राघव की इच्छा न रहते हुए भी, दमयंती की जिद पर राघव ने प्रतीक की बात मान ली थी और ग्रीन कार्ड बनवाकर वहीं रहने की हामी भर दी थी। अब तो उन्हें वहाँ रहते हुए लगभग आठ वर्ष हो गए थे। इतने वर्षों में आरंभिक मतभेदों की समाप्ति और एडजेस्टमेंट हो ही जाता है। दमयंती तो यों भी सरल हृदया थीं, उन्होंने स्वयं को बहू के मुताबिक ढालने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी, भले ही उसके तमाम तौर-तरीके उन्हें रुचिकर नहीं थे। ऐसा भी नहीं था कि अपना देश, अपने लोग याद नहीं आते थे। कभी-कभी बड़ी हुड़क उठती थी, लेकिन उन्होंने बच्चों की खुशी सर्वोपरि रखी थी। राघव उतने सहज नहीं थे। कभी-कभी किन्हीं बातों पर उखड़कर जब वापस लौटने की बात कहते तो दमयंती उन्हें समझा लेती कि अब इस बढ़ती आयु में वहाँ अकेले रहना भी तो मुश्किल है। राघव जैसा जिंदादिल इनसान बहुत शांत हो गया था। पत्नी की खुशी व इच्छा को मानते-मानते अंदर-ही-अंदर घुटते हुए दिल का रोग लगा बैठे। दमयंती भी बढ़ती आयु में अब उतनी सक्षम नहीं रह गई थी।

समय बीत रहा था। प्रतीक के शानदार घर के बेसमेंट में इनका बेडरूम था। सुबह जल्दी नहा-धोकर ऊपर आ जाते। दमयंती घर सँभालने में लग जाती और राघव उसकी मदद करने में। बच्चे अब बड़े हो गए थे। अतः उनको देखने-भालने का काम अब नहीं था। बहू ने बड़े प्यार से प्रस्ताव रखा था, 'आप लोगों को इस उम्र में ऊपर चढ़ने में अब तकलीफ होती है, इसलिए नीचे जिस किचन को स्टोर बना रखा है, उसे खाली कर देते हैं। एक इलेक्ट्रिक कैटल और टी बैग्स रख देते हैं। फ्रिज नीचे है ही, आप चाय वगैरह पीकर आराम से ऊपर आएँ, अब बच्चों का काम तो रहा नहीं, फिर क्यों तकलीफ उठाएँ।' बहू की बात पर दमयंती रीझ उठीं। उनका स्वभाव ही ऐसा था कि बहुत जल्दी अरुचिकर बातों को भुला देतीं और दूसरे के थोड़े से ही स्नेह प्रदर्शन पर प्रफुल्लित हो जातीं। राघव की तीव्र दृष्टि सब देखती थी और उसमें छिपी स्नेह प्रदर्शन की बनावट भी समझती थी, किंतु वे करते भी क्या। इस व्यवस्था के चंद दिनों में ही नीचे किचन में कॉर्न फ्लेक्स, ब्रेड, मक्खन, बिस्कुट, फल, दूध का टेट्रापैक जैसी चीजें लॉकर रख दी गईं। दमयंती के हैरान होकर पूछने पर वही मिश्री घुले स्वर में उत्तर था, 'मम्मीजी, आपको ब्रेकफास्ट में देर न हो, क्योंकि अब आप आराम से तैयार होकर आते हैं और फिर देर हो ही जाती है। इस उम्र में खाना-पीना समय से ही ठीक रहता है। इसीलिए मैंने सोचा कि आप नीचे खाएँ या ऊपर, क्या फर्क पड़ता है, बस आपको समय से मिल जाए।' राघव सब समझ रहे थे और दमयंती को चेता भी रहे थे, लेकिन दमयंती का भोला मन इसमें कोई स्वार्थ नहीं देख पा रहा था। अपनी शंकाएँ बारंबार कहकर राघव अपनी पत्नी के चेहरे पर फैली संतुष्टि भरी प्रसन्नता को कैसे छीन लेते। परिणामस्वरूप अंदर की घुटन ने उनकी तबीयत पर बुरा असर डालना शुरू कर दिया, दिल का रोग तो था ही, अब जैसे जीने की इच्छा ही मर गई थी।

राघव की सोच सही थी, शीघ्र ही माता-पिता की पूरी रसोई व्यवस्था नीचे कर दी गई। स्वरों की मिठास भी धीरे-धीरे लुप्त होने लगी। उनको अब ऊपर आने और तथा बच्चों की जिंदगी में दखलंदाजी करने की कोई जरूरत नहीं, यह जता भी दिया गया। राघव दमयंती के लिए असलियत भयावह थी। बच्चे अब टीन एजर थे, आधी-आधी रात को पार्टी से लौटते, अकसर नशे में भी होते। राघव ने प्रतीक को समझाना चाहा था, बस यही दखलंदाजी बन गया था। राघव क्रोध भरी कुढ़न और दमयंती चिंता भरा मन लिये जैसे-तैसे समय काट रहे थे। नीचे की खिड़की से दिखते आधी रात को लौटती पोती और उसके ब्वायफ्रेंड के चुंबन दृश्य

असहनीय थे। बहू से कहकर अपनी इज्जत नहीं खोना चाहते थे। बेटे से कहना व्यर्थ था।

माता-पिता के नीचे रहने की स्थायी व्यवस्था भी बहुत दिन नहीं खिंची। वह दिन दमयंती कैसे भूल सकती है, जब बच्चों की प्रतिदिन अर्धरात्रि में लौटने की स्थिति बरदाश्त न कर पाने से खून के घूँट पीते राघव और दमयंती को यह पता चला कि उनकी सोलह वर्षीय पोती ने लिव-इन-रिलेशनशिप में रहने का फैसला कर लिया है। यह स्थिति तो प्रतीक को भी बरदाश्त नहीं हो पा रही थी। ऊपर होनेवाली घमासान बहसों के बीच बहू ने शांति बनाए रखने के लिए, बेटी की बात मानने के लिए तर्कों सहित प्रतीक को चुप करा दिया था। राघव अपना संयम खोकर ऊपर चले गए थे। वे कुछ बोलने चले थे कि पोती ने दो टूक शब्दों में कह दिया था, 'यू डोंट इंटरफियर इन माई अफेयर्स, यू हैव नो राइट, अंडर स्टैंड।' पहली बार प्रतीक ने हिम्मत दिखाई थी और बेटी को चाँटा मारते हुए कहा, 'दादा से तमीज से बात करो', और तब बेटे ने बहन का पक्ष लेते हुए प्रतीक का हाथ पकड़ लिया था। तब बहू ने तिलमिलाते हुए सारी भड़ास सास-ससुर पर निकालते हुए बहुत ही अपमानजनक बातें कहते हुए प्रतीक को अल्टीमेटम दे दिया था कि वह इस ओल्ड इंटरफियरिंग कपल को कहीं और रख दे, अब वे दोनों यहाँ नहीं रह सकते। 'ठीक ही तो कह रही थी बहू, बच्चे पल चुके थे, अब उनकी उपस्थिति भी भार थी।'

उसी रात राघव को दिल का दौरा पड़ा था। राघव जब हॉस्पिटल से वापस लौटे तो घर बदल चुका था। दमयंती एक छोटे से फ्लैट में उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। वह अपनी सेहत की लाचारी पर कसमसा उठे कि तुरंत भारत नहीं लौट सकते। दमयंती के आँसू न थमते। वह स्वयं को प्रताड़ित करती कि क्यों नहीं उसने राघव की चेतावनियों को गंभीरता से लिया। वह राघव की बीमारी के लिए भी स्वयं को उत्तरदायी मानती और दु:खी होती। राघव को चिंतामुक्त रखने के लिए ऊपर से स्वाभाविकता दिखाती, हँसती-मुसकराती। राघव सब समझते थे। यों ही यहाँ कोई परिचित नहीं था, तिस पर स्वयं कहीं बाहर जा सकने की अशक्तता। कैसी विचित्र कैद भरी स्वतंत्रता थी। दोनों का जैसे दम घुटता था।

यहाँ विदेश में एकाकी, बीमार, असहाय वृद्ध दंपती छटपटा रहे थे। यदा-कदा प्रतीक आता और कुछ देर सिर झुकाए चुपचाप बैठकर चला जाता। उसके चेहरे पर फैली आत्मग्लानि भी अब दोनों को बनावटी लगती थी। एक महिला पंद्रह दिन में आकर फ्रिज में खाने-पीने का सामान भरकर चली जाती थी। राघव की कमजोरी को देखते हुए एक पुरुष नर्स की भी व्यवस्था कर दी गई थी, यानी जिंदगी को जो शारीरिक सुख-सुविधाएँ चाहिए, वे सब उपलब्ध करा दी गई थीं, लेकिन क्या यह पर्याप्त था? फड़फड़ाती मन की भूख का क्या? दमयंती ने निश्चय कर लिया था कि राघव के थोड़ा सक्षम होते ही हम भारत लौट जाएँगे। तो क्या यदि शरीर अशक्त हो गया है, कम-से-कम अपनी मिट्टी की सुगंध तो होगी, मित्र-रिश्तेदार तो होंगे, स्वतंत्रता तो होगी। मन की छटपटाहट तो मिटेगी, घुटन तो दूर होगी।

दमयंती की ये इच्छाएँ उस दिन दम तोड़ गईं, जब राघव भारत लौटने का सपना सँजोए इस दुनिया से चले गए। कुछ दिन तो उसे होश ही नहीं रहा। एकाकी घर साँय-साँय करता था। पूरा-पूरा दिन गुजर जाता था और दमयंती बस बैठी रहती, न कुछ खाती न पीती। माँ की दशा प्रतीक को हिला रही थी, लेकिन अपे स्वार्थों का भारीपन उन्हें अनदेखा कर जाता था। प्रतीक ने दबी जुबान से पिता की अस्थियों के विषय में पूछा। वहाँ भारतीय लोग अकसर अस्थ्यिाँ लॉकर में रखवा देते थे और जब कभी किसी को अपनी सुविधा से भारत आना होता, तब यहाँ लाकर प्रवाहित कर दी जातीं। प्रतीक के ऐसे प्रस्ताव पर दमयंती जैसे सोते से जागी, उसने पहली बार ढुलमुल नम्र स्वभाव को उतार फेंका और फैसला सुना दिया, 'प्रतीक, इनकी अस्थियाँ मुझे अपने देश ले जानी हैं, उन्हें अब और इस कैद में नहीं रखना, मुक्ति दिलानी है। और हाँ, मुझे यह कहने में कोई शर्मिंदगी नहीं है कि मैंने एक नपुंसक औलाद को जन्म दिया।' प्रतीक ने साहस बटोरकर कहा, 'माँ, मैं चलूँगा अस्थि प्रवाहित···' उसका वाक्य पूरा होने से पहले ही दमयंती की आवाज गूँजी, ऐसी आवाज जो प्रतीक ने जीवन में पहली बार सुनी थी, 'खबरदार, जो दुबारा ऐसा कहा। तेरा इन पर कोई अधिकार नहीं है। पिता के अस्थि प्रवाह का अधिकार अर्जित किया जाता है, जन्म से नहीं मिलता।' दमयंती वापस भारत आ गईं। एकाकी यात्रा करने की ऊर्जा न जाने कहाँ से आ गई थी। शायद सहारे व्यक्ति को यदि बहुत कुछ देते हैं तो कहीं कमजोर भी बना देते हैं। दमयंती का यही सहारा रहित एकाकीपन उनमें नई शक्ति प्रवाहित कर गया। उन्हें पग-पग पर पति राघव याद आ रहे थे। अपनी जीवंतता से भरपूर स्मृतियों द्वारा उन्हें ऊर्जा से आप्लावित भी कर रहे थे।

खानदानी पुराना घर यद्यपि जर्जर स्थिति में था, किंतु 'घर' था, जहाँ कभी राघव का बचपन खिलखिलाया था। इसी घर की ड्योढ़ी पर नववधु वेश में लजाती-सकुचाती दमयंती का चेहरा उन्हें याद आया। घर के कोने-कोने से यादें जुड़ी थीं। उन्होंने अपनी छिपी शक्ति को पहचाना और भले ही अतीत के पल उन्हें घेरते रहे, वह अकर्मण्य नहीं बैठीं। रिश्तेदारों, मित्रों व पड़ोसियों के सहयोग से घर को रहने लायक बनवा लिया। राघव की पेंशन उनके लिए पर्याप्त थी। नई ऊर्जामयी दमयंती ने जिस लेखनी को विवाहोपरांत भुला दिया था, अब वही उनकी शक्ति बन गई। किसी भी नई शुरुआत के लिए आयु बाधक नहीं होती, यह उन्होंने सिद्ध कर दिया था।

वर्तमान में लौटते हुए दमयंती ने कागज समेटे और पेन में कैप लगाती उठ खड़ी हुईं। वह मुसकराते हुए सोच रही थीं कि डॉली को कैसे बताएँ कि वह अतीत से क्यों नहीं निकल पातीं। यही अतीत तो उन्हें पुन:-पुन: ऊर्जावान कर देता है। वह अपने राघव को दिखाना चाहती हैं कि उनकी दमयंती हारी नहीं है। उनकी पीड़ा, उनका शस्त्र बनकर कलम में परिवर्तित हो गई थी।

ए-१६, सेक्टर-२७, नोएडा-२०१३०१
दूरभाष : ०९८७१४४४४३२

विद्यालयों में नैतिक शिक्षा

● महेश चंद्र शर्मा

शिक्षा देने का उद्देश्य है—उचित-अनुचित या अच्छे-बुरे का ज्ञान कराना। 'नैतिक शिक्षा' का अर्थ है, ऐसी शिक्षा, जो मानव को उचित-अनुचित का ज्ञान कराकर उसे सहज मानवीय, आदर्श, आधुनिक समयानुकूल आचरण करने की प्रेरणा दे सके। गंभीरता से विचार करने पर हम पाते हैं कि वास्तविक और सच्ची शिक्षा का इससे भिन्न कोई अर्थ हो ही नहीं सकता। जिस प्रकार आँख की उपयोगिता और प्रयोजन है हर अच्छी-बुरी वस्तु को देखकर अच्छी को ही अपनाना, चलते हुए गड्ढे और समतल भूमि की पहचान कर अपने कदमों को समतल भूमि की ओर ही ले जाना, उसी प्रकार नैतिक शिक्षा का भी इससे भिन्न कोई अर्थ नहीं हो सकता कि वह हमें मानव-मूल्यों की (ह्यूमन वैल्यूज) सहज मानवीय वृत्तियों को उजागर कर, हमें उस राह पर चलने की प्रेरणा देती है कि जिस पर चलने से अपने साथ-साथ सारे मानव-समाज और राष्ट्र का भी कल्याण हो। जो शिक्षा ऐसी भावनाएँ उजागर नहीं कर पाती, वह नैतिक तो कही ही नहीं जा सकती। अपने आप में एक बोझ से अधिक कुछ भी नहीं है।

नैतिक शिक्षा का परीक्षण उत्तर पुस्तिकाओं में नहीं, जीवन के आचरण में होता है, जापान इसका प्रमाण है। शिक्षा जीवन को आदर्श बनाने का साधन है, साध्य नहीं। सभी में प्रेम, शांति, स्वतंत्रता, अहिंसा, निर्भयता, त्याग, समर्पण, परोपकार, सर्वधर्म समभाव आदि पैदा करना।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था, 'ज्ञान का अंतिम लक्ष्य चरित्र निर्माण है और अच्छे चरित्र का आधार नैतिकता है या मानव-मूल्यों का समावेश।' स्वामी विवेकानंद ने कहा था, 'जो शिक्षा साधारण व्यक्ति को जीवन-संग्राम में समर्थ नहीं बना सकती, जो मनुष्य में चरित्र-बल, परहित-भावना तथा सिंह के समान साहस नहीं ला सकती, वह भी कोई शिक्षा है? जिस शिक्षा के द्वारा जीवन में अपने पैरों पर खड़ा हुआ जाता है, वही है शिक्षा।'

नैतिकता समूची मानवता की एक साझा पूँजी है। यह एक ऐसी अविरल धारा है, जो काल के पड़ावों को पूरा करके निरंतर आगे बढ़ती है। साहित्य हो, कला हो, संस्कृति हो, सबके लिए अंत:सरिता का कार्य करती है।

नैतिक शिक्षा का सीधा संबंध शब्दों के बजाय कर्म, क्रिया या आचरण से अधिक होता है।

प्रख्यात शिक्षाविद् तथा हिंदी के प्रबल पक्षधर। सामाजिक कार्यों में सक्रियता, दिल्ली के पूर्व महापौर। अनेक सांस्कृतिक संस्थाओं के प्रेरणास्रोत।

शिक्षा केवल विविध जानकारियों का ढेर नहीं है, जो तुम्हारे मस्तिष्क में ठूँस दिया जाए। हमें ऐसी शिक्षा चाहिए, जिससे चरित्र बने, मानसिक बल बढ़े, एकाग्रता आए, बुद्धि का विकास हो और जिससे मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके, देशभक्त नागरिक हो। अत: सभी प्रकार की शिक्षा का उद्देश्य 'मनुष्य' निर्माण ही हो। सारे प्रशिक्षणों का अंतिम ध्येय मनुष्य का विकास करना ही है।

शिक्षक वह होता है, जो जगा दे, परम से मिला दे, दिशा बता दे, ज्ञानवान बना दे, खोया हुआ दिला दे, पुकारना सिखा दे, आत्म-परिचय करा दे, मार्ग दिखा दे और अंत में अपने जैसा बना दे। लेकिन याद रखना शिक्षक मार्गदर्शक है, चलना तो शिष्य को स्वयं ही पड़ेगा। उसने रास्ता दिखाना है।

विश्व में वेदांत का डंका बजाने के बाद स्वामी दयानंद ने राष्ट्र को महान् बनाने के लिए चार बातें बताई थीं—१. सदाचार की शक्ति में विश्वास, २. ईर्ष्या और संदेह का परित्याग, ३. परोपकार, ४. मानव मूल्यों का विकास।

कुछ लोग 'नैतिक' शब्द सुनते ही धार्मिक, आध्यात्मिक अथवा दर्शनशास्त्रीय विचारों का आभास पाकर, उस (नैतिक शब्द) से चौंक उठते हैं अथवा शिक्षा में नैतिकता या युवा पीढ़ी में नैतिकता जैसे शब्द-प्रयोगों को सांप्रदायिकता अथवा संकीर्णता का प्रतीक मानने लगते हैं, वे वास्तव में मानवता की उपेक्षा कर देते हैं और इस शिक्षा को धार्मिक शिक्षा मान लेते हैं, जो गलत है।

भारत एक सांस्कृतिक देश है, जो कला, संस्कृति और प्राचीन परंपराओं से परिपूर्ण है। यहाँ पर सभी धर्मों का आदर किया जाता है। अत: विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए परिवार, विद्यालय तथा

समाज तीनों को अपना दायित्व सँभालना होगा। यदि शिक्षा और शिक्षक ने उसे डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, अधिकारी, लिपिक, नेता, श्रमिक बनाकर अपनी भूमिका को पूर्ण मान लिया तो यह एक बहुत बड़ी त्रुटि होगी।

शिक्षा तभी पूर्ण होगी, जब हम शिक्षा के माध्यम से बालकों को उचित-अनुचित, अच्छा-बुरा का ज्ञान दे सकें और यह अनुभव करा सकें कि श्रम के कमाए हुए धन का मूल्य-भ्रष्टाचार से प्राप्त धन की अपेक्षा कई गुना अधिक है और श्रेष्ठ है। शिक्षा का संबंध एक ओर तो स्वयं व्यक्ति के उन गुणों के विकास से है, जो उसके व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाकर समाज एवं देश हित का उपयोगी अंग बना दे तथा दूसरी ओर एक ऐसी मानसिक स्थिति के निर्माण से भी है, जो उसे अपने से अधिक दूसरों के हित में अपना कल्याण ढूँढ़ने की सामर्थ्य पैदा कर दें। सुकरात और प्लेटो हों या कबीर अथवा महात्मा गांधी—इन सबके विचार नैतिक शिक्षा के अंग हैं, क्योंकि इनके विचार मानवता को समृद्ध करनेवाले हैं। नैतिक शिक्षा की व्यापकता सभी मानव धर्मों में है, जबकि नैतिकता तो धर्म के बिना रह सकती है, पर कोई धर्म नैतिकता के बिना नहीं रह सकता।

विज्ञान ने हमको अनेकानेक भौतिक (सांसारिक) सुख-सुविधाओं का वरदान दिया, वैभव बढ़ाया। दूरसंचार, दूरदर्शन, दूरयात्राएँ करने की क्षमता दी, दुनिया को छोटा कर दिया। शिक्षा में आज कंप्यूटर सबसे महत्त्वपूर्ण बन गया है। कंप्यूटर आज सभी के आकर्षण का केंद्र हो गया है। गणना करनी है, जानकारी लेनी हो, संगीत सुनना हो, अपना संदेश भेजना है, देश-विदेश में बैठे अपने प्रियजनों से बातचीत करनी हो या नया शोध करना हो, सभी कार्यों के लिए तत्पर रहता है। आवश्यकता इस बात की है कि छात्र-छात्राओं की रुचि के अनुसार और उसकी सामर्थ्य को देखते हुए हम इस प्रकार की शिक्षा का प्रावधान करें, जिसमें छात्र प्रारंभ से ही शिक्षा की ओर बढ़ सकें। सरकार, एन.जी.ओ. तथा कॉरपोरेट जगत् को इसका ऐसा पाठ्यक्रम तैयार कराना पड़ेगा, जो बच्चों में संस्कार और मानव-मूल्यों का संचार कर सके। नहीं तो कंप्यूटर सामाजिकता भी समाप्त कर देता है। इन्हीं के अभाव में विश्व-बंधुत्व और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना समाप्त हो गई।

वर्तमान के भौतिक युग ने आज हमारे जीवन का प्रत्येक पक्ष, प्रत्येक क्षेत्र और प्रत्येक कदम को अनेक प्रकार की बुराइयों से भर दिया है। चारों तरफ अहं निहित स्वार्थ और भ्रष्टाचार का ही बोलबाला है। कहीं कोई दूसरे की सुनना तो दूर, उसकी तरफ देखना भी नहीं चाहता, बल्कि धक्के से उसे गिराकर स्वयं आगे बढ़ जाना चाहता है। तुलसीदासजी द्वारा लिखित 'परहित सरिस धर्म नहीं भाई, परपीड़ा सम नहिं अधिकाई' भावना समाप्त हो रही है।

भारत जैसे महान् आदर्श मूल्यों की परंपराओं वाले देश के लिए निश्चय ही यह घोर अपमान और निराशा की बात है। इसका कारण नैतिक शिक्षा का अभाव ही है। चाहिए तो यह था कि सन् १९४७ में जब भारत स्वतंत्र हुआ था, उसी समय अंग्रेजों द्वारा लागू की गई शिक्षा-पद्धति को बदलकर मानव-मूल्यों, भारतीय नैतिक मूल्योंवाली शिक्षा पद्धति को लागू किया जाता, पर ऐसा न हो सका। डॉ. राधाकृष्णन एवं डॉ. कोठारी कमीशन ने इसका समर्थन किया। परिणाम हमारे सामने है। अब भी बहुत देर नहीं हुई। उचित यही है कि हम चेष्टा करके अपनी शिक्षा-पद्धति को जल्दी-से-जल्दी नैतिक मूल्योंवाली बना लें। तभी देश का भविष्य सुरक्षित रह सकता है।

सबसे पहले शिक्षक, जिसे राष्ट्र निर्माता कहा जाता है, उसके प्रति सरकार, समाज और छात्र श्रद्धा और आदर-सत्कार की भावना से देखते हुए सर्वोच्च स्थान समाज में दें और शिक्षक भी समाज के उत्थान में अपनी कार्यकुशलता से आगे बढ़े। शिक्षक को पहले स्वयं साहस का परिचय देते हुए अपनी वाणी एवं व्यवहार में स्व-नियंत्रण रखना चाहिए। जो व्यक्ति अपनी वाणी व कार्यों को अपने दायित्व व अपेक्षाओं के अनुरूप समयानुसार नियंत्रण में नहीं रख सकता है, वह दूसरों को सही नेतृत्व भी नहीं दे सकता है।

सबसे पहले शिक्षक, जिसे राष्ट्र निर्माता कहा जाता है, उसके प्रति सरकार, समाज और छात्र श्रद्धा और आदर-सत्कार की भावना से देखते हुए सर्वोच्च स्थान समाज में दें और शिक्षक भी समाज के उत्थान में अपनी कार्यकुशलता से आगे बढ़े। शिक्षक को पहले स्वयं साहस का परिचय देते हुए अपनी वाणी एवं व्यवहार में स्व-नियंत्रण रखना चाहिए। जो व्यक्ति अपनी वाणी व कार्यों को अपने दायित्व व अपेक्षाओं के अनुरूप समयानुसार नियंत्रण में नहीं रख सकता है, वह दूसरों को सही नेतृत्व भी नहीं दे सकता है। अर्थात् शिक्षक या आचार्य वही सफल होता है, जो निरंतर अध्ययन-मनन करता रहे। छात्रों को संस्कारित करने के लिए संगीत, चित्रकला, नैतिक, शारीरिक शिक्षा, पुस्तकालय या घर पर पढ़ने का अभ्यास करने के अनुसार शिक्षा देने का प्रावधान करना चाहिए। जिससे भारत के भविष्य (अर्थात् छात्रों) को मानव-मूल्यों से परिपूर्ण देशभक्त नागरिक बना सकें। अत: देश के सभी शासनकर्ताओं, सरकारी एवं गैर-सरकारी शिक्षाशास्त्रियों, प्रधानाचार्यों और आचार्यों का दायित्व है कि वे विद्यार्थियों में देश-धर्म हेतु बलिदान की भावना, महिलाओं का संपूर्ण आदर, गुरुभक्ति, माता-पिता और बड़ों का आदर, मातृभाषा से प्यार, पुरुषार्थमय जीवन आदि सद्गुण छात्रों में पैदा करें, इस प्रकार की शिक्षा नीति अपनाएँ, तभी भारत गौरवशाली होगा।

साअ

६२, विवेकानंदपुरी,
किशनगंज, दिल्ली-११०००७
दूरभाष : ९९११३६६२००

ढूँढ़ती हूँ उसका स्पर्श

● सुनीता जैन

जानी-मानी कवयित्री और कथाकार सुनीता जैन लंबे समय से कविताएँ लिख रही हैं, जिनकी संवेदना भावार्द्र कर देने वाली है। पर सुनीताजी की कहानियों और उपन्यासों का भी अपना अलग रंग और छुअन है। उन्हें वर्ष २०१५ के प्रतिष्ठित 'व्यास सम्मान' के लिए चुना गया है।

गीली परात में

जानती हो आजकल आलू, टमाटर
पेठा, करेला और तरह-तरह की फलियाँ
बिनारने में बहुत कुशल हो चली हूँ मैं।

पहले धोती हूँ उन्हें सावधानी से
फिर साफ महीन कपड़े से पोंछती हूँ
कि उन पर रह न जाए
कोई दवाई छिड़की—तुम्हें तो मालूम है
क्या-क्या रहता है समाचार-पत्र में
कैसी-कैसी खबरें डरावनी कीटनाशक
छिड़काव का सब्जियों पे
तुम आती हो और मुझे व्यस्त जान
चुपके से लौट भी जाती हो
चाहती हूँ उठकर रोक लूँ तुम्हें
पर हाथों में सब्जी के छिलके
कपड़ों पर सलवटें,
माथे पर चिड़चिड़ाहट थकान की,

ऐसे तो कभी नहीं करती थी
मैं अगवानी तुम्हारी
सोचती हूँ दोपहर में बुला लूँगी तुम्हें
मना-मनू कर अपने शयनकक्ष में
ढेर सी बातें करेंगे—तुम ले जाओगी मुझे
फिर वापिस अपने शब्द-लोक में।

किंतु दोपहरी में सेवक
रख जाता है दालें-मसाले धूप में सुखाने
उन्हें देखना भी जरूरी होता है
भादों के इस उमसाए महीने में।
मिर्च तक में, जानती हो
हो जाती है फफूँदी।

शाम को बनानी होती है फेहरिस्त
अगले दिन की खरीद-फरोख्त की
रात में गिनकर रखनी होती है
रेजगारी और बाकी की राशि।

आजकल बिना खुले पैसों के
लौटा देते हैं दुकानदार या फेरीवाले,
कहते हैं, पैसे लाओ खुल्ले,

अब देखो न सखी, मैं क्या थी
और क्या हो रही हूँ, दिन पे दिन
रो लूँ या लंबी साँसें लूँ
नहीं जानती—
जानती हूँ केवल इतना, कविता
कि तुमसे यह अपनी दूरी पैनी-कील सी

चुभा करती है गहरी मेरे वक्ष में
लगता है मेरा वजूद अब कुछ भी नहीं
केवल आटा सने दो हाथों के,
हर पल गीली परात में।

न आज, न कभी

माँ की छड़ी
खड़ी है उसके पास
तसवीर के नीचे
माँ के होने, नहीं होने को
रेखांकित करती,
कभी-कभी छड़ी की मूठ पर
रखती हूँ हाथ
देर तक
ढूँढ़ती हूँ उसका स्पर्श
उभरती है याद…
उसकी हँसी
कोई कही बात,
ऊपर के होंठ पर
पसीने की नमी
ठुड्डी के नीचे दो धृष्ट बाल
अब याद नहीं कि वह
याद आती है पूरी

पूरी माँ आखिर क्या होती है
यह भी नहीं पता
बचपन में थी वह
एक चक्रायमान पुंज ऊर्जा का
यहाँ से वहाँ बरजता-बरसता,
अटल आदेश सा

और मरने से पहले
बहुत समय तक
बस ढूह एक रेत का,
भुरभुराता

मैंने किसी को मरते नहीं देखा,
इतनी धीमे और लगातार
खँडहरों तक को नहीं।

छड़ी खड़ी है
वैसी-की-वैसी
लकड़ी और पॉलिश में
चमचम करती
उसे बदलना नहीं है
अपनी ही तसवीर में
न आज, न कभी।

कल्पना सही

चलो कल्पना ही सही
एक ऐसी जगह अवश्य होगी
जहाँ आँख मूँद के
बैठ सके वृक्ष के नीचे कोई
जहाँ बोलना जरूरी न हो
न जाना कहीं
न पाना कुछ भी

चलो कल्पना ही सही
ऐसे ही कल्पित पल,
कल्पित स्थल
कहते हैं, तू चल अभी
मिल जाएगा तेरा अपना
जैसे बड़ी भोर का सपना
आएगी फिर से हँसी
आँखों में तिरतिर नमी...

कल्पना तेरी यह चाहे,
कल्पना सही।

बाहर भी और घर में

शुरू सर्दी के न गरम न ठंडे दिन में
उतरते देख रही वह पक्षीवृंद साँझ के
अपने-अपने पेड़ों पर अलसाए।

और सोच रही, क्यों वे
या उसके परिचित जन सारे
भय मारे हैं बाहर भी और घर में
अपनी-अपनी चिंता केंचुल ओढ़े
अंतिम दिन अंतिम साँसों तक
चिथड़ा-चिथड़ा स्वयं से लिथड़े

सोच रही वह उठकर बस चल दे
नाम बदल दे, गाँव बदल दे

केवल अपने इकतारे पर बजे अकेली
बिन संगी के बिना सहेली

इतनी कोमल संध्या
इतनी सुंदर जगती
आँखों में भर आँखों को अपनी
वह आँखें ही बंद कर ले।

चला-चली

कल जब तुम होगे
मैं नहीं होऊँगी दूर कहीं भी।
आज मैं हूँ—
पर तुम कहीं नहीं हो, पाठक

ऐसा ही होता है रिश्ता
बूढ़े माली के हाथों रोपे
आम-वृक्ष का

आमों में रस हो,
बची सुगंध हो
रोप रहे हाथों की
दुआ यही करता है
चला-चली में माली!

सी-१३२, सर्वोदय एन्क्लेव,
नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : २६९६२०२२

लघुकथा

भीख

● अनीता प्रभाकर

वह बहुत निराश था कि बार-बार उसकी फाइल अफसर के पास जाती और पास हुए बिना ही लौट आती। वह इन रिश्वतखोर, भ्रष्टाचारी भिखारियों को किसी भी प्रकार रिश्वत नहीं देना चाहता। वह स्वयं बहुत ही कर्मठ एवं ईमानदार अफसर है। अत: उसने सोचा कि वह स्वयं ऑफिस जाएगा और अपना कार्य खुद कराके लाएगा। उसने अपना मन पक्का कर ऑफिस में क्लर्क द्वारा अपना कार्ड और फाइल अधिकारी को भिजवा दी। कुछ देर पश्चात् ही क्लर्क ने वापस आकर कहा कि तीस हजार दोगे तो एक सप्ताह में आपका काम हो जाएगा। वह रिश्वत न देने के अपने निश्चय पर दृढ रहा। इसी विभाग में दूसरे अफसर के पास फाइल भेजी तो वहाँ से भी क्लर्क ने वापस लाकर कहा कि आप केवल पचास हजार दे दो और कल शाम तक आपका काम हो जाएगा। वह मन-ही-मन क्षुब्ध हुआ, पर अपने निश्चय पर अडिग रहा। एक बहुत अच्छा अफसर उसका जानकार था। अत: उसने वहाँ भेजकर अपना भाग्य आजमाने का निश्चय किया। थोड़ी देर के पश्चात् क्लर्क ने फाइल लाकर कहा कि एक लाख दे दो। हाथ के हाथ अपनी फाइल ले जाना। भीख माँगनेवालों की सूची और रिश्वत का मूल्य बढ़ता ही जा रहा है। उसका सिर चक्कर खा रहा था कि आखिर कोई सीमा होती है रिश्वतखोरी की। हर पद पर एक से बढ़कर एक भिखारी बैठा है। क्या इनका पेट कभी नहीं भरता? फाइल हाथ में लेकर वह दु:खी मन से हताश और निराश घर की ओर चल पड़ा। उसी समय रास्ते में एक बूढ़ा लँगड़ा भिखारी उसके पास आकर बोला, ''बाबूजी तीन दिन से कुछ नहीं खाया, भूखा हूँ, कुछ दे दो, भगवान् आपका भला करे।'' उसने तुरंत बीस का नोट उस भिखारी के पात्र में डाल दिया। वह भिखारी उसे अनेकों आशीर्वाद देता हुआ खुशी-खुशी चला गया। अपना काम न होने पर भी उसके मुख पर संतुष्टि के भाव थे, क्योंकि उसने एक सच्चे भिखारी को भीख दी थी।

क्यू-४३, नवीन शाहदरा
दिल्ली
दूरभाष : ०११-२२८२८८५७

कहानी

एक चिट्ठी ऐसी भी

● श्रद्धा पांडेय

परमू के हाथ में डॉक्टर द्वारा लिखा परचा लहरा रहा था। माँ अस्पताल के बरामदे में एक पुरानी चादर पर बेसुध पड़ी थी। डॉक्टर ने तो दवा लिख दी, पर परमू के सामने एक विकट समस्या थी कि पैसे कहाँ से आएँगे? थोड़ी देर तक वह अपनी माँ के पास बैठा रहा। कभी माँ को देखता तो कभी डॉक्टर के द्वारा लिखे परचे को निहारता। उसे निर्णय लेना था कि अपनी माँ और अपने सपने के बीच किसे चुने?

अचानक पूरे आत्मविश्वास के साथ उठा और बिना रुके दौड़ता हुआ घर आ गया। घर क्या था, कहीं से उठाकर लाई गई टीन की दीवार और उस टीन में चरमराता टीन का दरवाजा। जिसे बंद करना उसकी माँ ने कभी आवश्यक नहीं समझा था। दरवाजे तो वहाँ बंद किए जाते हैं, जहाँ कुछ लुट जाने का डर हो। परमू की माँ के पास लुटाने के लिए कुछ था ही नहीं, एक परमू के सिवाय।

जहाँ वह काम करती थी, वहाँ के साहब से कहकर उसने अपने परमू का दाखिला पास के सरकारी स्कूल में करवा दिया था। परमू काफी बड़ा हो गया था, पर उसे कुछ भी नहीं आता था, इसलिए उसका दाखिला दूसरी कक्षा में हुआ। उसे वहाँ अपने जैसे अनेक बच्चे मिले, जिन्हें पढ़ने-पढ़ाने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। स्कूल का यह हाल था कि ज्यादातर बच्चों के पास किताब-कॉपियाँ होती नहीं थीं और जिनके पास होती भी थीं, वे भी जल्दी ही हवाई जहाज बनाकर उड़ा दी जाती थीं।

परम कभी समझ ही नहीं पाया कि उसकी माँ आखिर क्यों उसे स्कूल भेजती है? वह सोचता था कि स्कूल जाकर खेलने से कहीं अच्छा है कि वह गली के अन्य बच्चों की तरह घर पर रहे और खेले। एक दिन उसने माँ से पूछ ही लिया, ''माँ स्कूल जाकर क्या करूँगा? मुझे स्कूल जाना अच्छा नहीं लगता।'' माँ बरतन धो रही थी। अचानक उठी और उसे कंधे से हिलाते हुए बोली, ''खबरदार! जो तूने स्कूल न जाने की बात की! खाल खींच लूँगी।'' परम सहम गया। उसने माँ का ऐसा रूप कभी नहीं देखा था। माँ दुबारा बरतन मलने लगी और साथ-ही-साथ बड़बड़ाती जा रही थी कि तन-मन काटकर कैसे पढ़ा रही हूँ, यह तो मेरा जी ही जानता है। रात-दिन भगवान् से मनाती रहती हूँ कि किसी तरह तू पढ़-लिख जाए तो चार पैसे घर में आने लगेंगे और दुख दूर हो जाएगा।

परम सोचने लगा—माँ भी कितनी नासमझ है। खुद भी परेशान हो रही है और मुझे भी परेशान कर रही है। पढ़ाई-लिखाई से अच्छा होता कि

सुपरिचित लेखिका। 'सतरंगी दुनिया के अठरंगी सपने', 'समय की रेत पर', 'हाथी मेरी साथी' पुस्तकें प्रकाशित। गोमती गौरव सम्मान, शब्द शिल्पी सम्मान, वामा सम्मान, अखिल भारतीय अणुव्रत न्यास सम्मान।

हम किसी तरह पैसे इकट्ठा करके हवाई जहाज में बैठकर ऊपर जाते और वहाँ भगवान् से पैसे माँगकर ले आते। शायद ये अमीर लोग ऐसे ही अमीर हुए होंगे। अब वह दिन-रात उठते-बैठते यही सोचने लगा कि ऐसा क्या करे कि उसके पास कुछ पैसे इकट्ठे हो जाएँ, जिससे वह हवाई जहाज में बैठकर भगवान् के पास जा सके। पढ़ाई-लिखाई में पहले भी उसका मन नहीं लगता था, अब उसका मन और उचट गया।

दूसरे दिन जब वह स्कूल जाने के लिए घर से निकला तो स्कूल जाना उसे समय बरबाद करने जैसा लगा। 'क्या करूँ, कैसे पैसे कमाऊँ?' यह सोचते-सोचते उसके पैर कहीं के कहीं पड़ने लगे। थोड़ी देर बाद जब उसे होश आया तो वह बाजार में खड़ा था। वह डर गया। सोचा—माँ को पता चलेगा तो बहुत नाराज होगी। स्कूल जाने के लिए मुड़ा ही था कि उसकी निगाह सामने बैठे एक अंधे भिखारी पर पड़ी, जिसके सामने एक चादर फैली थी, उस पर कटोरा था। लोग आते-जाते उस कटोरे में पैसे डाल देते थे। उसने सोचा, बिना काम किए पैसे कमाने का इससे आसान तरीका कोई और हो ही नहीं सकता। अपनी ही धुन में कुछ और ही सोचते-सोचते वह थोड़ा और आगे बढ़ा तो देखा कि गली के मंदिर के सामने कई लोग पंक्ति में हाथ फैलाए बैठे हैं। उनके सामने लगातार सिक्के खनक रहे थे। उसने अपना बैग पास ही पेड़ पर लटका दिया और हाथ फैलाकर पंक्ति के अंत में बैठ गया। चार-पाँच घंटे में उसके पास ३०-४० रुपए इकट्ठा हो गए। उसकी खुशी का ठिकाना ही न रहा। इतने रुपए एक साथ उसने कभी नहीं देखे थे। पेड़ से अपना बैग उतारा और छुट्टी होने के समय घर पहुँच गया।

अब वह प्रतिदिन स्कूल न जाकर मंदिर जाने लगा। चार-से-पाँच घंटे वहीं बैठता, फिर पैसे समेटकर अपना बैग उतारता और घर की तरफ चल देता। खुशी उसके चेहरे से झलकने लगी थी और परम की खुशी देख-देखकर उसकी माँ निहाल होने लगी थी। परम घर आता। सबसे

पहले पैसे छिपाता, फिर खा-पीकर खेलने चला जाता। उसमें आए बदलाव को देखकर उसकी माँ की खुशी का ठिकाना न था। डिब्बे में तेजी से बढ़ते पैसों को देख परम को अपना सपना पूरा होता दिखाई पड़ने लगा। जब माँ सो जाती तब वह धीरे से उठता, पैसों को गिनता, फिर रख देता। बेफिक्र और बेपरवाह परम को अब अपने पैसों की चिंता होने लगी थी। वह डरता रहता कि कहीं किसी ने उसके पैसे चुरा लिए, फिर क्या होगा? इसलिए रोज नई-नई जगह ढूँढ़ता रहता और पैसों को छिपाता रहता। सबकुछ वैसा ही चल रहा था, जैसा वह सोच रहा था कि अचानक माँ बीमार पड़ गई।

डॉक्टर की परची लेकर वह सीधा घर आया। डिब्बे में से पैसे निकाले। दवा की दुकान पर गया। दवा खरीदी और अस्पताल पहुँच गया। लगभग दस दिन माँ के साथ वह भी अस्पताल में ही रहा। जब माँ ठीक हो गई, तब उन्हें लेकर घर आ गया। माँ ने घर में घुसते ही पूछा, ''बता परमू! पैसे कहाँ से आए?'' हस्पताल में वह कई बार पूछ चुकी थी, पर हर बार परम यह कहकर टाल देता, ''पहले तू ठीक तो हो जा। घर चलना, बता दूँगा।'' इस बार माँ के हठ के आगे वह हार गया। अत: आदि से अंत तक का पूरा विवरण उसने माँ को सुना दिया। माँ की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। सिर चकराने लगा तो वहीं बैठ गई। परम दौड़ा तो हाथों के इशारे से रोक दिया। परम की माँ को कई बार पानी पीकर सो जाना पड़ता था, पर तब भी उसने किसी के आगे हाथ नहीं फैलाया। जिस संतान पर उसकी सारी आशाएँ टिकी थीं, उसने कितनी आसानी से उसके स्वाभिमान को चौराहे पर नीलाम कर दिया था। उठकर दो-चार झापड़ लगाना चाहती थी, पर नहीं लगा पाई। कैसे मारती, उसके उसी भीख के पैसों से आज स्वस्थ होकर घर आई थी। उसने निश्चय किया कि कल से परमू का स्कूल जाना बंद। वह उसे सदा अपनी आँखों के सामने रखेगी। उसने कहा कि कल से तू मेरे साथ काम पर चलेगा। कोई जरूरत नहीं है पढ़ाई-लिखाई करने की। देख लिया तुझे पढ़ाकर।

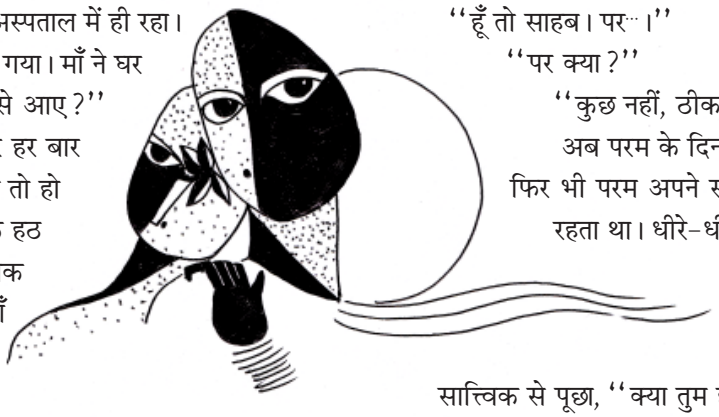

परम को लगा, जैसे मन माँगी मुराद मिल गई। जिस पढ़ाई को वह बोझ समझकर ढोए जा रहा था, उससे मुक्ति मिल गई, पर दूसरे ही क्षण वह दु:खी होकर सोचने लगा कि अब अपने सपने को कैसे पूरा करेगा? कैसे पैसे एकत्र करके भगवान् तक पहुँचेगा और खूब पैसे लाकर माँ को आराम देगा?

थोड़े दिन में जब उसकी माँ काम पर जाने लायक हो गई, वह भी माँ के साथ काम पर जाने लगा। उसकी माँ उससे काम करवाना नहीं चाहती थी, फिर भी अपनी बीमारी के कारण और कुछ सिखाने के उद्देश्य से काम करवाने लगी, पर जब परम अपने छोटे-छोटे हाथों से काम करता, तब माँ का दिल छलनी-छलनी हो जाता। जहाँ वह काम करने जाती, वहाँ के साहब और मैडम दोनों बड़े अच्छे थे। एक दिन उन्होंने उसे समझाया कि देख ज्योति, तेरा बच्चा अभी बहुत छोटा है, यदि तू उसे पढ़ाना नहीं चाहती है तो कोई बात नहीं, पर उसके छोटे से कंधे पर काम का इतना भारी बोझ तो न डाल। ज्योति रोने लगी, बोली, ''तो क्या करूँ साहब! पूरा दिन खाली बैठा भी तो नहीं सकती और न ही मैं अब उसे अकेला गली में छोड़ना चाहती हूँ।'' मि. प्रभात ने पत्नी पूर्वी की तरफ देखा, फिर पूर्वी ने आगे बढ़कर कहा, ''कोई बात नहीं, तुम उसे यहाँ लाती हो, लाओ, हमें कोई ऐतराज नहीं, पर उसे खेलने दो।'' ज्योति ने दोनों की तरफ देखा ही था कि पूर्वी समझ गई। तुरंत बोली, ''अगर तुझे कोई ऐतराज न हो तो उसे सात्त्विक के साथ खेलने दे। अच्छा है, सात्त्विक को भी खेलने के लिए साथी मिल जाएगा।'' ज्योति ने रोते हुए कहा, ''कहाँ आप मालिक और मैं नौकर! क्या यह उचित होगा?''

''क्या तुम इनसान नहीं हो?''

''हूँ तो साहब। पर...।''

''पर क्या?''

''कुछ नहीं, ठीक है साहब।

अब परम के दिन बहुत अच्छे बीतने लगे, पर फिर भी परम अपने सपने को लेकर बड़ा चिंतित रहता था। धीरे-धीरे उसकी और उसके साहब के लड़के सात्त्विक के साथ अच्छी दोस्ती हो गई।

एक दिन परम ने सात्त्विक से पूछा, ''क्या तुम हवाई जहाज में बैठे हो?''

''हाँ, कई बार। क्यों तुम ऐसा क्यों पूछ रहे हो?''

परम ने उसकी बातों का जवाब दिए बिना फिर पूछा, ''क्या ऊपर बादल में भगवानजी से मिले?''

''भगवानजी से! नहीं तो।''

''पर भगवानजी ऊपर बादलों के बीच में ही तो रहते हैं।''

सात्त्विक को लगा कि परम जो कह रहा है, उसमें कहीं न कहीं सच्चाई तो जरूर है, क्योंकि मम्मी भी जब भगवान् की बात करती हैं तो ऊपर की तरफ देखती हैं, पर उसे तो आज तक भगवान् नहीं मिले। उसने सोचा कि हो सकता है कि हवाई जहाज के शोर को सुनकर भगवानजी वहाँ से हट जाते हों।

सात्त्विक को कुछ सोचते देखकर परम को लगा कि सात्त्विक जरूर झूठ बोल रहा है। मुझे बताना नहीं चाहता होगा। आखिर यह इतना अमीर कैसे बन गया! इसके पापा-मम्मी जरूर भगवान् के पास जाकर पैसा माँगकर लाते होंगे, तभी तो इनके पास गाड़ी, घर, कपड़े और अच्छा-अच्छा खाना सबकुछ तो है। अब परम ने सात्त्विक को पटाते हुए कहा, ''देख सात्त्विक! मैं अगले दस दिनों तक बॉलिंग करता रहूँगा, बस बदले में तुम मेरा एक काम कर दो।''

''कौन सा काम?''

''मैं एक चिट्ठी दूँगा, तुम उसे भगवान् तक पहुँचा देना।''

''पर कैसे?''

''जब तुम जहाज से ऊपर जाना तो वहाँ भगवानजी को दे देना।''

''पर जहाज ऊपर जाकर रुकता थोड़े है!''

''आखिर कभी तो रुकेगा। जब रुकेगा तब उतरकर भगवान् को ढूँढ़कर दे देना, मुझे कोई जल्दी नहीं है।''

सात्त्विक ने सोचा कि यदि यह नहीं मान रहा है तो मेरा क्या जाता है? मैं हाँ कह देता हूँ और बदले में दस दिनों तक आराम से बैटिंग करूँगा। ऐसा बुद्धू अपने आप मिल जाए तो कितना अच्छा है।

सात्त्विक ने कहा, ''ठीक है। तुम चिट्ठी मुझे दे देना। मैं कोशिश करूँगा कि भगवान् तक तुम्हारी चिट्ठी पहुँचा सकूँ, पर तुम्हें अपना वादा याद है न, बॉलिंग आज से ही शुरू करनी होगी।''

परम ने तुरंत कहा, ''ठीक है, ठीक है।'' भगवान् तक चिट्ठी पहुँचाने के बदले दस दिन तक बॉलिंग का सौदा उसे बहुत सस्ता लगा।

परम घर आया, सोचा—कागज निकालकर चिट्ठी लिखी जाए, फिर सोचा, भगवानजी को चिट्ठी लिखनी है, इसलिए कागज रंगीन और सुंदर होना चाहिए। कागज कहाँ से आए, अब तो उसके पास पैसे भी नहीं थे। माँ को वह बताना नहीं चाहता था, पर माँ से पैसे माँगने के अतिरिक्त और कोई दूसरा रास्ता उसे नजर नहीं आ रहा था। उसने माँ से पैसे माँगे। माँ ने पूछा, ''क्यों चाहिए पैसे?''

''चिट्ठी लिखनी है।''

''किसे? कौन है हमारा, जिसे तू चिट्ठी लिखेगा?''

बताना न चाहकर भी उसे माँ को बताना पड़ा, फिर उसने सोचा, बड़ी मुश्किल से यह मौका हाथ लगा है। क्या पता, माँ भी कुछ लिखवाना चाहे, इसलिए उसने माँ को सबकुछ बता दिया। माँ को हँसी आ गई। उसने अपनी साड़ी की गाँठ खोलकर पच्चीस रुपए उसके हाथ पर रख दिए। परम दौड़ता हुआ बाजार गया। रंगीन कागज लाकर फटाफट लिखने बैठ गया।

प्यारे भगवानजी,

नमस्ते।

मैं आपसे मिलने आना चाहता था, पर नहीं आ सका, इसलिए माफी चाहता हूँ। मैं सात्त्विक के हाथ चिट्ठी भेज रहा हूँ। वह मेरा अभी नया-नया दोस्त बना है। बहुत ही अच्छा है, उसका खयाल रखिएगा। अब मैं चिट्ठी में जो भी लिख रहा हूँ, उस पर कृपया ध्यान दीजिएगा, मैं चाहता हूँ कि आप मुझे खूब-खूब-खूब पैसे दें, क्योंकि मुझे पैसों की बहुत जरूरत है। मेरी माँ के हाथ काम करते-करते खुरदुरे हो गए हैं, जब वे मुझे प्यार करती हैं तो उनके हाथ मुझे चुभते हैं। मैं चाहता हूँ कि खूब पैसे आ जाएँ तो माँ घर-घर काम करना बंद कर दे। मैं चाहता हूँ कि मेरी माँ भी अच्छी-अच्छी साड़ी पहने। घर में खूब खाने का हो, ताकि मेरी माँ को कभी भूखे पेट न सोना पड़े और न झूठ बोलना पड़े कि मुझे भूख नहीं है या फिर ये बहाना बनाना पड़े कि मेरा व्रत है। जब भी माँ झूठ बोलती है, उसकी आँखों में आँसू आ जाते हैं और मुझे अपनी माँ को उदास देखना अच्छा नहीं लगता।

जब से मैंने होश सँभाला है, तब से पिता को नहीं देखा। यदि मैं माँ से अपने पापा के बारे में पूछता हूँ तो वह रोने लगती है। मैं चाहता हूँ कि मेरे पास पैसे हों तो मैं पापा खरीद लाऊँ। एक तरफ पापा, दूसरी तरफ माँ को बैठाकर बीच में मैं बैठकर लॉलीपॉप खा सकूँ। पता नहीं, मुझे सात्त्विक जैसा दोस्त मिले या न मिले, इसलिए एक बार में ही थोड़ा ज्यादा पैसे दे देना। मेरे पास घर नहीं है। मुझे घर बनाना है। घर होगा तो हम सुरक्षित सो सकेंगे। माँ को बाहर नल पर नहाने नहीं जाना पड़ेगा, क्योंकि जब माँ नहाती है तब आस-पास के लोगों की निगाहें उधर ही होती हैं, जो मुझे अच्छा नहीं लगता। जब आप पैसे भेज देंगे तो मैं अच्छे स्कूल में पढ़ने जाऊँगा, जहाँ बच्चे पढ़ने आया करते हैं, न कि खेलने। मैं एक बार कार में, ट्रेन में और हवाई जहाज में बैठना चाहता हूँ। जब मेरे पास पैसे हो जाएँगे तो मैं स्वयं आपसे मिलने आऊँगा। पैसे कब, कहाँ और कैसे भेजेंगे, यह किसी और को नहीं बताना, पर मुझे जरूर बता देना।

आपका

परम प्रकाश।

साअ

३११ मिलैनो महागुण मैंशन, फेज-२
इंदिरापुरम्, गाजियाबाद-२०१०१०

कविता

कवि

● ओम् प्रकाश शर्मा 'प्रकाश'

मैं बस्ती में रहूँ,
बाजार में नहीं,
फिर भी मंडी के,
सही-सही भाव कहूँ।

बस्ती बसी रहे,
मस्त रहे
चाहे बाजार पस्त रहे।

लेकिन फिर भी
कवि बस्ती से बाहर रहता है,
उसे खाली जमीन खोजकर
एक नई बस्ती बसानी होती है।

जब वह बस्ती पूरी बस जाती है
तो निकाल दिया जाता है कवि,
वह अकसर बेतुकी बात कहता है।

वह जिद्दी, फिर से
नई बस्ती बसाने की जुगाड़ करता है,
पर कुछ समय बाद वह
फिर निकाल दिया जाता है।

चिर निर्वासित है कवि,
यही उसका मुकद्दर है।

साअ

सी ४ बी/११० (पॉकेट १३),
जनकपुरी, नई दिल्ली-११००५८
दूरभाष : ०११-२५५९८७९९

पाश्चात्य समीक्षकों की दृष्टि में गीतांजलि

● छन्दा बैनर्जी

उन्नीसवीं सदी में सन् १९१३ का वर्ष न केवल भारत के लिए बल्कि पूरे विश्व के लिए आध्यात्मिक-ऐश्वर्य का अभूतपूर्व वर्ष था। इसी वर्ष विश्वसाहित्याकाश में ध्रुवतारा सदृश भारत की पहचान बनी थी, रवींद्रनाथ ठाकुर के लेखनगर्भ से जनमी 'गीतांजलि'।

'गीतांजलि' अर्थात् ईश्वर के प्रति गीतों की अंजलि। गीतांजलि केवल कुछ गीतों अथवा कविताओं का संग्रह मात्र नहीं है बल्कि यह एक महाकाव्य है, जिसके गीतों में जीवन की सार-सच्चाइयाँ छुपी हुई हैं। इसमें आदि से अनंत तक वह शाश्वत संवाद है, जिसका रसास्वादन केवल वही कर सकता है, जो अपने सारे अहंकार को त्यागकर इस ब्रह्मांड के कण-कण से निर्मल-निश्छल प्रेम करने लगता है।

गीतांजलि मूल रूप से सन् १९०९-१० में बांग्ला भाषा में रची गई थी, जिसका प्रकाशन सितंबर १९१० में इंडियन पब्लिशिंग हाऊस, कोलकाता से हुआ था। इसका अंग्रेजी संस्करण, जिसके लिए गुरुदेव को नवंबर १९१३ में 'नोबेल पुरस्कार' तथा विश्व का सर्वश्रेष्ठ कवि 'विश्वकवि' के रूप में सम्मान प्रदान किया गया, का प्रकाशन नवंबर १९१२ में 'इंडिया सोसाइटी ऑफ लंदन' से किया गया था।

रवींद्रनाथ की कालजयी रचना 'गीतांजलि' के अंग्रेजी संस्करण का सफर सन् १९१२ में शुरू हुआ। फरवरी १९१२ में कवि अपनी तीसरी यूरोप यात्रा की तैयारी कर रहे थे। इस यूरोप यात्रा का उद्देश्य था, डेनमार्क की शिक्षण पद्धतियों का अध्ययन कर शांति-निकेतन को लाभ पहुँचाना। रवींद्रनाथ कलकत्ता से १९ मार्च को अपनी विदेश यात्रा पर निकलनेवाले थे, लेकिन रवाना होने के ठीक एक दिन पहले अर्थात् १८ मार्च को वे अत्यंत बीमार पड़ गए। डॉक्टरों की सलाहानुसार उन्हें अपनी इस यात्रा को स्थगित करना पड़ा। विदेश यात्रा के इस अनियोजित स्थगन से कवींद्र को अत्यधिक निराशा हुई। अपनी नैराश्यपूर्ण मानसिक स्थिति से उबरने के साथ ही स्वास्थ्य लाभ के लिए वे अपनी पसंदीदा जगह कलकत्ता के पद्मा नदी के किनारे बसे सियालदह चले गए। यहीं वह पवित्र स्थान है, जहाँ रहकर रवींद्रनाथ ने मूल बांग्ला गीतांजलि के कुछ गीतों का अंग्रेजी में गद्यानुवाद के साथ ही गीतांजलि के अंग्रेजी संस्करण की रचना प्रारंभ की थी। यों कहें कि सॉन्ग ऑफरिंग्स के साथ-साथ नोबल पुरस्कार का सफर भी यहीं से प्रारंभ हुआ था। सियालदह में रवींद्रनाथ के स्वास्थ्य में धीरे-धीरे सुधार हुआ। कुछ समय पश्चात् वे शांति-निकेतन वापस आ गए। शांति-निकेतन में कुछ दिन आराम करने के पश्चात् जब वे विदेश यात्रा करने के योग्य हो गए, तब अपने पुत्र रथींद्रनाथ और पुत्रवधु प्रतिभा के साथ २७ मई, १९१२ को बंबई होते हुए लंदन के लिए रवाना हुए। सौभाग्य से सफर में उनका स्वास्थ्य ठीक था, जिस कारण यात्रा का अनुभव सुखद रहा। सफर के दौरान भी उन्होंने गीतांजलि के कुछ गीतों का अनुवाद किया और आखिरकार १६ जून, १९१२ को वे लंदन पहुँच गए।

१५ अगस्त को जन्म। जीवविज्ञान में स्नातकोत्तर। पं. रविशंकर विश्वविद्यालय से पत्रकारिता एवं जनसंचार में स्वर्ण पदक के साथ स्नातक व स्नातकोत्तर; तत्पश्चात् माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल से पी-एच.डी.। लंदन से नॉवेल प्रकाशित। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन पर कार्यक्रम प्रसारित। हिंदी, अंग्रेजी, बांग्ला, ओड़िया तथा छत्तीसगढ़ी भाषाओं का ज्ञान। संप्रति छत्तीसगढ़ शासन में जनसंपर्क अधिकारी।

लंदन पहुँचकर वे ब्लूम्सबरी के एक होटल में ठहरे थे। लंदन के चेयरिंग क्रॉस से ब्लूम्सबरी तक की दूरी रेल से तय करनी पड़ती है और इस रेलयात्रा के दौरान रवींद्रनाथ के साथ एक छोटी सी दुर्घटना घटी, जो शायद गीतांजलि और नोबल पुरस्कार की पूरी कहानी को ही बदल सकती थी। इस संबंध में रवींद्रनाथ लिखते हैं कि वे कलकत्ता से यूरोप यात्रा के सफर में अपने साथ अन्य सामान के साथ-साथ कागज-पत्रों (लेखन सामग्रियों) का एक बस्ता लेकर चले थे, जिसमें अन्य रचनाओं के साथ अंग्रेजी गीतांजलि की एकमात्र मूल पांडुलिपि भी थी। लंदन के चेयरिंग क्रॉस से ब्लूम्सबरी तक की रेल यात्रा के दौरान कागज-पत्रों का वह बस्ता रेल के डिब्बे में ही छूट गया और यह बात रवींद्रबाबू को दूसरे दिन सबेरे तब मालूम पड़ी, जब उन्हें अपने सब सामान के साथ वह बस्ता दिखाई नहीं दिया। वे तुरंत रेलवे स्टेशन गए, जहाँ उनका बस्ता 'खोई हुई सामग्री' के कार्यालय में मिल गया, तब उन्हें बड़ी राहत मिली। लंदन पहुँचते ही कवि ने प्रसिद्ध अंग्रेज चित्रकार विलियम रोथेंस्टाइन से मिलने की इच्छा प्रकट की। यहाँ सर रोथेंस्टाइन का उल्लेख करना आवश्यक है, जिन्होंने यूरोप में रवींद्रनाथ की प्रसिद्धि में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। सर रोथेंस्टाइन १९१० में भारत (कलकत्ता) आए थे। अपने कलकत्ता प्रवास के दौरान वे दो प्रसिद्ध भारतीय चित्रकार अवनींद्रनाथ व गगनेंद्रनाथ ठाकुर के बारे में जानकारी मिलने पर उनसे मुलाकात करने ठाकुर परिवार के पुश्तैनी हवेली 'जोड़ासांको' गए थे। यहीं रोथेंस्टाइन ने पहली बार रवींद्रनाथ को देखा था। सर रोथेंस्टाइन लिखते हैं, 'जब-जब

मैं कलाकार भाइयों से मिलने उनके घर जोड़ासांको गया, हर बार उनके चाचा रवींद्रनाथ को देखकर अभिभूत हुआ। सफेद धोती-कुरता और शॉल में सुशोभित उनके आकर्षक व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना मैं रह न सका। दरअसल, मैंने पाया कि एक सुदर्शन व्यक्तित्व के साथ-साथ उनमें एक आंतरिक कांति भी थी। एक चित्रकार होने के नाते मैंने उनसे उनका चित्र (स्केच) बनाने की अनुमति माँगी और अपनी पेंसिल से उनका वही रूप-सौंदर्य आँकने की कोशिश की। उस समय उन ठाकुर बंधुओं (अवनींद्र व गगनेंद्र) में से किसी ने भी मुझे यह नहीं बताया कि उनके चाचा-रवींद्रनाथ अपने समय के असाधारण व्यक्तियों में से एक हैं।

लंदन वापस लौटने के कुछ समय पश्चात् 'मॉडर्न रिव्यू' में प्रकाशित रवींद्रनाथ की एक कहानी का अंग्रेजी अनुवाद पढ़कर रोथेंस्टाइन अत्यधिक प्रभावित हुए और 'मॉडर्न रिव्यू' के संपादक श्री रामानंद चट्टोपाध्याय को पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने रवींद्रनाथ की अन्य कृतियों के अंग्रेजी अनुवादों के विषय में जानने की इच्छा प्रकट की। रामानंद चट्टोपाध्याय ने उस पत्र को शांति-निकेतन भेज दिया। उस पत्र के जवाब में शांति-निकेतन की ओर से रवींद्रनाथ की कुछ कविताओं का अंग्रेजी अनुवाद, जो कि रवींद्रनाथ के एक सहयोगी श्री अजीत चक्रवर्ती ने किया था, रोथेंस्टाइन को भेज दिया गया था। रवींद्रनाथ को यह बात पता थी कि उनकी कृतियों, विशेषकर कविताओं में रोथेंस्टाइन की गहरी रुचि थी, यही कारण है कि लंदन पहुँचकर रवींद्रनाथ ने सबसे पहले सर रोथेंस्टाइन से मुलाकात की। इस मुलाकात से सर रोथेंस्टाइन को भी बड़ी प्रसन्नता हुई। फिर यह सिलसिला चल पड़ा और दोनों प्राय: मिलते रहे। इन मुलाकातों के दौरान रोथेंस्टाइन के आग्रह पर रवींद्रनाथ ने अपनी सॉन्ग ऑफरिंग्स की मूल पांडुलिपि उन्हें सौंप दी।

मूल पांडुलिपि पाकर रोथेंस्टाइन इतने अधिक उत्साहित हुए कि उनसे रहा नहीं गया और बिना विलंब किए उन्होंने कविताओं की पूरी पुस्तिका कुछ ही घंटों में पढ़ डाली। रोथेंस्टाइन लिखते हैं, 'मैंने उसी शाम सारी कविताएँ पढ़ लीं, यह कुछ अलग व नए प्रकार की काव्य-रचनाएँ हैं, जो महान् रहस्यवादियों के स्तर की हैं।' रोथेंस्टाइन ने उन कविताओं को कई बार पढ़ने के बाद अपनी साहित्य-मंडली के कुछ मित्रों को भी पढ़ने के लिए दिया। उनके एक मित्र 'एंड्रयूज ब्रैडले' ने इसे पढ़ने के बाद कहा, 'लगता है हमारे बीच कोई महान् कवि आ पहुँचा है।' गीतांजलि के कुछ गद्यानुवाद को रोथेंस्टाइन ने अपने एक आयरिश मित्र कवि व नाट्ककार विलियम बटलर यीट्स को भी पढ़ने के लिए भेजा। उल्लेखनीय है कि विलियम बटलर यीट्स को भी बाद में साहित्य के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए 'नोबल पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। यीट्स ने जब रोथेंस्टाइन द्वारा भेजी गई उन कविताओं को पढ़ा, तब वे भी मंत्र मुग्ध हो गए। और फिर वे लंदन आकर गीतांजलि की सारी कविताएँ पुन: बड़े ध्यान से पढ़ने के बाद कहीं-कहीं पर सुधार के कुछ सुझाव भी दिए। यीट्स द्वारा रवींद्रनाथ की कविताओं की बहुत सराहना की गई, जिससे रोथेंस्टाइन अत्यधिक प्रोत्साहित हुए और ३० जून, १९१२ रविवार की शाम को हैंपस्टीड स्थित अपने घर पर एक कवि-गोष्ठी का आयोजन किया। जहाँ यीट्स ने स्वयं अपनी संगीतमय आवाज में सॉन्ग ऑफरिंग्स की कविताएँ पढ़कर सुनाईं। इस विशिष्ट संगोष्ठी के श्रोता समुदाय में एल्विन अंडर हिल, अरनेस्ट रेज, श्रीमती मेसिनक्लेयर, फॉक्स स्ट्रेनरवेज, हेनरी नेविन्सन, एजरा पाउंड, एलिस मैनेल, चार्ल्स ट्रेवेलियन आदि विद्वान् उपस्थित थे। चार्ल्स फीअर एंड्रूज और उनके मित्र पियर्सन भी उन दिनों लंदन में ही थे और वे भी उस कवि-गोष्ठी में सम्मिलित होने के लिए मि. रोथेंस्टाइन के घर पर पहुँचे।

यीट्स ने रवींद्रनाथ की प्रशंसा इन शब्दों में की, ''आज यहाँ रवींद्रनाथ के सम्मान में भाग लेना मेरे साहित्यिक जीवन की सबसे बड़ी घटना है। मैं ऐसे किसी कवि को नहीं जानता, जिसने अंग्रेजी में ऐसे सुंदर गीत लिखे हों। मेरे पास इनके गीतों का अंग्रेजी में किए गए सारे मूल गद्यानुवाद रखे हैं। मैं जब भी उन गीतों को पढ़ता हूँ, तब-तब इनके भाषागत और भावगत सौंदर्य पर मुग्ध हो जाता हूँ। मि. टैगोर प्रकृति के परम-प्रेमी हैं। उनकी कविताएँ हृदय के मार्मिक स्पर्श से परिपूर्ण हैं।''

रवींद्रनाथ पहली बार सी.एफ. एंड्रूज से मि. रोथेंस्टाइन के घर पर ही मिले, जो बाद में आजीवन उनके मित्र बने रहे। सी.एफ. एंड्रूज ने उस अविस्मरणीय शाम के बारे में 'मॉडर्न रिव्यू' के अगस्त १९१२ के अंक में 'एन इवनिंग विद रवींद्रनाथ' शीर्षक के अंतर्गत कुछ इस प्रकार लिखा है, ''उस शाम मि. रोथेंस्टाइन के घर से लौटते समय मैं अपने एक मित्र एच.डब्ल्यू. नेविन्सन के साथ हैंपस्टीड हीथ के किनारे से चला आ रहा था। नेविन्सन को विदा करने के बाद मैं कुछ पल अकेला रहना चाह रहा था। कवि यीट्स द्वारा पढ़े गए रवींद्रनाथ की उन कविताओं के भाव-रहस्य के उत्कर्ष पर पहुँचने की कोशिश कर रहा था।'' कविता का पाठ करते-करते कवि यीट्स 'मृत्यु विषयक' एक कविता के कुछ अंश की व्याख्या करते हुए भावविभोर हो उठे थे, जो इस प्रकार है—I have loved life so much why should I not love death even more. ''उस रात आसमान बिल्कुल साफ नीलाभ लिये हुए उन कविताओं में चित्रित भारतीय परिवेश जैसा ही था और तब उस शांत वातावरण में मैं बिल्कुल अकेला उन कविताओं के भाव-विचारों में खोया हुआ था।'' उस शाम रोथेंस्टाइन के घर पर गीतांजलि के गीतों से प्रभावित होकर श्रीमती मेसिनक्लेयर ने रवींद्रनाथ को एक पत्र लिखा, ''पता नहीं मैं इन गीतों को फिर कभी सुन पाऊँगी या नहीं, पर जब तक मैं जीऊँगी तब तक अपने दिल और दिमाग पर छाए हुए उन गीतों के प्रभाव को कभी भी भूल नहीं पाऊँगी।'' इस प्रकार वहाँ उपस्थित प्राय: सभी कलामर्मज्ञों की सम्मति थी कि रवींद्रनाथ की कविताओं के शब्दों में जितना माधुर्य

है, उतनी ही स्वाभाविकता भी है। यही कारण है कि उनके गीत सीधे आत्मा को स्पर्श करते हैं।

रवींद्रनाथ के सम्मानार्थ १० जुलाई, १९१२ को लंदन के ट्रोकेडेरो रेस्तराँ में एक भोज का आयोजन किया गया, जहाँ कई कलामर्मज्ञों की उपस्थिति में सभापति का आसन आयरिश कवि यीट्स सुशोभित कर रहे थे। यीट्स ने रवींद्रनाथ की प्रशंसा इन शब्दों में की, ''आज यहाँ रवींद्रनाथ के सम्मान में भाग लेना मेरे साहित्यिक जीवन की सबसे बड़ी घटना है। मैं ऐसे किसी कवि को नहीं जानता, जिसने अंग्रेजी में ऐसे सुंदर गीत लिखे हों। मेरे पास इनके गीतों का अंग्रेजी में किए गए सारे मूल गद्यानुवाद रखे हैं। मैं जब भी उन गीतों को पढ़ता हूँ, तब-तब इनके भाषागत और भावगत सौंदर्य पर मुग्ध हो जाता हूँ। मि. टैगोर प्रकृति के परम-प्रेमी हैं। उनकी कविताएँ हृदय के मार्मिक स्पर्श से परिपूर्ण हैं।'' प्रसिद्ध कवि डब्ल्यू.बी. यीट्स ने न केवल उन गोष्ठियों में रवींद्रनाथ की कविताओं का पाठ करके वहाँ उपस्थित कलाप्रेमियों, विद्वानों को गुरुदेव की लेखन प्रतिभा से परिचय कराया बल्कि उन्होंने गीतांजलि के अंग्रेजी संस्करण सॉन्ग ऑफरिंग्स की भूमिका भी लिखी, जिसमें उन्होंने लिखा है, "I know no men in my times who have done anything in English language to equal Tagore lyrics." कवि यीट्स ने इसकी प्रस्तावना में यह भी लिखा है, "These prose translation from Ravindranath Tagore have stirred my blood as nothing has for years."

इस प्रकार कवि यीट्स ने जहाँ सॉन्ग ऑफरिंग्स की भूमिका लिखी, वहीं रोथेंस्टाइन ने इस संग्रह के लिए एक स्केच तैयार किया और फिर इन दोनों कलामर्मज्ञों के प्रयासों से नवंबर १९१२ में इंडिया सोसायटी ऑफ लंदन से इसका प्रकाशन किया गया। पहली बार इसकी ७५० प्रतियाँ छापी गईं, जो केवल इंडिया सोसाइटी के सदस्यों के लिए थीं। बाद में लंदन के ही 'जार्ज मैकमिलन' ने भी 'गीतांजलि' का एक स्पेशल संस्करण प्रकाशित किया। अक्तूबर १९१२ में रवींद्रनाथ लंदन से संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए रवाना हुए, जहाँ वे अपने पुत्र के आग्रह पर कुछ महीनों के लिए 'उरबाना' में ठहरे थे। नवंबर १९१२ में जब गीतांजलि का 'इंडिया सोसाइटी' वाला संस्करण लंदन से प्रकाशित हुआ, तब रवींद्रनाथ 'इलिनॉय' में थे। इस संस्करण के प्रकाशित होते ही गीतांजलि के गीतों की जगह-जगह खूब सराहना होने लगी और फिर संसार की लगभग सभी भाषाओं में गीतांजलि का अनुवाद हुआ।

ब्रिटिश पत्रों ने गीतांजलि का भव्य स्वागत किया। 'टाइम्स लिटरेरी सप्लीमेंट' ने लिखा था, ''इन कविताओं को पढ़कर हमें लगता है, मानो हम अपने युग के किसी 'डेविड' के गीत पढ़ रहे हैं।'' इस समाचार का उल्लेख करते हुए रोथेंस्टाइन ने रवींद्रनाथ को एक पत्र लिखा, जिसके जवाब में रवींद्रनाथ ने १९ नवंबर, १९१२ को उरबाना से रोथेंस्टाइन को लिखते हैं, ''आपके पत्र के माध्यम से यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि 'टाइम्स लिटरेरी सप्लीमेंट' में मेरी काव्य-संग्रह की प्रशंसापूर्ण समीक्षा प्रकाशित हुई। सच कहूँ तो गीतांजलि की सफलता का सारा श्रेय आपको जाता है। मैंने तो सपने में भी नहीं सोचा था कि मेरे द्वारा किए गए ये गद्यानुवाद किसी काम के भी हो सकते हैं। गीतांजलि के गीतों के संबंध में आपकी धारणा सही निकली। इन कविताओं पर साहित्य के विशेषज्ञों व पारखियों का समर्थन पाकर आपके द्वारा किया गया परिश्रम और भी सार्थक हो गया। अब तो आपको अपने इस मित्र पर और भी गर्व हुआ होगा। जो भी हो, आपके प्रोत्साहन के बिना यह कभी भी संभव ही न था।''

उरबाना में रहने के दौरान एक भारतीय श्री बसंत कुमार राय रवींद्रनाथ से मिलने पहुँचे और उनसे आग्रह किया कि वे अपनी कुछ और रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद कर प्रकाशित करवाएँ। मि. राय ने जो महसूस किया, वह उन्होंने कहा भी था कि कविताओं के लिए कभी-न-कभी आपको 'नोबल पुरस्कार' अवश्य मिलेगा। अभी तक भारत अथवा एशिया के किसी भी साहित्यकार को यह पुरस्कार नहीं मिला है। इस पर रवींद्रनाथ ने मि. राय से बड़े ही भोलेपन के साथ पूछा, ''क्या कभी किसी एशियावासी को यह पुरस्कार मिल सकता है?'' गुरुदेव का यह प्रश्न कटु सत्य था, क्योंकि जब उन्हें यह पुरस्कार दिया गया, तब पश्चिम के अनेक देशों से यह सवाल उठाया गया कि 'नोबल पुरस्कार' किसी एशियावासी को कैसे मिल सकता है? कनाडा में टोरंटो के एक पत्र 'द ग्लोब' ने लिखा था, ''यह पहला अवसर है, जब 'नोबल पुरस्कार' किसी ऐसे व्यक्ति को दिया गया, जो गोरा नहीं है।'' ग्रेट ब्रिटेन और भारत दोनों ही जगह काफी आलोचना भी हुई। आलोचकों को यह विश्वास नहीं था कि रवींद्रनाथ इतनी अच्छी अंग्रेजी लिख सकते हैं। गीतांजलि की सारी सफलता का श्रेय डब्ल्यू.बी. यीट्स को दिया जा रहा था, लेकिन सच तो यह है कि यीट्स ने गीतांजलि की कविताओं को कहीं-कहीं केवल सुधार के सुझाव दिए थे, मूल ग्रंथ तो वैसा ही प्रकाशित हुआ जैसा कि रवींद्रनाथ ने अपने हाथ से लिखा था।

गीतांजलि का अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित होने के लगभग महीने भर पश्चात् तत्कालीन प्रसिद्ध समीक्षक 'एजरा पाउंड' ने लिखा था, ''गीतांजलि के प्रकाशन के पूर्व एक बार मैं कवि यीट्स के घर गया था। मैंने पाया कि वे किसी महान् कवि के आगमन से अत्यधिक उत्साहित थे। वे, जो समकालीन कवियों में किसी से भी महान् थे, मैं अपनी बात कहाँ से शुरू करूँ, समझ नहीं आ रहा है, क्योंकि रवींद्रनाथ की कविताओं को पढ़ने के बाद ऐसा लगा, जैसे हमने अचानक अपना एक नया यूनान पा लिया, ठीक वैसे ही जैसे यूरोप के पुनर्जागरण से पहले के दिनों में देखा जा सकता था।'' उन दिनों अर्थात् गीतांजलि के अंग्रेजी संस्करण के प्रकाशन के बाद रवींद्रनाथ जहाँ भी जाते, कलामर्मज्ञ उनके सम्मानार्थ पलकें बिछा देते। उनकी प्रसिद्धि अटलांटिक महासागर के उस पार तक जा पहुँची थी। 'स्केंडिनेबिया' जैसे सुदूर देशों में भी गुरुदेव के इस प्रगीतात्मक गद्य का गहरा प्रभाव देखा गया। विख्यात उपन्यासकार 'हाल्डौर लैक्सनैस' (उल्लेखनीय है कि इन्हें भी बाद में नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ है) ने उस प्रभाव का स्मरण करते हुए लिखा है, ''गीतांजलि को पढ़ने के बाद उनके गीतों की भावानुभूति और सौंदर्य-चेतना की अभिव्यक्ति

से परिपूर्ण एक आंतरिक लय मेरे दिल की गहराई में उतर गई, तब से मैं प्राय: अपने मन की गहनतम वीथियों में उसकी उपस्थिति का अनुभव करता हूँ। पश्चिमी देशों की भाँति मेरे देश में भी गीतांजलि के सौरभ ने एक ऐसी आध्यात्मिक-संदेशात्मक लहर पैदा कर दी, जो हमने पहले कभी भी न देखी और न सुनी थी।''

जनवरी १९१३ में गुरुदेव शिकागो पहुँचे। उनसे पहले उनकी ख्याति वहाँ पहुँच गई थी। शिकागो की 'पोयट्री' पत्रिका के दिसंबर १९१३ के अंक में गीतांजलि की छह कविताएँ प्रकाशित हुई थीं। विदेश में रवींद्रनाथ की कविताएँ प्रकाशित करनेवाली यह पहली पत्रिका थी। शिकागो में गुरुदेव 'मिसेज व्हॉन भूडी' के घर पर ठहरे थे। यहाँ के विश्वविद्यालय में 'भारत की प्राचीन सभ्यता' पर भाषण दिया। इस प्रकार अमेरिका में रवींद्रनाथ के सम्मानार्थ आयोजित विभिन्न सभाओं में उन्होंने 'भारतीय अध्यात्म तथा दर्शन' पर व्याख्यान प्रस्तुत किया। गीतांजलि के प्रकाशन व उनकी ओजस्वी व्याख्यान-माला से प्रभावित अमेरिका के कलामर्मज्ञ रवींद्रनाथ की एक झलक पाने को उत्सुक थे। इन्ही दिनों रोचेस्टर में 'जातियों की कांग्रेस' का अधिवेशन हो रहा था। रवींद्रनाथ वहाँ भी अतिथि के रूप में आमंत्रित किए गए, जहाँ उन्होंने 'शांति संघर्ष' पर व्याख्यान प्रस्तुत किया। यहाँ उनकी मुलाकात 'रूडोल्फ यूकेन' से हुई, जो इस कॉन्फ्रेंस में भाग लेने के लिए जर्मनी से आए हुए थे। मि. यूकेन भी रवींद्रनाथ से मिलने के लिए आतुर थे, क्योंकि गीतांजलि पढ़ने के बाद वे भी गुरुदेव के प्रशंसक बन चुके थे। इस व्याख्यान-माला से हुई लोकख्याति के पश्चात् आत्मीय निमंत्रण पाकर गुरुदेव 'बोस्टन' पहुँचे, जहाँ प्रसिद्ध विद्वानों की एक सभा में उन्होंने 'प्राचीन भारत के आदर्शों' पर अत्यंत प्रभावशाली भाषण दिया। इसके पश्चात् १० मार्च, १९१३ को रवींद्रनाथ हावर्ड विश्वविद्यालय में अपने व्याख्यान के साथ सादर आमंत्रित किए गए, जहाँ उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी। अप्रैल १९१३ में रवींद्रनाथ अमेरिका से लंदन वापस लौट आए और वहाँ के 'कैक्सटन हॉल' में उन्होंने एक ओजपूर्ण व्याख्यान प्रस्तुत किया। लगभग एक वर्ष पूर्व जून १९१२ को जब रवींद्रनाथ कलकत्ता से लंदन आए थे, तब वे लंदनवासियों के लिए एक अति साधारण व अनजान व्यक्ति थे, लेकिन इस एक वर्ष के अंतराल में गीतांजलि (Song Offerings) के प्रकाशन के बाद वे एक चिरपरिचित कवि व विराट् व्यक्तित्व वाले साहित्यकार बन गए थे। रवींद्रनाथ को एक अपरिचित देश में अनजान लोगों से जो स्नेह, सम्मान और अपनापन मिला, उसे उन्होंने गीतांजलि के गीतों के माध्यम से कुछ इस प्रकार व्यक्त किया था—

हे प्रभु! कितने अनजानों से परिचित कराया तुमने
कितने घरों में दिया स्थान
दूर को किया करीब, बंधु
पराए को बनाया भाई।

जुलाई १९१३ में गुरुदेव की शारीरिक अस्वस्थता के कारण उन्हें लंदन के एक नर्सिंग होम में भरती कराया गया, जहाँ उनका ऑपरेशन हुआ। सितंबर १९१३ में स्वास्थ्य लाभ और यश दोनों अर्जित करके रवींद्रनाथ अपने घर (कोलकाता) के लिए रवाना हो गए। रोथेंस्टाइन के अनुसार, 'इंग्लैंड और अमेरिका' में गुरुदेव की बेशुमार ख्याति अर्जित होने पर 'फॉक्स स्ट्रेंगवेज' चाहते थे कि ऑक्सफोर्ड या कैंब्रिज रवींद्रनाथ को ऑनरेरी डिग्री प्रदान करे। इंग्लैंड ने गुरुदेव के साहित्य में योगदान की 'प्रथम प्रबल स्वीकृति' प्रदान करने का जिम्मा स्वीडन पर छोड़ दिया था। स्वीडिश एकेडमी के विशिष्ट सदस्य 'एंडर्स ऑस्टरलिंग' ने प्रामाणिक ब्योरा दिया है कि गीतांजलि के लिए 'नोबल पुरस्कार' की चयन समिति को रवींद्रनाथ के नाम का प्रथम औपचारिक प्रस्ताव अंग्रेज कवि 'स्टर्ज मुर' ने भेजा था।

कनाडा में टोरंटो के एक पत्र 'द ग्लोब' ने लिखा था, ''यह पहला अवसर है, जब 'नोबल पुरस्कार' किसी ऐसे व्यक्ति को दिया गया, जो गोरा नहीं है।'' ग्रेट ब्रिटेन और भारत दोनों ही जगह काफी आलोचना भी हुई। आलोचकों को यह विश्वास नहीं था कि रवींद्रनाथ इतनी अच्छी अंग्रेजी लिख सकते हैं। गीतांजलि की सारी सफलता का श्रेय डब्ल्यू.बी. यीट्स को दिया जा रहा था, लेकिन सच तो यह है कि यीट्स ने गीतांजलि की कविताओं को कहीं-कहीं केवल सुधार के सुझाव दिए थे, मूल ग्रंथ तो वैसा ही प्रकाशित हुआ जैसा कि रवींद्रनाथ ने अपने हाथ से लिखा था।

'मुर' ने स्वीडिश एकेडमी की 'नोबल पुरस्कार' समिति को पत्र लिखा था—

महोदय,

यूनाइटेड किंगडम की रॉयल सोसायटी के सम्मान्य फेलो होने के नाते मुझे इस बात का गर्व है कि मैं एक सुयोग्य साहित्यकार/कवि-रवींद्रनाथ टैगोर का नाम प्रस्तावित करता हूँ और मेरे विचार से इनकी श्रेष्ठ कृति 'गीतांजलि' के लिए इन्हें 'नोबल पुरस्कार' से सम्मानित किया जा सकता है।

—टी. स्टर्ज मुर

'नोबल पुरस्कार' समिति के दो सदस्यों 'पेर हॉलस्ट्राम' और 'बर्नर वॉन हाइडेन स्टॉम' के तर्कसंगत समर्थन से गुरुदेव को 'नोबल पुरस्कार' देने का निर्णय लिया गया था। पेर हॉलस्ट्राम नोबल पुरस्कार समिति के सुयोग्य सदस्य सचिव थे, जिन्होंने नोबल समिति को अपने कार्यालय प्रतिवेदन में लिखा, ''गीतांजलि के असाधारण काव्य-सौंदर्य के बारे में कोई मिथ्या धारणा नहीं है। अपनी अभिव्यक्ति में यह क्लासिकल सहजता लिये हुए है। इसमें निहित बिंब-विचार पूर्ण एवं स्वत:स्फूर्त भाषा के साथ विद्यमान हैं। इन्हें किसी आकारगत ढाँचे की जरूरत नहीं है, क्योंकि शब्दों के उल्लेख मात्र से इन्हें पूर्णता प्राप्त हो गई है।'' वॉन हाइडेन स्टॉम समिति के एक विद्वान् व्यक्ति थे, इन्हें भी कालांतर में 'नोबल

पुरस्कार' प्राप्त हुआ। हाइडेन स्टॉम ने गीतांजलि के संबंध में लिखा है, ''जब मैंने गीतांजलि के गीत पढ़े, तब मैं अंदर से हिल गया और मुझे याद नहीं कि पिछले दो दशकों में मैंने ऐसी कोई प्रगीतात्मक रचना पढ़ी हो। इन गीतों के पढ़ने से मुझे अत्यंत आनंद प्राप्त हुआ है। कवि के विचार में शुचिता, उनकी शैली में स्वाभाविक गरिमा, हृदय की निर्मलता से एक सर्वांग सुंदर रचना की सृष्टि हुई, जो अद्‌भुत, असाधारण व आध्यात्मिक भाव-सौंदर्य से परिपूर्ण है। गीतांजलि एक निर्मल काव्य-संग्रह है। अंतत: हमें महान् स्तर का एक आदर्श कवि मिल गया है, और शायद दीर्घ समय तक हमें यह गौरव प्राप्त रहेगा कि हमने एक महान् व्यक्ति का नाम खोज निकाला है।''

हाइडेन स्टॉम ने गीतांजलि के संबंध में लिखा है, ''जब मैंने गीतांजलि के गीत पढ़े, तब मैं अंदर से हिल गया और मुझे याद नहीं कि पिछले दो दशकों में मैंने ऐसी कोई प्रगीतात्मक रचना पढ़ी हो। इन गीतों के पढ़ने से मुझे अत्यंत आनंद प्राप्त हुआ है। कवि के विचार में शुचिता, उनकी शैली में स्वाभाविक गरिमा, हृदय की निर्मलता से एक सर्वांग सुंदर रचना की सृष्टि हुई, जो अद्‌भुत, असाधारण व आध्यात्मिक भाव-सौंदर्य से परिपूर्ण है।

अंग्रेजी के तत्कालीन प्राय: सभी समीक्षकों ने यह विचार प्रकट किया था कि ''हम सबने सचमुच एक युगांतकारी घटना का साक्षात्कार किया है।'' बल्कि कुछ विद्वानों का तो यहाँ तक मानना था कि यदि साहित्य के क्षेत्र में 'नोबल पुरस्कार' से भी बड़ा कोई पुरस्कार होता तो वह भी गीतांजलि के लिए 'गुरुदेव' को प्रदान किया जाना चाहिए था। दरअसल, गीतांजलि के गीतों की वास्तविकता तो यह है कि इन्हें पढ़ते या सुनते हुए ऐसा महसूस होता है, जैसे यह किसी कवि के द्वारा रची हुई मात्र कविताएँ ही नहीं हैं, बल्कि साधारण जनों के अंतर्मन से निकले हुए उद्‌गार हैं। अंतत: सितंबर १९१३ में गुरुदेव अपनी यूरोप यात्रा पूरी करके भारत के लिए रवाना हो गए और ६ अक्तूबर, १९१३ को वे शांति-निकेतन पहुँचे। शांति-निकेतन पहुँचने के लगभग सवा महीने पश्चात् १३ नवंबर, १९१३ को लंदन से रूटर द्वारा भेजा गया एक समाचार कलकत्ता के प्रमुख समाचार-पत्र 'दैनिक स्टेट्समैन' में इस प्रकार छपा—

रवींद्रनाथ टैगोर को 'नोबल पुरस्कार' दिया गया।

लंदन १३ नवंबर, १९१३

यह समाचार छपते ही संपूर्ण देश में खुशी की लहर दौड़ गई। आखिर क्यों न हो, सदियों से गुलामी की जंजीरों में जकड़ी भारत माता के इस सपूत ने सारे संसार को न केवल मानवता का पाठ पढ़ाया बल्कि मंत्रमुग्ध भी कर दिया। इस प्रकार १९१३ में गीतांजलि की गीतों के माध्यम से गुरुदेव ने विश्व-मानव को मानवता का जो अद्‌भुत संदेश दिया, शताब्दी पश्चात् आज भी उसकी प्रासंगिकता वैसी ही बनी हुई है, और आगे भी जब तक मानव-सभ्यता जीवित रहेगी, तब तक यह महाकाव्य, मानव-सभ्यता और संस्कृति के लिए प्रेरणास्रोत बना रहेगा।

रायपुर (छ.ग.)
इ-मेल : dr.banerjeechhanda15@gmail.com

दुखड़े बदलते रहते हैं

गजल

● जहीर कुरेशी

: एक :

पीले पत्ते बदलते रहते हैं,
पेड़ कपड़े बदलते रहते हैं!

दु:ख की पीड़ा कभी नहीं बदली,
सिर्फ दुखड़े बदलते रहते हैं।

जिंदगी की मरीचिकाओं में,
लोग सपने बदलते रहते हैं।

अपना चेहरा बदल न पाए जो,
वो मुखौटे बदलते रहते हैं।

घर के अंदर भी एक-दूजे से,
लोग झगड़े बदलते रहते हैं।

आज भी दोस्तों की महफिल में,
बस लतीफे बदलते रहते हैं।

नीला आकाश तो वही है मगर,
हाँ, परिंदे बदलते रहते हैं।

: दो :

अनुभवों से सजा के छोड़ दिया,
जिंदगी ने थका के छोड़ दिया!

मैं तो तैयार था सजा के लिए,
उसने किस्सा सुना के छोड़ दिया।

गीत गाने का वक्त था लेकिन,
गीत को गुनगुना के छोड़ दिया।

यह तो अपमान है समर्पण का,
उसने नजदीक आ के छोड़ दिया!

रोशनी का किया नहीं उपयोग,
सिर्फ दीपक जला के छोड़ दिया।

सात पुश्तें भी खा न पाएँगी,
उसने इतना कमा के छोड़ दिया।

एक अनजान आदमी ने मुझे,
मुख्यधारा में ला के छोड़ दिया।

१०८, त्रिलोचन टावर,
संगम सिनेमा के सामने,
गुरुबक्श की तलैया,
पो.ऑ. जी.पी.ओ.,
भोपाल-४६२००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५७९०५६५

कहानी

उधार का सुख

● शशिभूषण सिंहल

रहमत रिक्शा खींचता दक्षिण दिल्ली की उस शानदार इमारत के आगे न जाने क्यों थोड़ी देर के लिए अनायास ही ठहर गया। रिक्शे में सवारी नहीं थी, फुरसत में था। दिन छिपने जा रहा था, हल्का अँधेरा हो चला था। अभी सड़क पर लगे खंभों में प्रकाश नहीं जगा था। झुटपुटा उसे पीछे ले गया। यह आप्टे मैडम का मकान है। तड़के ही उनकी कार की सफाई-धुलाई करने पहुँच जाता था। घर की घंटी बजाकर मैडम को बुला, उनसे कार की चाबी ले, उसकी भीतर की सफाई कर उन्हें चाबी लौटाता। फिर कार को धोता-पोंछता। विशेष बात यह थी कि मैडम उससे प्यार से बोलती थीं। खाने की कोई सामग्री, कभी बिस्कुट का पैकेट या कोई फल उसे जरूर देतीं। यह काम निपटा, वह अन्य लोगों की कारों की सफाई के लिए आगे बढ़ जाता। दिन भर मैडम का वह प्यार उसके मन को छूता रहता।

अब वह विपन्नता के उन दिनों से बाहर निकल आया है। रिक्शा खरीद लिया है, चलाता है। उससे इतना कमाया है कि एक झोंपड़ी बना ली। शादी कर ली, दो बच्चे हैं। जमाना हुआ। पता नहीं अब मैडम हैं या नहीं, हैं तो किस हाल में। वह मजदूरी भी औरों से ज्यादा देती थीं और उनकी आँखों में जो प्यार रहता था, वह आज भी भुला नहीं पाया है। उसने हल्का निश्श्वास छोड़ा और आगे बढ़ने के लिए पैडल पर जोर लगाया।

झुटपुटे में उसे जो दिखा, कहीं उसकी आँखों का भ्रम तो नहीं। उसको छड़ी टिकाए एक नारी आकृति लड़खड़ाती घर के दरवाजे से बाहर आती दिखी। कौन है यह? वह रिक्शे से उतरकर उधर बढ़ा और आँखें मलीं, ''अरे मैडम!'' सीढ़ी चढ़कर उसने लीला आप्टे का हाथ जा पकड़ा और उन्हें सहारा देकर नीचे सड़क पर ले आया। बोला, ''मैडम, आपने पहचाना नहीं, मैं हूँ आपका रहमत!'' लीला ने आँखें सिकोड़ उसे पहचाना। उसका हाथ प्यार से थामकर कहा, ''बेटा रहमत।'' रहमत सोच रहा था कि माजरा क्या है। लीला ने केवल इतना कहा, ''जल्दी करो, मुझे यहाँ से निकालो, वे आ न जाएँ।'' सोचने-समझने का समय नहीं था। वह इतना जान पाया कि मैडम किसी मुसीबत में हैं। उसने सहारा देकर उन्हें रिक्शे में बैठाया और आगे बढ़ गया। उन्हें अपने घर ले आया।

घर छोटा था। दो कमरे तथा अन्य सुविधाएँ। रहमत ने मैम को खाट पर बिठाया। अलग ले जाकर पत्नी, मेहरून्निसा का मैम से संक्षिप्त परिचय दिया और पानी तथा चाय लाने को कहा। वह समझ गया था कि मैम किसी परेशानी में हैं। उनसे ज्यादा पूछताछ करने का अवसर नहीं, सो उन्हें आराम देना चाहिए।

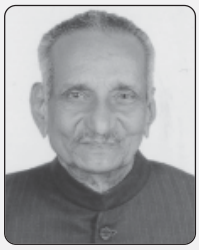

समीक्षक एवं उपन्यासकार। 'संचयन' *(निबंध-संग्रह)*; 'और, कुछ और', 'परतें और परछाइयाँ', 'नई दिशाएँ', 'घर अपना-अपना' *(पुरस्कृत)*; 'सार-निस्सार', 'बहती जीवनधारा', 'युगद्रष्टा शिवाजी' *(उपन्यास)* तथा 'जरा, खिड़की खोलो' *(कहानी-संग्रह)* चर्चित। 'विद्याभूषण', 'विशेष साहित्य सेवी सम्मान' एवं अन्य कई सम्मान।

लीला आप्टे ने चाय के बाद कुछ खाया और निश्चिंतता की साँस ली। रात गहरी नींद में गुजारी। सुबह उठकर तैयारी के बाद उससे अनुरोध किया, ''बेटा, मुझे रेवतीशरण के पास पहुँचा दो। मेरा पुराना विद्यार्थी रहा है।'' और उसका पता बताया। रहमत ने अपना उस दिन का काम मुल्तवी किया और लीला मैम की सेवा में लग गया। लीला ने लाचारी जताई, ''मैं हड़बड़ी में पर्स घर छोड़ आई। किराए के लिए इस समय मेरे पास एक पैसा भी नहीं।'' जवाब में रहमत ने गद्‌गद भाव से दाँतों के बीच जीभ दबाई, ''मैम! आपका दिया मेरे पास सबकुछ है। चिंता न करें।''

रेवती तैयार होकर ऑफिस जाने के लिए निकल ही रहा था कि उसने रिक्शे से उतरकर, छड़ी टेकते मैडम आप्टे को देखा। उसने लपककर मैम के पैर छुए और हाथ पकड़ उन्हें घर के ड्राइंग-रूम में ले आया। उनके साथ रहमत बना रहा। आव-भगत के बाद उसने पहले अपना हाल सुनाया। इस दिनों वह सीनियर इनकम टैक्स इंस्पेक्टर है। सुविधाजनक मकान बना लिया। घर में पत्नी है और दो बेटियाँ हैं।

रेवती जानता था कि लीला आप्टे एक जमाने में विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान विभाग में नामी प्रोफेसर थीं। उनके भव्य व्यक्तित्व और अध्यापन शैली की चर्चा थी। रेवती उनका प्रिय विद्यार्थी रहा था। लीलाजी के पति नीलकंठ आप्टे उच्च आई.ए.एस. अधिकारी थे। वे सेवानिवृत्त होकर प्रसिद्ध पत्रकार बने। उनके लेख प्रायः छपते रहते थे। अभाग्य यह रहा कि उनके कोई संतान नहीं थी। फिर भी दोनों सुखी और संतुष्ट थे। नीलकंठ नहीं रहे। वह बड़ा शानदार मकान बना गए। पैंसठ वर्ष पढ़ाकर लीला रिटायर हो गईं। उस मकान में रहती थीं। इतना ही संपर्क रहा। आगे क्या हुआ, मालूम नहीं! आज इन्होंने स्वयं दर्शन दिए, इस रूप में।

अब ये सत्तासी वर्ष की हैं। देखने में विपन्न, बदहवास सी?

रेवतीशरण ने फोन कर उस दिन की छुट्टी ली और मैम की रामकहानी सुनने बैठ गया। रहमत भी साथ ही था। लीला आप्टे ने जो अपनी व्यथा-कथा कही, उसके चित्र उन दोनों की आँखों में इस प्रकार खिंचने लगे।

पति के जाने के बाद अकेली लीला घर में रह गईं। मकान आज बीसियों करोड़ की जायदाद है। साथ में दो सेविकाएँ थीं। वे उनके सुख-साधन की व्यवस्था देखती थीं। लीला को अपनी सेवाओं के उपलक्ष्य में पेंशन मिलती थी। साथ ही उन्हें विधवा के रूप में भी पति की पेंशन प्राप्त थी। लीला को जीवन में अकेलापन सालता रहा। कई बार सोचा कि पति-पत्नी को समय रहते कोई अल्पायु का बच्चा गोद ले लेना चाहिए था। यह समस्या तब न होती। पर बीत गई सो बात गई। अब कुछ नहीं हो सकता। बीतते समय के साथ उनकी अशक्तता बढ़ती गई। पुराने सामाजिक संबंध क्षीण हो चले। मिलने-जुलनेवाले लोग धीरे-धीरे आने बंद हो गए। दुनिया अपने काम-धंधों में व्यस्त है। किसे फुरसत है, किसी से मिलने और उसका हाल पूछने की। लीला ने जिनकी नियुक्तियाँ कर उन्हें उपकृत किया था, वे भी उन्हें भूल गए। कोई क्यों जाए उनसे मिलने, उसे क्या मिलनेवाला है। लीला की आँखों में बीते समय के दृश्य आते-जाते रहते थे और बरबस वे ठंडा निश्श्वास लेतीं।

अंतिम मुगल शहंशाह बहादुरशाह 'जफर' की जीवनगाथा से परिचित थीं। जफर ढलते वैभव के दिनों में सोचा करते थे कि काहे के शहंशाह, उनका शासन लाल किले और पास लगे यमुनातट तक सीमित था। एक जमींदार से भी बदतर। फिर १८५७ का गदर आया, उसे स्वतंत्रता-युद्ध कह लें। उस भँवर में चाहे-अनचाहे ऐसे जा उलझे कि लेने-के-देने पड़ गए। अंग्रेज लौट आए, और उन्हें देश-निकाला देकर बर्मा मरने भेज दिया। अपने अंतिम दिनों की हताशा में उन्होंने कारावास की दीवार पर कोयले से गजल की ये पंक्तियाँ लिखीं। वास्तव में यह उनकी मजार पर लिखे जाने की वसीयत थी—

पढ़ने फ़ातिहा कोई आए क्यों—
कोई चार फूल चढ़ाने आए क्यों;
कोई आके शमा जलाए क्यों,
मैं वह बेकसी का मजार हूँ।
कितना है बदनसीब ज़फ़र दफ़्न के लिए;
दो गज ज़मीं भी न मिली कूए यार में।

लोग कहते हैं कि अपने जमाने के बड़े शायरों जौक और मिर्जा गालिब के आगे वे साधारण शायर थे। अपनी समझ में वे भी बड़े शायर थे। हताशा में निकली यह आह बेजोड़ शायरी का नमूना है।

लीला प्राय: खाली क्षणों में इस गजल को गुनगुनाकर मन समझा लेती थी। दिन पलटे। एक व्यक्ति उनसे मिला—सुरेंद्र भटनागर। अपना परिचय दिया, इन दिनों वह दिल्ली राज्य का एडीशनल पुलिस कमिश्नर है। पहले उत्तर प्रदेश सरकार का इलाहाबाद स्थित इंस्पेक्टर जनरल पुलिस था। उसकी पत्नी है और जवान बेटा है। फिलहाल वे सरकारी बँगले में रहते हैं। वह लीलाजी की प्रसिद्धि से अवगत है। उनके प्रति श्रद्धाभाव रखता है। उनकी सेवा करने का अवसर चाहता है। यदि वे अनुमति दें तो उनके घर सपरिवार आ बसेगा। उन्हें किसी प्रकार के अभाव का अनुभव न होने देगा। नेकी और पूछ-पूछ; लीला के मन में आया, इससे बढ़कर क्या! कुछ दिनों बाद सुरेंद्र भटनागर मय अपने सामान-सट्टे के लीला आंटी के विशाल निवास में आ बसा। साथ में आई उसकी पत्नी ललिता और बेटा संयोग। संयोग हाल ही में अमेरिका से ऊँची डिग्री लेकर भारत आया था। किसी बड़े संस्थान में अच्छे पद पर उसकी नियुक्ति की संभावना थी। पिता के उच्च पद और रुतबे के कारण वह कहीं भी स्वागत योग्य था। सुरेंद्र ने लीला की सारी जिम्मेदारियाँ सँभाल लीं। घर की देख-रेख, उसकी व्यवस्था, बाहर के आवश्यक काम-काज, सभी के लिए वह जिम्मेदार। इनकम टैक्स, हाउस टैक्स, बिजली-पानी का भुगतान आदि सारे कार्यों के लिए लीला को चिंता करने की जरूरत नहीं थी। सारे काम चुटकियों में कराने के लिए माहिर सुरेंद्र। उसका अपने पद के कारण कुछ भी करा पाना कठिन नहीं।

उधर ललिता ने रसोई सँभाली। अपनी देख-रेख में तरह-तरह के व्यंजन बनवाने आरंभ किए। सेविकाओं को नियंत्रण में किया। अब घर की मालकिन मैडम लीला नहीं, उनकी 'पुत्रवधु' ललिता थी। ललिता के मीठे बोल। हरदम माँजी के पास लगी रहती। कभी अखबार पढ़कर सुनाना। गप-शप और भाँति-भाँति के अनुभवों का बखान। लीला की बातें कान लगाकर सुनती। बुजुर्गों के पास बीते युग और बीती घटनाओं की स्मृतियों की अक्षय धरोहर रहती है। वह जानती है। उन्हें छेड़कर सुनती और उनपर कभी आश्चर्य व्यक्त करती और कभी ठठाकर हँसती और ताली पीटती। लीला को मनचाही सहेली मिल गई।

संयोग प्राय: दादी के पास आ जाता। कभी ताश खेलता, गप्पें लगाता और कभी अमेरिका में बीते दिनों के दिलचस्प किस्से सुनाता। बाहर के काम-काज से फुरसत पाकर सुरेंद्र पास आ बैठता। छुट्टी के दिन चारों दूर निकल जाते या कहीं पिकनिक कर लेते। लीला को घर में जो रौनक और आत्मीयता मिली, उसने मानो पुराने एकाकीपन और उदासी को कुछ ही महीनों में झाड़ फेंका। जीवन में ऐसी सजीवता लीला को अपने कार्यकाल और पति के संग-साथ भी अनुभव नहीं हो पाई थी। संतान पाने का अपना सुख है। उसे आदमी ढलती आयु में ही समझ पाता है। लीला को अनायास ही बेटा मिल गया, बहू मिली, पोता मिला। सब सुख मिल गए। उसने अपने भाग्य को सराहा। ये लोग अब तक कहाँ थे?

एक दिन मालूम हुआ कि सुरेंद्र का तबादला बिहार की राजधानी पटना हो गया है। वहाँ वह इंस्पेक्टर जनरल पुलिस रूप में नियुक्त हुआ है। मन उसका लीला आंटी के पास छूट रहा है। आता-जाता रहेगा। परिवार नहीं ले जा रहा है। प्रयत्न करेगा कि दिल्ली लौट आए। अंतत: रिटायर होकर उसे दिल्ली ही बसना है।

वह गाँव में जनमा और पला था। वहाँ लौटकर जाने से रहा। वहाँ गाँव में माता-पिता तो हैं नहीं, उनके जीते तक उधर आकर्षण था। अब भाई-बंधु हैं, बेहद मतलबी। जब मिलेंगे, रोते-झींकते, मदद माँगते। पढ़े

भी ढंग से नहीं। खेती-किसानी में लगे हैं। कहते हैं कि कुछ बचता नहीं। अरे भाई, नहीं बचता तो बाहर निकलो। मेहनत-मजदूरी करो। मेरे पीछे क्यों लगे हो, मेरे पास कौन कारूँ का खजाना है। सरकारी नौकरी करता हूँ। खा-पीकर बचता क्या है। आखिरकार मुझे अपना स्टैंडर्ड भी कायम रखना है। उनकी शक्ल भी देखने को जी नहीं चाहता। अब गाँव जाकर क्या करूँगा। आज आजादी के इतने अरसे बाद भी गाँव का हाल ज्यों-का-त्यों है। उतने ही पिछड़े लोग और उनमें है उतनी ही धनासक्ति।

खैर, सुरेंद्र ने बेमन से पटना जाकर नया पदभार सँभाला। उसके पद का अपना प्रभाव समाज में था, किंतु ज्यों ही उसे कोई छुट्टी मिलती, दिल्ली का रास्ता पकड़ लेता। अपने नायब को उसने सधा-सिखा लिया था, वह अपने ऑफिसर की अनुपस्थिति में स्थिति को सँभाले रहता था। साथ ही उसका अपना महत्त्व भी महकमे में बढ़ता था। सुरेंद्र इधर आकर लीलाजी के सब काम सँभाल लेता। कहता, 'माँ, आपके पास आने को जी हुड़कता रहता है। वहाँ क्या रखा है, नौकरी छोड़ते भी नहीं बनती।' लीला द्रवित हो समझाती, 'बेटा! चिंता नहीं, मैं यहाँ ठीक हूँ। नौकरी, नौकरी है। उसका कार्यकाल ध्यान से पूरा करो। मेरी देख-भाल बहू ध्यानपूर्वक कर रही है। रिटायर होकर तुम्हें यहाँ आना ही है।'

एक दिन ललिता ने माँजी के जन्मदिन का उत्सव बड़े उत्साह से मनाया। विशेष रुचि का भोजन बनवाया। लीला के बरजने पर ध्यान न देकर उसने सुरेंद्र को इस अवसर पर पटना से बुलाया। सारा परिवार इकट्ठा हो गया। साथ ही सुरेंद्र के अनेक अंतरंग दिल्ली के पुलिस ऑफिसर भी दोपहर के भोजन पर निमंत्रित किए गए। बहुत रंग-बिरंगा कार्यक्रम रहा। उसकी धूम दिन के तीसरे पहर तक चलती रही। लीला ने इस आयु में भी नई स्फूर्ति का अनुभव किया। थक गई थी, किंतु सुरेंद्र और परिवार की चहल-पहल एवं खुशनुमा बातों में ऐसी रमी कि देर रात तक ही सो पाई।

अगले दिन मालूम हुआ कि सुरेंद्र पटना से पूरे एक सप्ताह की छुट्टी लेकर आया है। उस दिन एकांत में ललिता ने लीला माँजी से मंत्रणा की। बताया कि सुरेंद्र को रिटायर होने में अभी पाँच वर्ष हैं। फिर तो वह यहीं आ बसेगा। पुलिस महकमे की नौकरी है। अभी तो सभी मुँहदेखी बात करते हैं। कल रिटायर होने पर जिन लोगों की ज्यादतियों को अधिकारी रूप में उसने रोका-टोका है, वे बदला लेने से नहीं चूकेंगे। ऐसे उसने अनेक उदाहरणों का सविस्तार हवाला दिया। यह सब सुन लीला भी चिंता में पड़ गई। आखिर होना क्या चाहिए।

लीला को चिंतामुक्त करने के लिए ललिता ने प्यार भरा सुझाव रखा। कहा, 'माँजी, आप सौ बरस जिएँ। हम लोग आपकी सेवा में ही हैं। कहा ही गया है, सामान सौ बरस का, कल की खबर नहीं।' लीला ने हामी भरी, 'कल की क्यों, कहो, पल की खबर नहीं। मेरे साथ के कई प्रोफेसर कब के दुनिया छोड़ गए। मेरा भी क्या ठिकाना है। आगे, तुम ही लोगों को देखना है।'

लीला को ललिता ने सुझाया, 'माँजी, हमें कल भी देखना है। आपके बाद हमारे साथ कुछ भी हो सकता है। हमारी यहाँ क्या हैसियत होगी, समझ नहीं पड़ता। अनेक दावेदार आ खड़े होंगे, और हमें घर से बाहर निकाल देंगे।' यह कल्पना भी लीला को असह्य थी। वह असमंजस में थी कि करे तो क्या? ललिता ने उसे उलझन से निकाला, 'माँजी, अगर आपकी वसीयत हमारे पास होगी तो कोई भी खाँ हो, हमारा बाल बाँका नहीं कर पाएगा। बस, आपका आशीर्वाद चाहिए।' लीला को बात जँची। बोली, 'मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ है। वसीयत करा लो।'

उससे अगले दिन सुरेंद्र भटनागर ने तत्परतापूर्वक कानूनी सलाह के मुताबिक वसीयतनामा तैयार करा लिया। दो विश्वसनीय गवाह भी जुटा लिये। लीला आप्टे ने खुशी-खुशी वसीयतनामे पर हस्ताक्षर कर दिए। रजिस्ट्रार कार्यालय में जाकर शेष काररवाई पूरी कर ली गई। संध्या को वहाँ से घर लौटकर सुरेंद्र ने निश्चिंतता की साँस लेकर कहा, 'एक यज्ञ संपन्न हुआ।'

अब सुरेंद्र ने धीरे-धीरे अपना असली रूप दिखाया। उसने सोचा कि इस बुढ़िया ने बहुत मेहनत कराई, परेशान किया। इससे छुटकारा मिलना चाहिए। यह चल बसे तो सबकुछ अपना ही अपना। यह अपना होना ही चाहिए। इसमें देर कैसी, अड़चन क्या? उन लोगों ने धीरे से लीला को नीचे की मंजिल के कमरे के एक कोने में खाट बिछाकर लिटा दिया और बोलचाल बिल्कुल बंद। उसे मरने के लिए छोड़ दिया। खाने-पीने का नौकरानी से साधारण प्रबंध कर दिया।

लीला ने लंबी उम्र पाई। प्राण निकाले नहीं निकलते थे। आयु सत्तासी वर्ष की हो गई। कामचलाऊ चल-फिर लेती थी। कुछ खा लिया, लेकिन अवहेलना और अत्याचार ने प्राण साँसत में डाल दिए। करे क्या? कोई उपाय नहीं। जो है, भोगना पड़ेगा। ऐसा कटु अनुभव जीवन में पहली बार हुआ। एक संध्या सुरेंद्र परिवार कहीं गया हुआ था। नौकरानी भी छुट्टी कर गई थी। अपने हाल पर सोचते-विचारते लीला को लगा कि दम घुट रहा है। यहाँ पड़े रहकर भी क्या होगा। निकलो, यहाँ से। बाहर की खुली हवा में साँस लो। शायद छुटकारे का कोई सहारा मिल जाए। बाहर निकलने पर रहमत मिल गया।

लीला की व्यथा-कथा सुनकर रेवतीशरण और रहमत दोनों इस विडंबना पर स्तब्ध रह गए। विचार होने लगा, किया क्या जाए। रेवती ने कहा, ''मैम, हम लोग हैं छोटे लोग। सुरेंद्र पुलिस में है। उसका प्रशासन में ऊपर से नीचे तक दबदबा है। उसके लंबे हाथ हैं। बच-बचाकर आत्मरक्षा करनी होगी। आपको आपका हक भी दिलाना है। आप यहीं सुरक्षित व आराम से रहें। मैं अपने कई पुराने सहपाठियों के संपर्क में हूँ। उनसे सलाह करके कोई राह निकालता हूँ।''

रेवतीशरण ने शीघ्र अपने साथियों को एकत्र कर समस्या सुनाई। वे सब मैडम से मिलकर प्रसन्न हुए। उन्हें दिलासा दी। तय हुआ कि मैडम को गोपनीय रीति से यहीं रखा जाए। आजकल जन-संगठन और मीडिया का जमाना है। उसका सहारा लिया जाए। उन लोगों ने सत्तासी वर्षीय दुबली-पतली, निरीह लीला आप्टे का खाट पर बेसहारा पड़े रूप में चित्र खिंचवाया और कुछ मीडियाकर्मियों से संपर्क साधकर टी.वी. पर संक्षिप्त वृत्तांत देकर दिखवाना आरंभ कर दिया। वह फोटो समाचार-पत्रों में छपने लगे। दिल्ली के समाज में जैसे करुणा की लहर आ गई। कौन दुर्जन इस अबला को सता रहा है?

खबर मिलने पर सुरेंद्र के कान खड़े हुए। उसने वसीयत का सहारा लिया। सबको धत्ता बताया। उधर लीला के समर्थकों ने वरिष्ठ नागरिक के रूप में उसकी ओर से निचली अदालत में अर्जी लगा दी। अर्जी पर काररवाई हुई। अदालत ने एक जिम्मेदार अधिकारी को इलाहाबाद भेजा। वह खबर लाया। विवेक पहले वहाँ उच्च पद पर आसीन था। वहाँ इसी प्रकार एक वरिष्ठ महिला के साथ उसने यही कहानी रची थी। वह प्रोफेसर थी, विधवा थी, निस्संतान थी। उनका बेटा बनकर, उनकी मृत्यु हो जाने पर उनकी जमीन-जायदाद सब हड़प ली। पूरी रकम जेब में की। अब यही खेल उसने दिल्ली में दोहराया है।

यह सुनकर निचली अदालत आश्वस्त हो गई। सुरेंद्र पुराना दुष्ट है। उसने लीला और सुरेंद्र का बयान लिये बिना फैसला किया। सुरेंद्र लीला का मकान खाली करके उसका ताला और चाबी लीला के हवाले करे। तुरंत ऐसा न हुआ तो उस पर गंभीर काररवाई होगी।

सुरेंद्र निडर था। उसने वसीयतनामा सँभाला और हाई कोर्ट में अपील की कि उसके साथ निचली अदालत आँख मूँदे अत्याचार कर रही है। उसकी सुनी जाए। हाईकोर्ट में मामले की सुनवाई हुई।

हाईकोर्ट का बड़ा कमरा। उसमें ऊपर टँगे पंखे धीरे-धीरे सभी को हवा दे रहे थे। ऊँचे प्लेटफार्म पर जज साहब की कुरसी। उस पर वे विराजमान थे। सामने मेज पर फैले कागज-पत्र, घंटी और कुछ सामान। सामने लकड़ी का बड़ा स्टैंड, जिसके बाईं और दाहिने गवाहों के लिए कठघरे। जज की मुखमुद्रा गहन, गंभीर। नीचे अदालत में बैठे वकीलों और बैठनेवालों की बहुत सी कुरसियाँ। चारों ओर खुला रास्ता। जज ने संकेत किया, मुकदमा पेश किया जाए। सुरेंद्र ने बाईं ओर स्टैंड पर खड़े होकर शपथ ली और मकान पर अपना दावा पेश किया। तस्दीक के लिए असली वसीयतनामा प्रस्तुत किया, साथ ही निवेदन किया कि निचली अदालत ने उसके साथ सरासर अन्याय किया है। उसकी एक नहीं सुनी गई। एकतरफा फैसला कर दिया कि वह अपने जायज मकान को तुरंत खाली कर दे, ताला-चाबी लीला आप्टे को सौंप दे। उसकी फरियाद सुनी जाए।

अदालत ने कागजात देखे और कहा कि ठीक है, निचली अदालत ने बिना सोचे-समझे फैसला कर दिया है। उसे लीला आप्टे का बयान लेना चाहिए था तथा साथ ही सुरेंद्र भटनागर की बात सुननी चाहिए थी। ठीक नहीं हुआ। जो हुआ, सो हुआ। अब मामले की पूरी सुनवाई होगी। सुरेंद्र संतुष्ट हुआ। स्टैंड से उतर आया।

जज के संकेत पर लीला आप्टे को दाहिने स्टैंड पर बुलाया गया। वह लड़खड़ाती हुई, छड़ी टेकती, दो लोगों का सहारा लिये वहाँ तक पहुँची। उसकी निरीह मुद्रा को जज ने गहराई से देखा। जज ने बिना औपचारिकता के लीला से सीधा प्रश्न किया, ''आपने क्या सुरेंद्र भटनागर को अपनी खुशी से मकान की वसीयत की थी?'' लीला ने हाथ जोड़कर उत्तर दिया, ''जी हाँ, यह सही है। मैंने अपनी पूरी रजामंदी से वसीयत की थी। मेरे साथ अच्छा व्यवहार नहीं हुआ। अब मैं अपना मकान वापस लेना चाहती हूँ। इजाजत दी जाए।''

जज ने सुरेंद्र से सीधा प्रश्न किया, ''मकान वापस करने में आपको क्या आपत्ति है?'' इस सीधे प्रश्न का सुरेंद्र को कोई उत्तर नहीं सूझा। वकीलों ने उसे जो सधाया-सिखाया था, वह काम नहीं आया। न ही कोई बहस, न किसी दलील को पेश करने का अवसर मिला। जज भी क्या अनपढ़ों जैसा सवाल कर रहा है। सुना है कि स्वभाव से टेढ़ा है। इससे उलझने से भी क्या होनेवाला है। उलटे, कहीं मेरे ऊपर न पलट पड़े। इस विपदा में घबराहट से एकाएक उसे पसीना आ गया। जवाब नहीं सूझा। दुनिया तमाशा देख रही है। बरबस उसके मुँह से निकला, 'जैसा हुकुम।' जज ने फैसला सुनाया, ''ठीक है। वसीयतनामा मंसूख हुआ। सीनियर सिटीजन को यह करने का पूरा अधिकार है।'' सुरेंद्र मुँह लटकाए स्टैंड से उतर आया।

अब ललिता भटनागर सामने आई। स्टैंड पर खड़े होकर फूट-फूटकर रोने लगी। उसने कभी नहीं सोचा था कि ऐसा दिन देखना पड़ेगा। लीला आप्टे उसकी माँ समान थी। उन्हें खोकर उसे कुछ नहीं चाहिए। जज की मुद्रा गंभीर बनी रही। कहा, ''ठीक है। आप उन्हें मकान का अधिकार सौंप दें। यही अदालत का फैसला है। इसका पालन होना चाहिए।'' ललिता रोती हुई नीचे उतर आई। मुकदमा खत्म।

दर्शकों ने राहत की साँस ली। इसे कहते हैं, 'दूध का दूध पानी का पानी'।

जतन से जोड़ा मकान देखते-ही-देखते यों ही चला गया। सुरेंद्र और ललिता के हाथों के तोते उड़ गए। हाथ मलने के अलावा क्या बचा। ऊपर से भारी बदनामी हाथ आई। मीडियावाले बुरी तरह पीछे लग गए। उनसे पीछा छुड़ाना मुश्किल हो गया। अदालत में उनकी शिकायत की। अदालत ने अनसुना किया। कहा कि यह तो मीडिया का काम है। उसमें उनकी गलती कहाँ। रही बदनामी की बात, पुलिसवालों को इसकी चिंता क्यों? बदनामी तो होती रहती है, होने दो। सुरेंद्र दाँत पीसकर रह गया। बड़ा उलटा खेल हो गया।

मकान तो गया। अपने डेरे पर लौटकर सुरेंद्र ने ललिता को उलाहना दिया, ''तुमको जल्दी पड़ी थी कि बुढ़िया से पीछा छुड़ाओ। उससे बिगाड़ी न होती, और निबाहते रहते तो यह दिन देखने को न मिलता।'' ललिता चिढ़ गई, ''तुमने मुझे कभी टोका नहीं। अब मुझे दोष दे रहे हो। अच्छे रहे। तुम्हीं कहा करते थे, यह अड़ंगा निकलना चाहिए। फिर अपनी पौ बारह है। करोड़ों की संपत्ति दबाए बैठी है और बराबर बेकार

जिए जा रही है।'' सुरेंद्र खीजा, ''मैंने क्या गलत कहा था।''

बेटा संयोग आकर बीच में बोला, ''गलत तो गलत है। आप लोगों ने उसे सही कैसे मान लिया। मकान उसका, घर उसका, संपत्ति उसकी, कब्जा आपका। उसे कुछ दिन सहन करने पर बिगड़ा क्या जा रहा था।'' सुरेंद्र ने बचाव किया, ''बेटे! यह सब मैंने तुम्हारे लिए किया। सब तुम्हें मिलता, तुम ही हमारे वारिस हो।'' संयोग की आँखें फैल गईं। झल्लाकर बोला, ''यह आपको क्या सूझी? आपके पास अपना क्या कम था, वह मुझे मिल जाता। सारे पापड़ आपने मेरे लिए बेले। मेरे नाम पर। मेरे साथ बड़ी ज्यादती की। इस अनाचार का भागी मैं नहीं होना चाहूँगा। मान लीजिए, एक दिन मैं भी बूढ़ा होऊँगा, कोई मेरे साथ ऐसी ज्यादती करे तो आपको कैसे सहन होगा।'' उत्तर में सुरेंद्र अवाक्। क्या जवाब दे। हाथ मलते हुए बोला, ''असफल होने पर तुम मुझे दोष दे लो। मुझे जो ठीक लगा, वह कर गुजरा। क्या उचित है और क्या अनुचित, समझ में नहीं आया।'' संयोग ने स्पष्ट उत्तर दिया, ''स्वार्थवृत्ति ने आपकी आँखें बंद कर दी थीं। अपने अलावा औरों के लिए भी सोचा होता।''

ललिता बीच में आ गई, ''स्वार्थी कौन नहीं। सब अपने-अपने लिए ही करते हैं। परमार्थी किताबों में बंद पड़े हैं, उन्हें कौन पूछता है। हाँ, यह भूल हुई। उसका फल भुगत रहे हैं।'' संयोग ने ठंडी साँस लेकर कहा, ''इसे कहते हैं, घर जोड़ने की माया। अभ्यास कहाँ जाता?''

लीला आप्टे घर आ गईं। तसल्ली से घर खुलवाया। सफाई कराई। काम करनेवालियों को अच्छा वेतन दिया। लीला ने सोचा कि यह व्यवस्था पहले ही थी। धोखा हुआ। उसने उधार का सुख लिया—बेटा, बहू, पोता। सभी मिले। कैसा छलावा! कौन किसका है। दुनिया निपट स्वार्थ की है। उसका असली रूप समझना चाहिए। अब पछतावे के सिवाय कुछ बाकी नहीं। लगता था, शेष जीवन कोने में पड़े दुःख की घड़ियाँ गिनते-गिनते जाएगा। दम घुटता था। ईश्वर ने सहारा दिया। विद्यार्थियों का भला हो, उन बेचारों का। कोई पुराना पुण्य काम आया। अन्यथा मैं उन्हें और वे मुझे कब का भुला चुके थे। बड़ा परिश्रम हुआ। लंबी लड़ाई के बाद घर मिला और उन 'हितैषियों' से पीछा छूटा। जज ने बात सुन ली। आज भी कोर्ट में कहीं न्याय है। नहीं तो मेरा कहाँ ठिकाना था। जान बची और लाखों पाए। हे भगवान्!

लीला ने सोचा, जो स्थिति मिली है, उसमें जीना सीखो। अपने पैरों पर खड़े होकर स्थिति का सामना करो और कोई रास्ता नहीं। जीवन में अकेलापन लिखा है। अकेले रहने का अभ्यास डालो। ईश्वर तुम्हारे साथ है। रही आगे की, आगे वाला जाने। लंबी आयु भी एक प्रकार का भार है। कभी सोचा न था कि मैं इतना जी जाऊँगी और जीवन के अंत में यह सब देखना होगा। जीवन में हम जो नहीं सोचते, वही सामने आता है। जीवन है ही ऐसा। पुराने विद्यार्थियों ने याद रखा। नहीं तो मैं तो बीता कल हूँ। जवानी के दिन गए। तब आगे कुछ समझ में नहीं आता था। लगता था, सब ऐसा ही रहेगा। सब कहाँ रहता है। मात्र एक छलावा। बीतता समय किसी का नहीं होता।

सत्य घटना के आधार पर। हाल ही में समाचार-पत्रों में छपा था। हमारी कहानी की नायिका का ९१ वर्ष की आयु में निधन हुआ।

७२ कपिल विहार, पीतमपुरा
दिल्ली-११००३४
दूरभाष : ०७४२८३३८०९५

कविता

उनकी कविता

● अनुरक्ति चतुर्वेदी

वो कविता कहाँ लिखते हैं
वो तो कागज पर बिखरा देते हैं कोरे शब्द
भावहीन शब्द
और वे शब्द पत्थरों की तरह
बेजान से पड़े रहते हैं
रास्ता रोके
जब हमारे पैर अनचाहे ही
टकरा जाते हैं उनसे
तो लहूलुहान हो जाते हैं
उन पत्थरों से नहीं उपजता कोई गीत
बस होती है केवल अंतर की चीख

नहीं उड़ाती है उन्मुक्त गगन में
वो तो हमें जकड़ती है, घसीटती है
लथेड़ती है
मानो अंग-अंग फटा जाता है
और नीचे से भी नीचे धँसा जाता है।
मन में है निराशा, शब्दों में प्रवाह-हीनता
भाव हैं हारे हुए
तभी तो बार-बार कविजी कहते हैं
देखा आपने मेरा शब्दचित्र।

सी-२१, देवरतन अपार्टमेंट, एच. पार्क,
महानगर विस्तार, लखनऊ-६
दूरभाष : ०९८३७०४७५३७

आलेख

मान-सम्मान की प्रतीक–पाग

● शिवनंदन कपूर

बिना पाग की मिठाई और बिना पाग के जीवन-पथ पर चला राही, बिना पानी की सुराही सा है। आदिम काल से वह आदमी की शान कहें, निशान कहें पाग प्रहार से ही नहीं बचाती, कांता सी सिर सहलाती है। हर ताप में भाती-लुभाती है। सिरदर्द है। कोई दवा असर नहीं कर रही। माथा जैसे पगहा तुड़ाकर भागनेवाला है। उसकी आग से बचने के लिए पाग लीजिए। सिर को और दर्द को भी कसिए। दुश्मन को बाँधना सीखिए। कोई कसर न रहेगी। स्मृति धोखा दे जाती है। उपाय है, पाग की छोर खोल लें। गाँठ बाँध लें, सरकेगी नहीं। ये बेघर से चरवाहे, बिस्तर नहीं। सिर की पगड़ी बिछाकर, राह में पीपल की छाँह में पड़े रहें। पाग का चलन हट गया। लोग कुत्तों को 'टोपी' पहना रहे हैं।

पगड़ी सबका मान रखती है। सिर या माथे में दाग है। पाग बाँध लें। सिर नीचा न होगा। प्रतापी राजा प्रद्योत के मस्तक पर काक-पद या श्वान-पद सा दाग था। जब भी दर्पण में देखता, मुख का तेज फीका पड़ जाता। सूरज सा मुखड़ा खद्योत या जुगनू सा हो जाता। पुराने समय में अपराधी के माथे पर दाग देने का चलन था। अब वह दाग बन गया हो या बनाया गया, अपाय, निरुपाय राजा क्या करे? उसने सोने की पट्टी बनवाई। चिह्न ढक गया। फिर उस पर किरीट धरा तो मुकुट सज गया। किसने ऐसी पट्टी पढ़ाई। ऐसी जादूगरी दिखाई, सोने की पट्टी परत-दर-परत चढ़ कपड़े की पाग सी दिखाई। लोग रवर्ण-पट्टिका भूल गए। कपड़े की पाग की बन आई। अयोध्या में सब मुकुट पहनते थे। पर दास पगड़ी पहनना नहीं भूलते थे। वह उनकी सज्जा में रही और युगों तक चली। 'महाभारत' के अनुसार, दीक्षांत के दिन सैनिक-छात्र पाग पहनकर ही आते थे। बिना पनही और पाग के योद्धा कैसा? शासन, अनुशासन ही नहीं, पाग का रिश्ता आतंक से भी रहा। अंग्रेजों के समय में सिपाही की लाल पगड़ी देखते ही लोगों की हवा सरक जाया करती थी।

पाग भारत में ही नहीं, सर पर सुहाई। अफ्रीका, अफगानिस्तान, श्रीलंका, जमैइका, केन्या तक इसकी झलक दिखाई देगी। तुरेग, सोंधाई जैसी कुछ जातियाँ इसके छोर से चेहरा ढक लेती हैं। कोई आँख में धूल डालनेवाला हो या न हो, पर हवा वहाँ नहीं चूकती। 'किरकिरी' से भी पगड़ी ही बचाती है।

कुर्दिस्तान के निवासी कुर्द जाति या कबीले के अनुसार लाल या सफेद 'जामादानी' में फबते हैं। अफगानी काली या सफेद रंग की पाग अधिक पसंद करते हैं। ब्रिटिश काल में वहाँ लंबी पाग का चलन था। वह संपन्नता की निशानी थी। २०११ में अफगानिस्तान में पाग कुछ समय के लिए खतरे की पहचान बन गई थी। कुछ क्रांतिकारी उसमें बम छिपाकर ले जाने लगे थे। कुछ समय तलाशी का दौर भी चला। सिख भारत तथा बाहर भी पगड़ी पहनते हैं। नानक देवजी तथा अन्य गुरुओं ने भी पगड़ी धारण की। पर इसे विशेष महत्त्व दशम पादशाह गुरु गुरु गोविंदसिंह ने दिया। पहले पंजाब में उच्च वर्ग के लोग सरदार कहलाते थे। वे पाग पहनते। उन्होंने कहा कि कोई छोटा-बड़ा नहीं। सब सरदार हैं। सब यहाँ तक कि नारियाँ भी, चाहें तो पगड़ी पहन सकती हैं। उनका कथन था—मैं सिख की अलग पहचान बनाना चाहता हूँ। पगड़ीवाला सिख लाखों के बीच अलग नजर आएगा। निहंग पाग के आगे 'चाँदतोड़ादुमल्ला' धारण करते हैं। उनकी नीली लंबी पाग पर वह रण-सज्जा के अनुकूल ही है। उसमें धार्मिक प्रतीक वाले शस्त्र भी संयुक्त हैं। १७वीं सदी में कवि अलेक्जेंडर पोप भी पाग पहनता था।

पगड़ी ने सिर ही नहीं बाँधा, मन भी बाँधे। दो मन का बोझ सहज नहीं होता। पाग बदलकर हृदय बाँधा जाता था। एक का दुःख-सुख दूसरा ले लेता था। पर इसकी आड़ में भी धूर्तता रही। नादिरशाह दिल्ली के मुगल बादशाह मुहम्मदशाह से कोहिनूर हथियाना चाहता था। बादशाह ने उस कोहिनूर यानी प्रकाश के पर्वत को पाग में छिपा रखा था। नादिर को खबर लग गई। उसने मेजबान बादशाह से कहा, 'आज से हमारी दोस्ती पुख्ता। इस पर मजबूती की मुहर लगाने के लिए हम पगड़ियाँ बदल लेते हैं।' नादिर के ये शब्द दरबार में गूँजे। बादशाह पर बिजली गिर पड़ी। सबके सामने 'प्रकाश का पर्वत' लुट गया। कोहिनूर पराए हाथों में चला गया। उसके चेहरे पर अँधेरा छा गया था।

पाग की लाज सिर से रही। कहें, सिर से भी ऊपर रही वह। लोग जान दे देते थे, पगड़ी की शान न जाने देते थे। राजस्थान के बामोदा दुर्ग के गढ़पति आलू हाड़ा से एक चारण ने उनकी पाग माँग ली। राजपूत देने का वचन दे चुका था। उसने इतना ही कहा, 'राजपूत की पाग सिर से भी ऊपर रहती है। चारण होने के नाते आप राजपूत की मान-मर्यादा से परिचित हैं। यह हर पल उसके सिर पर ऊँची ही रही। न सिर झुका, न पाग नीची हुई। चारण ने बात गाँठ बाँध ली। मंदौर के अधिपति की सभा में जाने पर पहले उसने पाग उतारी, फिर प्रणाम किया। इसका रहस्य पता लगने पर राजा क्रुद्ध हुआ। उसके आदेश से चारण के सिर से

पाग उतार फेंकी गई। फिर क्या था। युद्ध होना ही था।

यह तो राजस्थान की घटना थी। दूसरी घटना मेवात के जाट राजा सूरजमल से संबद्ध है। दिल्ली के वजीर नजीब खाँ ने रुहेला सरदार मुस्तफी खाँ की मदद से उसे छल से मरवा डाला। रुहेले राजा का पाग सहित सिर उतार ले गए थे। सूरजमल के बेटे जवाहर के राजतिलक की वेला पर माँ हंसाबाई ने कहा, 'बेटा, पाग तो दिल्ली पड़ी है। बिना पगड़ी के कैसे रस्म होगी?' जीवट वाले जवाहर ने दिल्ली पर धावा बोल दिया। साथ में नागा साहब गोसाईं गिरि के त्रिशूलधारी घुड़सवार 'बम-बम' करते चल रहे थे। २५ जनवरी, १७६५ को जवाहर को विजय मिली। तीन मास के साँस रोकनेवाले समर के बाद बेटे ने पाग लाकर माता हंसा के चरणों में रखी। राजतिलक हुआ। माँ ने कहा, 'ऐसे पूत घर-घर हों।' पगड़ी के लिए हुआ वह संघर्ष-साहस भरा तीन मास से अधिक चला था।

उत्तराधिकार के लिए आज भी बड़े पुत्र के सिर पर उत्तरदायित्व और अधिकार के पेंच वाली पाग संबंधियों की उपस्थिति में रखी जाती है। पुरातन काल में पराजित राजा के सिर से प्रतिष्ठा की प्रतीक पाग उतार दी जाती थी। इसी परंपरा के आधार पर पगड़ी उतारना' 'लूटने' और अपदस्थ करने का व्यंजक बन गया था।

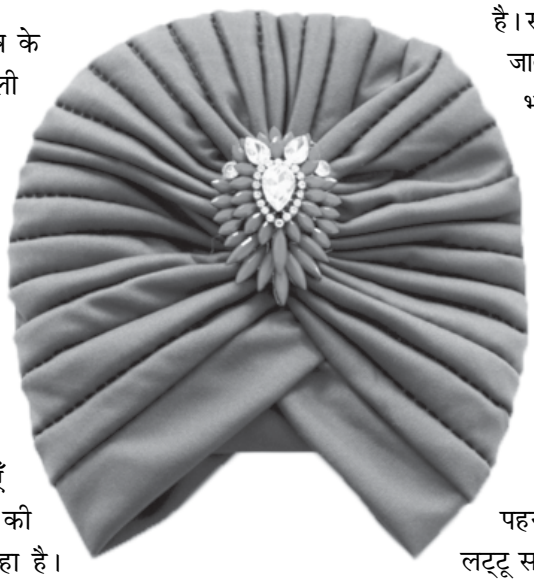

नारियाँ भी पहनती थीं

अवसर पड़ने पर लक्ष्मीबाई ऐसी वीरांगनाओं ने सिर पर शिरस्त्राण के साथ पाग भी रखी है। पुरा काल में पुरुषों के साथ महिलाएँ भी इसे शिरोधार्य करती थीं। 'यजुर्वेद' में गाय की रस्सी को देवराज इंद्र की पत्नी की पाग कहा है। शतपथ ब्राह्मण में शची की पगड़ी का उल्लेख है। राज्यासन पर बैठते समय महारानी भी पगड़ी धारण करती थीं। अथर्ववेद में श्रद्धा का वेश वर्णित है। उसमें भी पाग पहनने का उल्लेख है। जब इंद्रजित् निकुंभिला देवी की साधना कर रहा था, प्रहरी नारियाँ लाल पगड़ी बाँधे पहरा दे रही थीं। (बाल्मीकि रामायण, ६/८०/६ युद्ध कांड)। साँची के चित्रों में भिक्षुणियों का अंकन है। वे ढीली पगड़ियाँ या ऊँचा साफा बाँधे हैं। मथुरा के संग्रहालय में एक प्रहरी नारी की प्रतिमा है। उसके सिर पर लट्टूदार ऊँची पाग है। कुषाण काल में भी नारियाँ सिर ढकने के लिए पगड़ी का प्रयोग करती थीं। उसे जूड़े पर चक्करदार फेंटा बनाकर बाँधती थीं। कभी-कभी शीर्ष-पट्ट पर झब्बा लटकाती थीं। अजंता के भित्ति-चित्रों में भी महिलाएँ पगड़ी से सज्जित हैं। शुंग-काल में नर्तकियों के मस्तक पर भी यह दिखाई देती थी। शेष स्त्रियाँ पट्टियों की पाग बाँधती थीं। पट्टियाँ एक-दूसरे को काटती हुई लपेटी जाती थीं।

'नाट्य शास्त्र' में पुरोहितों के पाग धारण करने का उल्लेख है। यज्ञ के अवसर पर ऋत्विज लाल रंग का उष्णीय पहनते थे। उससे उष्णता शांत रहती थी। मस्तिष्क शीतल रहता था। राजसूय और वाजपेय यज्ञों में राजा को पगड़ी धारण करना अनिवार्य था।

पुरातन ग्रंथों में अनेक प्रकार की पगड़ियों का उल्लेख है। नरपतियों के यहाँ कलात्मक रीति से पाग बाँधनेवाले सेवक होते थे। रईसों के यही इस कार्य के लिए निपुण नापित नियुक्त थे। जातक ग्रंथों में ऐसे कुशल नाइयों की चर्चा है। ईस्वी पूर्व दूसरी शती में दक्षिण भारत की अटपटी, पेंच वाली पगड़ियों का वर्णन है। उससे दायाँ कान ढका रहता था। इसी से पगड़ी का एक नाम 'कर्णवेष्ट' भी पड़ा था।

शुंग एवं सातवाहन काल

शुंग-काल में कामदार पगड़ियों का प्रचलन रहा। उस काल में सिर पर जूड़ा बनाकर तब पाग बाँधते थे। उस काल की पगड़ियों के नमूने भरहुत में प्राप्त हुए हैं, उनमें लट्टूदार साफों की बहार है। साफों पर बुँदकियाँ और पत्तियाँ छापकर सजाया जाता था। बेलें भी बनाई जाती थीं। किसी लट्टूदार भारी साफे पर झालर भी झमकती थी। सादे, झालरदार तथा चौफुलिया साफे भी होते थे। किसी का छोर निकला रहता था। कहीं झालर कानों को ढककर 'कर्णवेष्ट' नाम सार्थक करती। फूल-पत्तियों के अलावा पगड़ियाँ गहनों से सजी रहती थीं। कुछ लंबोतरी और कुछ पंख के आकार में भी हुआ करती थीं। कोई मालाओं से शोभित होती थीं। कुछ की आकृति पान जैसी हुआ करती थी।

सातवाहन काल में नाना प्रकार की पागें पहनी जाती थीं। तीन-चार बार लपेटकर आगे लट्टू सा बना देते थे। कभी एक-दो फेंटे देकर कुछ नीचा बाँधा जाता था। कई इतने महीन कपड़े की पाग बाँधते थे कि उनके केशों की झलक मिलती रहती थी। कभी मोती की लड़ियाँ या गुच्छे सजते। कभी आगे मुकुट सा आकार रचा जाता था।

कुषाण और हर्ष काल में

कुषाण युग में लंबी पट्टी से बनी पाग अधिक पसंद की जाती थी। संपन्न जनों की पाग सोने के काम से झिलमिलाती रहती थी। उन पर गोल शीर्ष-पट्ट ही नहीं, रत्न-जटित कलंगी भी लहराती थी। अमरावती के चित्रों से कुषाणकालीन दक्षिण भारत की पगड़ियों के आकारों का अनुमान होता है। वे दो-तीन फेरों की तथा ढीली-ढाली पहनी जाती थीं। मध्य में धातु का शीर्ष-पट्ट शोभा पाता था। सिरे पर मयूर-पंख के आकार का अलंकार झिलमिलाता था। अमरावती के चित्रों में पान के आकार के अनेक शीर्ष-पट्ट आँखों को आकर्षित करते थे।

गुप्त कालीन साहित्य में पगड़ियों का उल्लेख है। समुद्रगुप्त के सिक्कों पर राजा शीर्ष-पट्टवाली पाग पहने चित्रित हुआ है। अजंता के एक भित्ति-चित्र में बिंबसार की पगड़ी पर सिरपेंच लहराता मोहक लगता

है। समर क्षेत्र में राजकुमार भारी पगड़ियाँ पहना करते थे। सिर की सुरक्षा के लिए यह अपेक्षित भी था। सामान्य जन की दैनिक भूषा धोती, दुपट्टा और पगड़ी थी। उस युग में अनेक यूनानी भी राज-सेवा में थे। उन विदेशियों को भी पाग पहने दर्शित किया गया है। संभवत: वेष की अनिवार्य नियम बाध्यता से वे विवश हुए होंगे। उनकी पगड़ियाँ धारीदार हैं। हर्ष के राज्य-काल में सैनिकों की पाग फूलों से सजी हुई थीं। संपन्न जन पारदर्शी वसन की पगड़ी के बीच में स्वस्तिक-ग्रंथि या लट्टू की सज्जा रखते थे।

मुगल युग की सज्जा में भी जामा, पाजामा के साथ पाग साथ निभाती थी। सामंतों की पगड़ियों में सोने के फूल नजर आते थे। सुगंध न हो, पर सामान्य जन के लोचनों को लुभाते थे। बादशाह के सिर पर भी पगड़ी रहती थी। देवताओं की भी पगड़ीधारी प्रतिमाएँ तथा चित्र प्राप्त हुए हैं। ग्वालियर में उदयगिरि के अंतर्गत प्राप्त वराह के चित्र पर पाग शोभित है। स्थापत्य, गुफाओं के चित्रों और मूर्तियों में पगड़ियों के अनेक प्रकार दिखाई देते हैं। साँची में शंखाकार पगड़ियाँ उरेही गई हैं। कहीं शंखाकार लट्टू हैं, कहीं कई फेरों में बँधी पगड़ी पर अलंकार सजे हैं तो कहीं वे कमल या बेलन के आकार में अलग रंग जमा रही हैं। राजा की माला-मनका से सजी गुंबदनुमा पाग भी नजर आती है। ध्वज-वाहक तीन फेरों वाली पाग पहनते थे। द्वारपालों की पगड़ियाँ भी मोती-मनकों से सजी हैं। गांधार-कला में चमकदार लट्टूवाली तथा तिकोने आभूषणों से सज्जित पगड़ियाँ भी मिली हैं। अमरावती में पंख से सजी पगड़ियाँ भी दिखाई देंगी।

अकबर की पाग पर राजपुती प्रभाव था! शिवाजी की ऊँची कलगी वाली पाग अलग शान लिये है। मराठों, मारवाड़ियों, सिंधियों, जाटों; सबकी अलग पहचान पाग के निशान से है। समय पर बच्चों को भी 'पगिया' बाँधी जाती है। फैशन के आतंक में नई पीढ़ी ने उसके चरणों पर पाग रख दी। सरकार का माथा नंगा हो गया है। रुहेलों ने जाट-सरदार सूरजमल का सिर ही नहीं काटा, पाग भी ले गए। सिर रखी गई, पर दिल्ली उल्टी। दस्तारबंदी आज भी हिंदुओं, मुसलिमों में चल रही। यह मित्रता की प्रतीक भी रही। नादिरशाह के हाथ लूट से बचाने के लिए मोहम्मद शाह ने कोहिनूर हीरा पगड़ी में छिपा लिया। नादिरशाह को यह ज्ञात हो गया। उसने मित्रता का बहाना कर उससे पाग के बदले हीरा हथिया लिया।

कपूर क्लीनिक, भगतसिंह चौक,
कहारवाड़ी, खंडवा-४५०००१ (म.प्र.)

लघुकथा

सीख

● **अनीता प्रभाकर**

सुबह से ही भाग-दौड़ करके, दोनों बच्चों को स्कूल भेजकर सीमा बैठी ही थी कि फोन बज उठा। छोटी बहन दिशा का फोन था। उसके पति सुमित की अचानक तबीयत खराब हो गई है, वह उसे ले जा रही है। घर पर दोनों बच्चे अकेले हैं। अत: वह एक-दो दिन के लिए उसके पास आ जाए। बहन के घर पर कोई बड़ा न होने के कारण सीमा तुरंत ही जाने की तैयारी करने लगी। दिशा इसी शहर में रहती है पर उसके घर बस द्वारा पहुँचने में लगभग दो घंटे लग जाते हैं। सासू माँ ने कहा कि बेटा अकेली जा रही हो और आजकल समय बहुत खराब है, इसलिए सोने की चीजें उतारकर रख जाना। उसने चेन, चूड़ियाँ और अँगूठियाँ उतारकर अलमारी में ताला लगाकर रख दीं। चलते समय पति ने भी सीख दे डाली कि अकेली जा रही हो, अपना पर्स सँभालकर रखना। थोड़े पैसे बाहर रखो और बाकी कपड़ों की तह में रख लेना। आजकल बहुत लूट मची है पहली बार अकेली जा रही हो। अत: सावधान रहना और हाँ, बस में भी अपना बैग अपने पैरों के पास ही रखना। इस प्रकार बड़ों की सीख का पालन करते हुए वह अपनी बहन के घर दो दिन रही। अस्पताल से सुमित को छुट्टी मिलते ही वह अपने घर के लिए चल दी। संध्या होने चली थी और बस स्टैंड घर से थोड़ी दूर ही था। अत: वह पैदल चल पड़ी। अचानक एक कार उसके पास आकर रुकी और उसे खींचकर गाड़ी में बैठा लिया। उसे चिल्लाने का भी अवसर नहीं मिल पाया। एक घंटे पश्चात् ही झुटपुटे में उसे उसी स्टैंड से कुछ दूरी पर उतारकर चली गई। बड़ों की सीख के अनुसार, वह सभी बहुमूल्य वस्तुएँ घर छोड़ गई थी, पर वह लुटी-पिटी सी खड़े-खड़े रोते हुए सोच रही थी कि ईश्वर प्रदत्त यह नारी तन कौन से ताले में बंद करके जाती।

क्यू-४३, नवीन शाहदरा
दिल्ली
दूरभाष : ०११-२२८२८८५७

कहानी

एक सच स्त्री और स्त्री का

● दया दीक्षित

कमलकांत रस्तोगी तब करनाल में प्राइवेट कंपनी के इंजीनियर थे, जब उनकी तीन बेटियों में से सबसे छोटी बेटी आग से बुरी तरह से जल गई थी, लगभग नब्बे प्रतिशत। उसे कानपुर के मेडिकल कॉलेज में इलाज के लिए ले जाया गया था। स्थिति अत्यंत शोचनीय और गंभीर थी। टेलीग्राम द्वारा कमलकांत को खबर कर दी गई। यह बीती सदी के नब्बे के दशक की बात है। मोबाइल तब थे ही कहाँ। चार दिन बाद जब कमलकांत कानपुर आए, तब तक उनकी बेटी रचना अंतिम साँसें ले रही थी। इस बीच पूरे मोहल्ले ने तन-मन-धन से रस्तोगी परिवार का साथ दिया था। किसी ने दवा, किसी ने फल-फूल, किसी ने खाने-पीने को, तो किसी ने उनके घर की सुरक्षा का जिम्मा ले बेटियों की देखभाल की। यह जितना व्यवहार था, सब रस्तोगिन ने कमाया था। वे व्यावहारिक और मिलनसार तथा मेहनती थीं। एम.ए., बी.एड. रस्तोगिन से नामालूम क्यों रस्तोगीजी की कभी बनी नहीं। कमलकांत अभियंता थे, यंत्रों के साथ-साथ रहते स्वयं भी यंत्र बन गए थे, दूसरों को भी यंत्र से बढ़कर नहीं देखते थे। संवेदना जैसी वस्तु उनके लिए स्वप्नवत् ही थी। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण रचना की आपबीती पर सबने देखा और मन-ही-मन उन्हें भरपूर कोसा। चूँकि बिटिया की आज-कल वाली हालत थी, सो दोनों ओर के सब रिश्ते-नातेदारों की आमद हो चुकी थी।

और पाँचवें दिन रचना तन-मन की जलन से सदैव के लिए मुक्त हो असार संसार से चल बसी। दोनों बेटियाँ अनुजा और तनुजा माँ से लिपटकर रो पड़ीं। माँ का बुरा हाल था। पूरा पड़ोस भी गमगीन और रिश्तेदारों की आँखें भी नम। मिट्टी की काया को मिट्टी में मिलाकर जब शोक-संतप्त घर का पुरुष वर्ग अन्य लोगों के साथ थका-हारा वापस आया, तब तक शाम के पाँच बज रहे थे। पड़ोसियों ने अपना फर्ज फिर से निभाया, उनके घरों से दु:खी परिवार के लिए भोजन, चाय-पानी आ गया। काया के अपने धर्म हैं—चाहे दु:ख हो अथवा सुख। सबने बेमन से थोड़ा-बहुत खाया।

''भाई साहब, पूड़ी और दूँ?'' रस्तोगी को चार पूड़ियाँ परोस चुकी पड़ोसन ने पुन: उनसे पूछा।

''दो और।'' रस्तोगी ने जवाब दिया।

फिर बोले, ''अचार भी देना। पूड़ियों के साथ अचार मुझे बहुत अच्छा लगता है। मरनेवाला चला गया। शोक मनाने से क्या फायदा।

सुपरिचित लेखिका एवं प्राध्यापिका। अब तक एक कथा-संग्रह, पाँच कृतियाँ समीक्षात्मक। नौ सम्मान तथा एक पुरस्कार प्राप्त। दूरदर्शन तथा आकाशवाणी से रचनाओं का प्रसारण। पत्र-पत्रिकाओं में लेखन, संपादन।

कद्दू की सब्जी हो तो थोड़ी और दे दो।'' रस्तोगी का यह कथन उनके हृदय की आवाज थी और मन पूरी तरह स्वादेंद्रिय के वशीभूत हो, जिह्वा को तृप्त करने में लगा था।

रस्तोगी के कथन से कुढ़ती, आहत होती पड़ोसन ने क्षुब्ध होकर पाँच-छह पूड़ियों के साथ सब्जी और अचार परोस दिया। कुछ इस हाव-भाव से 'लो भकोस लो, तुम्हारी भूख शांत हो जाए।' पड़ोसन के मन के भावों से अपरिचित रस्तोगीजी ने खा-पीकर जोरदार डकार से सबका ध्यान खींच लिया। संवेदना व्यक्त करने आए लोग आश्चर्य मिश्रित नेत्रों से उन्हें तकने लगे, मगर उन्हें कोई फर्क न पड़ा। आराम से रात भर सोए और दूसरे दिन चल पड़े, यह कहकर कि मैं यहाँ क्या करूँगा। जो हवन-पूजनादि करना हो, उसके लिए आप सब हैं ही।

उस घटना को व्यतीत हुए अरसा हो गया। आज इक्कीसवीं सदी के इस दूसरे दशक तक आते-आते रस्तोगी परिवार भी पहले जैसा कहाँ रह गया! बहुत कुछ बदल चुका है। कमलकांत रस्तोगी बेरोजगार होकर घर आ गए। वैश्विक मंदी की मार उनकी कंपनी पर भी पड़ी थी। वे ही नहीं, कंपनी के दस हजार कर्मियों को मंदी के सुरसामुख ने लील लिया था। रस्तोगीजी के आने पर विमला पर कोई खास प्रभाव नहीं हुआ था। न तो पहले सर्विस में रहते रस्तोगीजी ने अपने परिवार पर ध्यान दिया था, न अब। अब तो स्वयं ही वे विमला यानी रस्तोगिन की कमाई पर आश्रित हो गए थे। रस्तोगिन मोहल्ले भर की स्त्रियों के ब्लाउज सिलती थीं, साड़ियों में फॉल, स्वेटर तथा कपड़े के बैग बनाकर बेचती थीं। अचार, पापड़ और बड़ों से लेकर लंच-टिफिन भी बनाती थीं। कुल मिलाकर उनकी यह कर्मठता उन्हें इतना धन दे देती थी कि इसमें से उन्होंने परिवार तो पाला ही, साथ ही दोनों बेटियों के ब्याह भी कर दिए थे। बेटियाँ सामान्य घरों में ही ब्याही गई थीं। उनके ब्याह पर रस्तोगीजी 'अतिथि' की भाँति निश्चिंत निर्लिप्त दिखाई पड़े थे।

विमला यानी रस्तोगिन के व्यक्तित्व का एक पक्ष और भी था। हालाँकि वे निश्छल मन की थीं, पर बेलाग और मुँहफट थी। चूँकि अपने काम के कारण उनका पड़ोस के लगभग प्रत्येक घर में प्राय: ही आना-जाना होता था, सो वे प्रत्येक घर की अच्छाइयों के साथ 'करिया-चूल्हों' को भी जानती थीं। सो इधर की बात उधर करते रहने के कारण अघोषित तौर पर प्रचारमंत्री की पदवी भी पा गई थीं। भले घरों की स्त्रियाँ और पुरुष इस बात पर परमसंतुष्ट और प्रसन्न थे कि बिना किसी के घर गए, वे एक-दूसरे के भले-बुरे, खूबियों, खामियों से वाकिफ रहते थे। रस ले-लेकर स्वयं भी परनिंदा या प्रशंसा में यथारुचि प्रवृत होते थे, साथ ही रस्तोगिन की मदद भी करते रहते थे, क्योंकि वह जानते थे कि उनका दिया-लिया मुहल्ले भर में फैल जाएगा, सो कहीं पर उनकी 'दाता' की छविवाली मन:स्थिति भी तृप्ति प्राप्त करती थी। रस्तोगिन ने अपने प्रयासों से मुहल्ले की ट्यूशनें रस्तोगीजी को दिलवा दी थीं। लोगों ने रस्तोगिन के लिहाज के मारे रस्तोगी को शराबी होने के बावजूद स्वीकार कर लिया था। अपने बच्चों की ट्यूशनें दे दी थीं। मगर इसी शराब ने अंतत: रस्तोगीजी के प्राण ले लिये।

अब इतनी बड़ी दुनिया में रस्तोगिन निपट अकेली! बेटियाँ थीं, मगर बहुत दूर। उनका अपना खर्च ही पूरा नहीं पड़ता था, माँ को कैसे पूछतीं। उस पर ससुराली जनों की बंदिशें···। अब तो रस्तोगिन की उम्र भी उस ढलान पर कदम रख चुकी थी, जब मन और काया दोनों थकने लगते हैं। उस पर शुगर की बीमारी। अकेली नहीं, हाई ब्लड प्रेशर के साथ। अब उतना काम नहीं हो पाता था, जितना पहले कर लेती थीं। फिर भी जैसे-तैसे गृहस्थी की गाड़ी चल रही थी।

ऐसे ही दिन बीत रहे थे कि अचानक एक दुर्घटना घट गई। हुआ यह कि रस्तोगिन के घर के ठीक सामनेवाले गुप्ताजी और उनकी पत्नी गृहशांति हेतु मकर-संक्रांति की खिचड़ी दान करने के लिए मंदिर जा रहे थे। उन्होंने रस्तोगिन से चलने को कहा तो वे तैयार हो गईं। गाड़ी मंदिर के सामने रुकी। गुप्ता दंपती के साथ रस्तोगिन सड़क पार करके मंदिर में प्रवेश करने ही वाली थी कि एक वाहन की जोरदार टक्कर से सड़क पर चारों खाने चित्त गिर पड़ी। हाथ में पकड़ा गुप्ताजी की दान सामग्रीवाला खिचड़ी का थैला भी फट गया। रस्तोगिन के साथ खिचड़ी भी सड़क पर बिखरी पड़ी थी। चूँकि मंदिर के पास दुर्घटना हुई थी, सो पर्याप्त संख्या में वहाँ उपस्थित भिखारी खिचड़ी उठा-उठाकर ले गए। रस्तोगिन को तत्काल अस्पताल ले जाया गया। उनका पैर टूट गया था। कच्चा प्लास्टर बाँध दिया गया। डॉक्टर और गुप्ता दंपती दोनों ने ही रस्तोगिन को आश्वस्त कर दिया था कि बस कुछ ही दिनों की बात है, प्लास्टर हट जाएगा। मामूली सी दरकन है हड्डी में, चिंता की कोई बात नहीं, बहुत जल्दी वे चलने-फिरने लगेंगी। बेटियों को खबर कर दी गई। एक का प्रसवकाल नजदीक था। दूसरी जो शिक्षिका थी, उसके यहाँ अर्द्धवार्षिक परीक्षा चल रही थी। उसने परीक्षाओं के बाद ही आने की बात कही।

सब तरफ से बेसहारा, बेआसरा रस्तोगिन को दुनिया की असलियत समझ अब आई। मुहल्लेवाले देखने तो आते, मगर केवल देखने की रस्म निभाने की बातें भी तमाम तरह की हुईं।

मिसेज शर्मा : अरे देखो तो, होम करते हाथ जल गए, खिचड़ी दान कराने का यह नतीजा दिया भगवान् ने।

मिसेज वर्मा : भगवान् को क्यों दोष देती हैं आप, क्या पता उस भिड़ंत में इनकी जान ही चली जाती। वे तो खिचड़ी दान कराने का पुण्य सामने आ गया और पाँव पर ही बीती। जान तो बच गई!

मिसेज सिंह : अब तो बेचारी एक गिलास पानी भी तब पी पाएँगी, जब कोई भरकर पकड़ानेवाला होगा। ऐसी मोहताजी किसी को न दे भगवान्। हाथ-पाँव सबके सलामत रखे।

पड़ोसनें आती थीं। इसी तरह की बातें बनाकर चली जातीं। जिन पड़ोसनों की रस्तोगिन ने हमेशा दूसरों से बुराई की थी, उन्हें तो जैसे मौका मिल गया था। कोई कहती कि रस्तोगिन ने अपने शरीर का खूब दुरुपयोग किया, परिणाम तो यही होना था। ऐसे ही नहीं कहा जाता कि 'बड़े भाग मानुस तन पावा', मनुज योनि पाकर अच्छे कार्य करने चाहिए। मगर रस्तोगिन ने परनिंदा और से एक-दूसरे की चुगलखोरी कर-करके अपना काम निकाला। अपनी करनी बिगाड़ी। इन्हीं में से एक पड़ोसन सुमन रस्तोगिन को देखने गई। दरवाजा खोला रस्तोगिन की किराएदारनी ने। उसी ने रस्तोगिन को सुमन के आने की सूचना दी।

पास पड़े स्टूल पर बैठते ही सुमन बोली, ''कैसी हैं दीदी?''

रस्तोगिन : खटिया पर पड़े आज महीना भर हो रहा है। तबीयत बहुत ऊबती है। पैसा भी खत्म हो गया। किराएदारनी भली लड़की है, इस घड़ी तो वही सगों से बढ़कर सेवा कर रही है।

सुमन : भोजन?

रस्तोगिन : दिनभर में एक बार जब वो अपना बनाती है, उसी में से हमको दे जाती है, वह खुद भी तो सिलाई-कढ़ाई से किसी तरह गुजर कर पा रही है, पति बेरोजगार है, उस पर शतरंज खेलने की बुरी लत है। इसी लत की वजह से काम नहीं कर पाता। कई बार लगा-लगाया काम छुड़ा दिया इस लत ने। जिन्हें मैंने सगा और मनमीत समझा, उनके भी तमाशे देख लिए हैं अब। आज तो दवाई तक नहीं खाई। आह, ऊँह···। करवट लेने को कसमसाती, रस्तोगिन दर्द से कराहने लगी।

सुमन : क्यों दवा क्यों नहीं खाई?

रस्तोगिन : सवेरे ही सिलेंडर खत्म हो गया था। घर में और कुछ है नहीं। किराएदार सुबह से ही लेने के लिए गया है। आज तो डॉक्टर ने भी बुलाया था, मगर कोई नहीं, जो हमको लेकर जाए।

अभी सुमन और कुछ कहती-पूछती कि किराएदारनी ने सूचित किया कि कोरियरवाला सुमन को बुला रहा है। सुमन उठकर अपने घर चली गई।

□

रस्तोगिन के बारे में सोच-सोचकर सुमन का हृदय भर आया, ये वही रस्तोगिन है, जिसने लोगों के कितने काम बनाए, कितना कुछ

किया और आज उसकी लाचारी में कोई भी उसके सामने पड़ना नहीं चाहता। जिन गुप्ता की वजह से उनका पैर टूटा, वे भी मुँह चुराए बैठे हैं। यहाँ तक कि जिन लोगों के पास गाड़ियाँ हैं, उन्होंने भी कोई-न-कोई बहाना बनाकर टाल दिया। रस्तोगिन फोन कर-करके हार गई सबको। कितनी दु:खी है बेचारी!

यह इत्तेफाक ही था कि सुमन के घर के पुरुष बाहर गए हुए थे। होते भी तो रस्तोगिन की लगाई-बुझाई की आदत के कारण उसके पास तक न फटकते, न ही सुमन को जाने देते। मगर सुमन न जाने किस मिट्टी की बनी थी। जिस रस्तोगिन ने हमेशा उसके लिए अपमानजनक अफवाहें उड़ाई थीं। आज उसी रस्तोगिन को असहाय-रुग्ण देखकर उसका हृदय करुणार्द्र हो रहा था। कुछ सोचकर वह रस्तोगिन की किराएदारनी को बुला लाई। दोनों ने मिलकर सिलेंडर उठाया और पाँचेक मिनट बाद रस्तोगिन के हाथों में सुमन ने पराँठे की गरमागरम प्लेट थमा दी। पुन: घर गई। एक गिलास दूध ले आई, दूध के साथ रस्तोगिन को दवाइयाँ भी खिला दी गईं। इतना भर नहीं, सुमन ने कहा कि घर का कुछ काम निपटाकर वह अपनी गाड़ी से उन्हें डॉक्टर के यहाँ ले जाएगी।

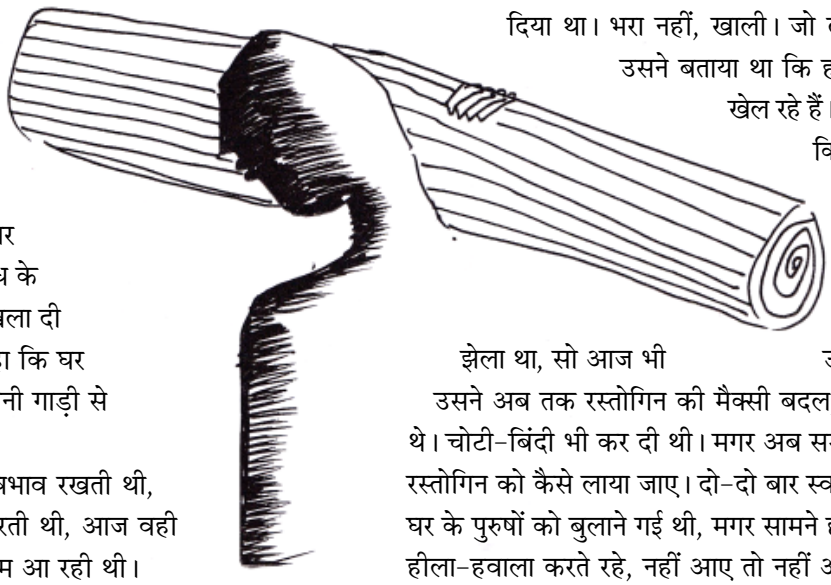

जिस सुमन से रस्तोगिन द्वेषभाव रखती थी, जिसकी मोहल्ले भर में बुराई करती थी, आज वही सुमन तन-मन-धन से उसके काम आ रही थी।

☐

आज रस्तोगिन की आँखों में आँसुओं की बरसात लगी थी। उसका मन आत्मग्लानि से भर उठा था। उसे अपने ऊपर लज्जा हो रही थी। आती भी क्यों नहीं? उसने किया ही ऐसा कृत्य था। सुमन से वह व्यवहार बनाना चाहती थी, मगर जब भी उसने पड़ोसियों की निंदा या उनकी गोपनीय बातें सुमन से करनी चाहीं। सदैव सुमन ने क्षमा माँगी, यह कहते कि उसके पास इन बातों के लिए समय नहीं है। सुमन की परोपकारी वृत्ति, सर्विस की व्यस्तता और घर के कामकाज उसे मिनट भर भी फुरसत नहीं देते थे। वह सदैव अच्छे कर्मों की ओर अग्रसर होती और दूसरों को भी ऐसा करने को कहती थी। उसे समय की कीमत मालूम थी। एक क्षण भी बरबाद हो, यह उसे मंजूर नहीं था। वह पडोसियों के दु:ख-सुख में शरीक थी, मगर पंचायत के लिए उसके पास फालतू वक्त नहीं था। रस्तोगिन की पंचायती लत का अहं सुमन की उपेक्षा से तिलमिला गया। फिर तो उसने सुमन के बारे में बेहद गंदी और भद्दी अफवाहें फैलानी शुरू कर दीं। सुमन के यहाँ दूर-दराज की निर्धन छात्राएँ पढ़ने आती थीं। रस्तोगिन ने उड़ा दिया कि सुमन अपने यहाँ लड़कियों से धंधा कराती है। पति उसको तलाक देनेवाला है। कोई भी पति यह बरदाश्त नहीं कर सकता कि उसका घर 'चकला' बन जाए। पुलिस की रेड पड़ी थी। पुलिस सुमन को ले गई, जबकि हकीकत यह थी कि सुमन के देवर नगर में एस.पी. बनकर आए थे।

अपने अमले के साथ वे एक बार सुमन के यहाँ आए थे। इसी तरह हिंदी दिवस पर पुलिस की गाड़ी उसे लेने और छोड़ने आई थी। आज एक-एक बात सोचकर रस्तोगिन रो रही थी। ये उसके पश्चात्ताप के आँसू थे। अब वह सुमन तो क्या किसी के लिए भी इस तरह की भदेस बातें नहीं करेगी।

☐

सायंकाल के पाँच बज रहे थे। सुमन अपनी गाड़ी रस्तोगिन के यहाँ ले आई थी। किराएदार ने सिलेंडर किसी लड़के से घर भिजवा दिया था। भरा नहीं, खाली। जो लड़का सिलेंडर लाया था, उसने बताया था कि हक्कू भैया शतरंज का मैच खेल रहे हैं। चैंपियन बनकर ही आएँगे। किराएदारनी धैर्यवाली लड़की थी। शांत स्वभाव की। उसने हक्कू यानी पति की इस तरह की करतूतों को एक नहीं, कई बार झेला था, सो आज भी उसे ताज्जुब नहीं हुआ। उसने अब तक रस्तोगिन की मैक्सी बदल, हाथ, मुँह, पैर धुला दिए थे। चोटी-बिंदी भी कर दी थी। मगर अब समस्या यह थी कि कार तक रस्तोगिन को कैसे लाया जाए। दो-दो बार स्वयं किराएदारनी सामनेवाले घर के पुरुषों को बुलाने गई थी, मगर सामने होते हुए भी वे बहानेबाजी, हीला-हवाला करते रहे, नहीं आए तो नहीं आए। अब सुमन को युक्ति सूझ गई। उसने सबसे पहले गाड़ी रस्तोगिन के घर के दरवाजे के सामने इस तरह खड़ी की कि पल्ला कमरे की सीध में खुल रहा था, फिर उसने पास में ही कूड़ा बीनने आई दो लड़कियों को इशारे से बुलाया। अब कुल मिलाकर वे चार औरतें हो गई थीं। सबने मिलकर रस्तोगिन की खटिया के चारों पायों को पकड़ा और किसी तरह गाड़ी तक लाने में सफल हो गईं। फिर धीरे-धीरे रस्तोगिन को खटिया से गाड़ी की सीट की ओर सरकने को कहा। रस्तोगिन लेटे-लेटे ही किसी तरह सरक-सरककर गाड़ी की सीट पर आई। सीट के दूसरी ओर पल्ले से सुमन ने रस्तोगिन को खींचा। इस तरह से रस्तोगिन गाड़ी की पिछली सीट पर बैठ गई। अगली सीट पर किराएदारनी बैठी। सुमन ने गाड़ी स्टार्ट की और ट्रामा सेंटर की ओर चल पड़ी।

लगभग घंटे भर की यात्रा के बाद गाड़ी त्रिवेदी ट्रामा सेंटर पर आ लगी। सुमन सेंटर में गई और वहाँ से दो आज्ञापालकों को ले आई। आज्ञापालक स्ट्रेचर लाए थे। उन्होंने मिलकर रस्तोगिन को स्ट्रेचर पर लिटाया और सेंटर के अस्थि विभाग में ले गए। लगभग आधे घंटे बाद डॉक्टर आया और रस्तोगिन को देखने के बाद उन्होंने दवाइयों के साथ पक्के प्लास्टर का परचा बना दिया। सुमन ने आगे बढ़ परचा अपने हाथ

में ले लिया। रात के लगभग दस बजे सुमन अपने घर वापस आई। तब तक उसके घर का पुरुष वर्ग आ चुका था। बेटों, जेठ और पति ने खाना गरम करके खा लिया था। सुमन इतना तो जानती ही थी कि अस्पताल, नर्सिंग होम ऐसी जगहें होती हैं, जहाँ जाना तो अपने हाथ में होता है, लेकिन लौटना नहीं, कब डॉक्टर किसी इमरजेंसी में चला जाए, कब कोई अर्जेंट केस देखने लगे। कब ओ.पी.डी. में चला जाए। कोई नहीं जान सकता। सो रस्तोगिन के यहाँ जाने से पहले वह भोजन बनाकर गई थी। एक तरह से यह ठीक ही हुआ था। उसे तसल्ली हुई, यह देखकर कि सबने भोजन कर लिया था। अभी वह गाड़ी गेट के भीतर करके भीतर आई ही थी कि पति की आक्रोश भरी आवाज कानों में पड़ी, ''हो गई मोटी! जाओ अब उसी के घर में रहो। जाकर आने की क्या जरूरत थी?''

सुमन बोली, ''बताया तो था तुम्हें। क्यों गुस्सा हो रहे हो। बाजपेइन का फोन आया था कि तुम उनके पास से घर की चाभी ले आए थे। ऐसा भी नहीं कि तुम्हें इंतजार करना पड़ा होगा।'' इससे ज्यादा सुमन कुछ न कह सकी। एक तो वह स्वयं भी बेहद थकी-हारी और भूखी थी। दूसरे, कल प्रात: पाँच बजे ही उसे सरकारी काम से बाहर जाना था, तीन बजे उठेगी तब कहीं जाकर पाँच बजे जा पाएगी। सो इस समय बात आगे बढ़ाना नहीं चाहती थी। मगर पति का आक्रोश बढ़ता जा रहा था। बोले, ''उस नीच औरत ने हमारे घर के बारे में क्या-क्या नहीं कहा? कितना जहर उगला, कितनी बेइज्जती की बातें कहीं तुम्हारे लिए। तुम्हारी जगह कोई और होता तो उसका मुँह तक नहीं देखता, सेवा-सहायता की बात तो बहुत दूर है। समझ में नहीं आता कि तुम इतनी मूर्ख क्यों हो?''

जेठ बोले, ''मूर्ख और बेवकूफ न होती तो तुम्हारे जैसे सनकी आदमी के साथ गुजारा न कर रही होती। गऊ जैसी औरत पा गए हो बेटा, कोई और होती तो कब की तुम्हें छोड़कर भाग गई होती···। कमाऊ औरतें कितनी दबंग होती हैं, तुम क्या जानते नहीं, मगर हमारी सुमन को देख लो, कितनी विनम्र, सज्जन और कायदे में रहनेवाली जनी है।''

पति को जेठ का पक्ष लेना एक आँख न सुहाया, बोला, ''भैया, तुम्हारी शह पाकर ही यह शेर हुई जा रही है। तुम तो ऐसे पुल बाँधते हो तारीफों के कि बौरा भी वाचाल हो जाए।''

सुमन इन बातों से जरा भी दु:खी या विचलित नहीं हुई। उसने नम आवाज में कहा, ''आप लोग ठीक कहते हो। मैं भी कभी रस्तोगिन के प्रपंच में नहीं पड़ी। है तो बुरी, मगर हमने बुराई का बदला बुराई से दिया तो फिर हममें और उसमें फर्क ही क्या रह गया। अपने घर में तो बापू की उस सूक्ति की तख्ती दीवार पर टँगी है, जिसमें लिखा गया है—'घृणा पाप से करो पापी से नहीं।' आज रस्तोगिन बेसहारा, बेआसरा है, उसे आज हमारी सेवा-आसरे की बहुत जरूरत है। आपको यह तो याद रहा कि उसने हमारे बारे में कितना दुष्प्रचार किया है, मगर ये क्यों भूल गए कि हमारे नन्हे के लिए वह कितना सुंदर झबला सिलकर लाई थी। उसका वह निस्स्वार्थ प्रेमिल उपहार आपको क्यों नहीं याद आया। बुराई याद थी तो भलाई भी याद होनी चाहिए थी।''

सुमन की बात तर्कसंगत थी, सत्य थी, विवेकयुक्त थी। मगर पति का पतीपन फिर खम खा गया, बोला, ''किसकी परमीशन से तुम उसके लिए गाड़ी ले गई थीं। फोन पर तुमने केवल इतना कहा था कि तुम रस्तोगिन को देखने जा रही हो। पेट्रोल क्या मुफ्त में आता है। बोलो, जवाब दो। गाड़ी क्या बाप के यहाँ से लाई थी।'' सुमन ने कोई जवाब नहीं दिया। शांत मन से वह अगले दिन की तैयारी में लगी। पति था कि बराबर इन्हीं बातों को लेकर उसे कोंच रहा था। वह इतने तक ही सीमित नहीं रहा, कमरे में जाकर ड्रेसिंग टेबल से चाभी निकालकर उसने सुमन की अलमारी खोली। पर्स निकाला, देखा और चीख पड़ा, ''सुबह ए.टी.एम. से पाँच हजार निकालकर दिए थे तुम्हें, मेरे सामने तुमने पर्स में रखे थे, इसमें तो केवल दो नोट हैं हजार-हजार के। बाकी क्या हुए, दे आई होगी उस सगी को। मैं अभी उस पतुरिया के यहाँ जा रहा हूँ पैसे लेने, देगी कैसे नहीं।''

यह कह क्रोध से तमतमाए पतिदेव शर्ट पहनकर बाहर चले गए। सुमन दौड़कर पीछे-पीछे गई, बोली, ''मैं भी चल रही हूँ तुम्हारे साथ। पैसों का रस्तोगिन से क्या मतलब? तुम्हारी मुँहलगी प्रिय बहन शशि के यहाँ गई थी फेशियल-मेनीक्योर-पैडीक्योर के लिए, तीन हजार उन्हीं को पकड़ा आई हूँ। जाना ही है तो उन्हीं के यहाँ जाकर पूछ लो, पता लग जाएगा। इतनी देर से गुस्सा हो रहे हो। याद करो, जब शशि के पति का पैर फिसल गया था और वे मेरे पास आए थे गाड़ी माँगने, मैंने तुमसे पूछा था फोन करके कि क्या करूँ? तब तुमने कितना डाँटा था, कितना फटकारा था कि दूध पीती बच्ची नहीं हो, जो हगनी-मूतनी बातें पूछती हो, वयस्क हो, सर्विस करती हो, छोटे-मोटे निर्णय खुद लिया करो, मेरा भेजा खाने की क्या जरूरत है। बस इसलिए तुमसे नहीं पूछा था।''

सुमन की बातों से पति के गुस्से के उबाल पर जैसे पानी की बूँदें गिर पड़ी। बिना कुछ बोले वे वापस हो लिये। सुमन भी मुसकराती अपने कक्ष में चली गई। कुछ देर बाद उसने बाथरूम जाकर मोबाइल निकाला और धीरे-धीरे बात करने लगी, ''शशि दी, आपको रस्तोगिन की दुर्दशा के बारे में सब पता है। आज मैं उनका पक्का प्लास्टर चढ़वाकर आई हूँ। तीन सप्ताह बाद फिर बुलाया है डॉक्टर ने। इस सबमें मेरे तीन हजार रुपए लग गए। आपके भैया इसी बात को लेकर धरती-आसमान एक किए हुए थे। मैंने कह दिया कि शशि दी से फेशियल, मैनीक्योर पैडीक्योर कराया है।''

''ठीक है, मैं कह दूँगी नितिन से।'' ओ.के. कोई और बात हो तो बोलो, नहीं तो मुझे सीरियल देखने दो, मैं एफ.आई.आर. मिस नहीं कर सकती, सुम्मी।''

सुमन—नहीं, बस यही बात थी, थैंक्यू। ओ.के. बाय।

१२८/३८७ नार्दमान ब्लॉक
किदवई नगर, कानपुर-२०८०९९ (उ.प्र.)

राम झरोखे बैठ के

मुरगे का मुगालता

● गोपाल चतुर्वेदी

मियाँ साहब के अहाते के मुरगे को कौन नहीं जानता है? मियाँ साहब भी उस पर मेहरबान हैं। जब वह कलगी का ताज पहने शीश मटकाता, इतराता टहलता है तो मियाँ साहब का सिर गर्व से ऊँचा हो जाता है। पूरे मोहल्ले में उनके खलील का मुकाबला है। मोहल्ला ही क्यों, पूरी बस्ती में खलील की टक्कर का मुरगा हो तो उनकी चुनौती है कि उससे चोंच लड़वा ले। तय हो जाएगा कि कौन किस पर भारी पड़ता है। जब दाना डालने मियाँजी खलील की हाँक लगाते हैं तो वह इस अदा से शाही गरदन घुमाकर प्यार से देखता है कि उन्हें अपने मरहूम बेटे की याद आ जाती है। जीते-जी अपने लख्ते जिगर को खोना किस बाप को गवारा है? अब तो यह खलील ही उनके स्नेह का सहारा है। खुदा इसे सलामत रखे।

खलील मियाँ को भी अपनी हस्ती पर नाज है। क्यों न हो? चंपक मालिशवाले से लेकर सेठ चंपालाल तक सब अपने अहं के महत्त्व में मगन हैं तो खलील क्यों न हो? मुरगियों के प्रति खलील का स्वाभाविक आकर्षण है। पर उसे यह भी विश्वास है कि वह मामूली नहीं, मुरगों का कामदेव है। ग्रीस में पैदा होता तो खुद को वह एडोनिस मानता। अगर कोई शीशा होता तो वह अपनी शक्ल उसमें निहारता रह जाता। उसके अभाव में उसने अपना अक्स पानी के पात्र में देखा है। एकबारगी उसका मन हुआ कि प्यास बुझने के बाद भी वह अपनी चोंच वहीं गड़ाए रहे, पर मियाँ साहब की हाँक से विवशता में उसे आवाज की ओर टहलना पड़ा। उसे मियाँ साहब से लगाव भी है और भय भी। उसने देखा है कि बड़े सींकचे में ठुसकर मुरगियों को अहाते से जाते। उसकी स्मृति में एक बार सींकचे में लदकर कोई वापस नहीं लौटा है।

कभी-कभी उसे शंका होती है कि कहीं मियाँ साहब बाँचरा देवी के गुप्त एजेंट तो नहीं हैं? ठीक वैसे ही जैसे इनसानी मंदिर के पुजारी वहाँ स्थापित पत्थर की मूरत के। उसे आश्चर्य होता है। न किसी ने अल्लाह देखे हैं, न ईश्वर। फिर भी एक को खुदा और दूसरे को ईश्वर माननेवाले आपस में अनायास कुत्ते-बिल्ली की तरह क्यों भिड़ जाते हैं? बाँचरा देवी की सवारी होने के बावजूद मुरगे तो मुरगियों से ऐसे कभी नहीं भिड़ते हैं। मुरगेश्वर द्वारा रचे संसार में किसी भी पूज्या देवी की सवारी होना गौरव का विषय है। फिर भी उसकी सोच है कि मुरगा हो या मुरगी, रचना तो सब मुरगेश्वर की है, उनमें भेदभाव कैसा? वह अंदर-ही-अंदर स्वयं को मियाँ साहब जैसे इनसानों से बेहतर मानने लगता है, यह भूलकर कि ऐसे दार्शनिक चिंतन के बावजूद वह अहाते के सारे मुरगे-मुरगियों से स्वयं को श्रेष्ठ समझता है।

वह जानता है कि इनसान मौन की भाषा से कम परिचित है। यह तो सिर्फ मुरगे-मुरगियों की सिफत है। उसे गर्व है कि मियाँ साहब ऐसों की बातचीत, उनके हावभाव, बोलने के अंदाज और टोन भाँपने में समर्थ हैं। कहीं ऐसा तो नहीं है कि प्रभु मुरगेश्वर की उस पर विशेष कृपा है, वरना कैसे होता कि मियाँ साहब ही क्यों, उनके साथी और अहाते का मुरगा परिवार, सब उसे सिर्फ भाव ही नहीं देते, सम्मान से भी ताकते हैं? मियाँ साहब तो उसकी प्रशंसा में कसीदे पढ़ने में माहिर हैं। दोस्तों को लगता है कि एक मुरगे ने मियाँ साहब को शायर बना दिया है। कुछ तो यह कहने से भी नहीं चूकते हैं कि मजनूँ बनने के लिए सबको लैला की दरकार नहीं है। कुछ के लिए मुरगा ही काफी है। यह सब भाँपकर उसका श्रेष्ठता-भाव और गहराता है। उसमें कुछ तो खास है। उसकी चाल और कलगी की बनावट दूसरों से अलग है क्या? पानी का पात्र ऐसा नहीं है कि कहीं टाँगकर वह अपना नख-शिख निरीक्षण कर सके। मियाँ साहब के बरामदे में एक आदमकद शीशा टँगा है। वह भी कहीं बाहर जाए या वहाँ से लौटे तो सामने खड़े होकर अपनी शक्ल और टोपी उसमें निहारते हैं। टोपी कहीं टेढ़ी तो नहीं है? शायद सीधी टोपी का ही चलन है, इनसानों की दुनिया में। मुरगे ने देखा है उनके दोस्तों को, उसी में अपना मुआयना करते हुए।

यह सुभीता उसके पास नहीं है। वह दूसरे मुरगे-मुरगियों को देखता है चलता-फिरता, दाना खाते, पंख फड़फड़ाता। कोई और होता तो अपनी तुलना उनसे करे बिना शायद निर्णय नहीं कर पाता। मुरग-संसार में इसकी संभावना कम है। किंतु उसका श्रेष्ठता बोध इससे कम नहीं हुआ है। उल्टे उसने मन में अपनी कलगी और चाल की बेहतरी का भाव ऐसे आरोपित कर लिया है कि अब वह यकीन में बदल गया है। इस मामले में वह इनसानों से किसी मायने में कम नहीं है। उन्हें सुविधा है शीशे में अपने प्रतिबिंब को निहारने की। कुछ तो उस पर ऐसे मोहित हैं कि असलियत के बजाय अक्स में ही खोए रहते हैं। उनकी आँखें अक्स के आकर्षण की ही अभ्यस्त हैं, उनके कानों में सिर्फ अपनी बिरदावली गूँजती है। सामान्य इनसान और मुरगे-मुरगियों के साथ यह सच हो, न

हो, पर खलील जैसे मुरग और महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों में इस नियम के अपवाद अकसर नहीं पाए जाते हैं। उन्हें निजी महानता के भ्रम में रहने की आदत है। कौन कह सकता है कि यह आत्मविश्वास का अतिरेक है या आत्मनिरीक्षण का अभाव?

ऐसा नहीं है कि खलील पूरी तरह संतुष्ट हैं। अंडे रोज ट्रे में सजाकर बाजार भेज दिए जाते हैं। उसे डर है। यही दिनचर्या रही तो मुरगा कौम ही न नेस्तनाबूद हो जाए? आखिर अंडे से ही तो चूजा निकलता है। अहाते के अंडों में से कभी-कभार ही कुछ के सेये जाने की नौबत आती है, नहीं तो आदमी के पेट में समा जाना ही उनका प्रारब्ध है। खलील को ऐसे खयाल आकर उदास कर जाते हैं। क्या प्रभु मुरगेश्वर की यही इच्छा है कि अंडे धरती पर आएँ और आदमी की उदरपूर्ति करें? मुरगेश्वर का यह कैसा विधि-विधान है कि अपने सृजन के ऐसे विनाश पर उसकी कोई प्रतिक्रिया नहीं है? क्या वह इससे सहमत हैं? सहमत ही होगा, नहीं तो इस दैनिक बर्बरता को रोकने के लिए कुछ तो करता? भक्तों के हित से पूरी तरह निरपेक्ष मुरगेश्वर क्या पूजे जाने के योग्य हैं? ऐसे क्रांतिकारी प्रश्नों से परेशान होकर खलील और मियाँ साहब के दिए दाने खाकर फिर अपने एडोनिस अवतार में खो जाता है। मुरगों में कहावत भी है कि 'पेट में पड़ा चुग्गा, तो सबकुछ है चंगा।'

बाँग देते समय उसे अचानक खयाल आया है कि पूरब से सूरज उसकी बाँग से ही उगता है। जाहिर है कि सुबह के लिए भी वही जिम्मेदार है। तभी उसका इतना सम्मान है। मियाँ साहब भी उसकी इसीलिए कद्र करते हैं, वरना वह भी सींकचे में बंद कर बाजार भेज दिया जाता! दुनिया में रोज रोशनी लाने में उसकी अहम भूमिका है। संसार हर दिन-रात के अंधकार में डूबता है। वह न होता तो भोर कैसे हो पाती? गर्व से उसके पंख जैसे कुछ और चौड़े हो गए हैं। आज मियाँ साहब इतने परेशान हैं कि दाना डालने के बजाय इधर-उधर चक्कर काट रहे हैं। मुरगे-मुरगियाँ भूख से सूख रहे हैं।

इस मामले में खलील किसी प्रगतिशील बुद्धिजीवी से दो-चार कदम आगे है। मालिक द्वारा प्रशंसा, उसके लिए किसी प्रभावी कमेटी की सदस्यता से कम नहीं है। प्रत्यक्ष रूप में वह अपने स्वामी का निष्ठावान मुरगा है, पर अंदर-ही-अंदर वह उन्हें कोसता भी है! योग्यता की इस अनदेखी को कोई क्या कहेगा कि उन्होंने उसे अभी तक मुरगों का नायक नहीं बनाया है। नहीं तो किस मुरगे की मजाल है कि उसका दाना बराबरी से खा सके? ज्यादातर तो इस लायक भी नहीं हैं कि उसकी जूठन से पेट भरें। वह मुरगा-नायक होता तो सबको अंडे के अंदर के दिन याद आ जाते! ऐसे तो उसकी बराबरी का हाते क्या, देश में भी शायद ही कोई हो, पर बुद्धिजीवी मुरगों को (यदि कोई है तो) वह उदारता से समानता की हैसियत बख्शने को प्रस्तुत है। त्रासदी यही है कि अपनी मुरगा दृष्टि से उसे दूर-दूर तक ऐसा कोई नजर नहीं आता है।

खलील मुरग के इनसानी समकक्ष भी है। उनको भी लोग बुद्धिजीवी कहते हैं। आका की कृपा की कमाई वह भी खाते हैं। पर वह खलील से अधिक चतुर-चालाक हैं। उन की महत्त्वाकांक्षा की सीमा नहीं है। इसमें जो उनके काम आए, वह उनका वख्ती सगा है। उल्लू सीधा होने के बाद वह उसे भुलाने में या उसका सही स्थान दिखाने में चूक नहीं करते हैं। भूले-भटके जब कभी उपलब्धियों की चोटी से उन्होंने नीचे देखने की जहमत की है तो वहाँ उन्हें ऐसा सीढ़ियों का श्मशान नजर आता है। यह वही है, जिन्होंने उन्हें ऊपर तक पहुँचाया है और कृतज्ञता में लात खाई है। इनमें से जो चल बसे हैं, वह उन्हें अपने श्रद्धा-सुमन से नवाजते हैं। उन्हें पता है। जो मर चुका है, वे उनकी कलई खोलने वापस तो आनेवाला है नहीं। गए-गुजरे के बारे में कुछ भी कह लो, वह तो बोलने से रहा!

जो जीवित हैं, ऐसी सीढ़ियों को उनका झुककर प्रणाम समर्पित है। सीढ़ियाँ गद्‌गद हैं। कितना विनीत है यह व्यक्ति, कतई फल लगे वृक्ष के समान। बस एक ही अंतर है। फलदार झाड़ ऊँचाई पर है। वह उसके फल तोड़ना तो दूर, छूने तक में असमर्थ है। वृक्ष क्यों नीचे आए और वह उसकी ऊँचाई तक कैसे पहुँचे? वह किसी को बताएँ भी तो क्या बताएँ? कोई कैसे मानेगा कि इस पहुँचे हुए व्यक्ति को यश और कीर्ति की चोटी तक पहुँचाने में उनका भी योगदान है। डोली को लक्ष्य तक ढोनेवाले कहार सिर्फ कहार ही रहते हैं, मंजिल पानेवाला महानुभाव बनना असंभव है उनके लिए।

मुरगेश्वर के विषय में खलील को निराशा और अविश्वास का दौरा पड़ता है, पर अपनी महानता का निजी सुरूर उस पर हमेशा सवार है। वह उसी को चोंच में दबाए, दूसरों को नजरअंदाज करता घूमता रहता है। मियाँ साहब चिंतित हैं। उन्होंने रेडियो पर सुना है कि जिले में चिड़ियों का कॉलरा फैल रहा है। सबको सिर्फ अपने स्वार्थ की फिक्र रहती है। उन्हें अपने पोल्ट्री के धंधे की चिंता है। मुरगे-मुरगियों की तो खैर जान जाएगी ही, पर उनकी आमदनी का क्या होगा? नए सिरे से कुछ भी शुरू करना आसान नहीं है। जीवन का नियम है। इनसान को मुसीबत में ही ऊपरवाले की सुधि आती है। वह पीर साहब की मजार पर गए हैं। उन्होंने वहाँ दुआ माँगी है। चादर चढ़ाने का वादा किया है। रहमदिल अल्लाह को याद करते वह अहाते में लौट आते हैं। उनके दिल में उम्मीद की किरण जगी है। जिले में रोग भले फैला हो, उनकी बस्ती में तो है नहीं। कौन कहे, ऊपरवाला उनके अहाते पर नजरे-इनायत कर दे?

उनका चहेता खलील अपने आकर्षण और सौंदर्य के दिवा-स्वप्न में खोया सामने ही टहल रहा है, पर मियाँ साहब का ध्यान उसकी ओर गया ही नहीं। खलील की चाल में गुरूर थोड़ा और बढ़ गया है। पहले कभी इधर-उधर गरदन मोड़कर देख भी लेता था, आज न मियाँ साहब ने उसको तवज्जो दी है, न उसने मियाँ साहब को। मियाँ साहब कॉलरा की आशंका में डूबे हैं, खलील अपनी नई खोज में।

बाँग देते समय उसे अचानक खयाल आया है कि पूरब से सूरज उसकी बाँग से ही उगता है। जाहिर है कि सुबह के लिए भी वही जिम्मेदार है। तभी उसका इतना सम्मान है। मियाँ साहब भी उसकी इसीलिए कद्र करते हैं, वरना वह भी सींकचे में बंद कर बाजार भेज दिया जाता! दुनिया में रोज रोशनी लाने में उसकी अहम भूमिका है। संसार हर दिन-रात के अंधकार में डूबता है। वह न होता तो भोर कैसे हो पाती? गर्व से उसके पंख जैसे कुछ और चौड़े हो गए हैं। आज मियाँ साहब इतने परेशान हैं कि दाना डालने के बजाय इधर-उधर चक्कर काट रहे हैं। मुरगे-मुरगियाँ भूख से सूख रहे हैं। सिर्फ खलील एक ऐसा अपवाद है, जिसका पेट महानता के मुगालते से भरा हुआ है। वह उसी दशा में इठलाता और तना हुआ अपने आप में खोया है।

मियाँ साहब हर संभव स्थान पर दुआ और मन्नत मान के लौटे तो निरीक्षक उनकी प्रतीक्षा में बैठा हुआ था, सरकारी आदेश की इस भयंकर रोग की चेतावनी लिये। सबको क्या निर्देश दिया गया है कि चूँकि यह संक्रामक बीमारी इनसानों को भी लग सकती है, इस कारण रोग के जरा से अँदेसे से ही मुरगे-मुरगियों को मारकर दफना दिया जाए। मियाँ साहब इस समाचार से दिल का दौरा पड़ते-पड़ते बचे। ''पर अभी तो मर्ज अपने इलाके तक नहीं आया है।'' उन्होंने निरीक्षक से आश्वस्ति चाही। ''यह तो सच है, पर रोग इतना जानलेवा है कि सावधानी तो हमें बरतनी ही है।'' मियाँ साहब ने थोड़ी राहत महसूस की।

भविष्य ज्योतिषी भी नहीं जानता है। रात में यकायक दूसरे मुरगे-मुरगियों की तरह खलील तड़पा और यकायक उसके प्राण-पखेरू उड़ गए। उसके सूरज लाने के मुगालते के बावजूद सुबह सूरज जैसा रोज उगता है, वैसा ही उगा है। बस खलील की बाँग नदारद है। दुनिया वैसी की वैसी है। दिन निकल आया है रोजमर्रा की तरह। सबकुछ सामान्य है। बस एक खास मुरगे के अलावा, जो संसार से असमय विदा ले चुका है।

सामान्य मान्यता है कि मनुष्य मुरगों से ज्यादा समझदार है। जाने फिर ऐसा क्यों होता है कि कुछ को और कोई रोग भले लगे न लगे, महानता के मुगालते का लाइलाज मर्ज झट से लग जाता है? एक विद्वान् इस विषय में हमें ज्ञान देते हैं, 'आपकी बात केवल छुटभइयों पर लागू है। जो वाकई महान् है, वह अपने कर्मों में जीते हैं, मुगालतों में नहीं!'' कौन कहे, इसमें कितना सच है? विद्वान् की ख्याति अपनी विद्वत्ता के प्रचार की है। जानकारों को शक है कि उन्हें भी ज्ञानी होने का मुगालता है।

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

लघुकथा

गुड बाय डार्लिंग

● लता कादंबरी

केतली में खौलती चाय ने चीनी से कहा, 'देखो, मैं हूँ तो तुम हो, मुझसे ही तुम्हारी जिंदगी की रंगत है।' मैं यह, मैं वह, फिर यह मैं वह मैं करती गई।

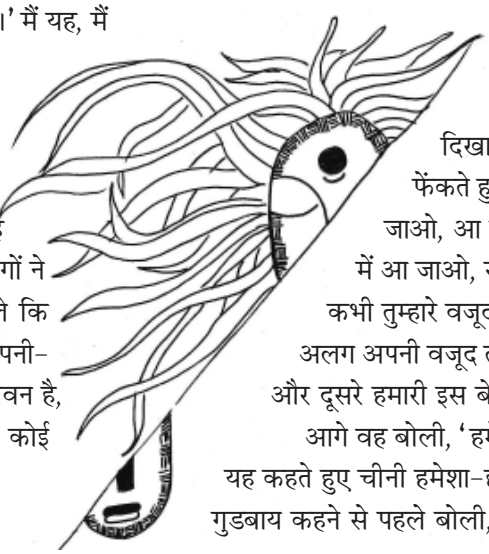

यह चीनी भी अब पहले जैसी बड़े-बड़े दानोंवाली, पीली-पीली और सिकुड़ी चीनी न थी, वक्त ने रिफाइंड कर दिया था उसे। मटककर झट बोली, 'मेरे बिना कौन सी तुम्हारे जीवन में मिठास रह जाएगी? मेरे आने के बाद से ही तो आसपास वाले लोगों ने हमारे में इंटरेस्ट लेना शुरू कर दिया है।' इससे पहले कि चाय की पत्ती कुछ उत्तर देती, उछलकर पानी बोला, 'अपनी-अपनी बड़ाई करने से कुछ न होगा, बहनो! जल ही जीवन है, सच तो यह है कि जब तक मैं लोगों की आँखों मे रहूँगा, कोई उस व्यक्ति का बाल बाँका न कर पाएगा।'

तभी बगल से मलाईरानी चिल्लाई, 'मैं कभी तुम लोगों के निजी मसलों में दखल नहीं देती।' यह सुन चीनी और पत्ती दोनों एक-दूसरे की तरफ देखते हुए जैसे ही कुछ बोलने को हुईं, मुँह से धुआँ निकालते हुए चाय की केतली फटफटाई, छलनी भी कम न थी, तभी जलती गैस भी कुछ बोलने को उद्यत हुई, फिर माचिस रानी क्यों रुकती भला और फिर कप, प्लेट, ट्रे सभी क्रेडिट लेने के लिए उठ खड़े हुए। सभी के बीच क्रेडिट लेने की होड़ मच गई।

मौके की नजाकत को समझ, समझदारी दिखाते हुए खौलती हुई चाय ने अपनी मुसकान फेंकते हुए चीनी के सामने बाँह पसारकर कहा, 'आ जाओ, आ जाओ मेरे जीवन की मिठास, मेरी आगोश में आ जाओ, सच तो यह है कि अपने आप पर इतराती मैं कभी तुम्हारे वजूद को समझ ही न सकी। अगर हम अलग-अलग अपनी वजूद तलाशेंगी तो यों ही धुलकर खत्म हो जाएँगी और दूसरे हमारी इस बेवकूफी का फायदा उठा ले जाएँगे।'

आगे वह बोली, 'हमें हर किसी के महत्त्व को समझना चाहिए, यह कहते हुए चीनी हमेशा-हमेशा के लिए पानी में विलीन हो गई और गुडबाय कहने से पहले बोली, 'आखिर उद्देश्य तो हमारा एक ही था।'

७/२०२ स्वरूप नगर
कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७६०७३४५६७८

कहानी

एक रुपए में खुशी

● सत्य प्रकाश भारतीय

न जाने क्यों, आज मेरा मन बहुत प्रसन्न है। झूमते-झामते चला जा रहा हूँ। मैंने रिसैस में थोड़ा टिफिन लिया है थोड़ा बाहर जाकर खाने के लिए। दसवीं मंजिल से लिफ्ट से सीधे नीचे उतरकर कोलकाता हाईकोर्ट के पास से गुजरता हुआ किरण शंकर राय रोड पर आ गया। सड़क के दोनों ओर खाने-पीने की गुमटियों की भरमार है। रास्ते में इस समय मुसाफिरों के रूप में सिर्फ खानेवाले ही विचरण कर रहे हैं। रास्ते से गुजरते समय किसी के मुँह में भोजन सहित पहुँचता हुआ हाथ बदन से टकरा जाता है तो वह अपने हाथ सिकोड़ता हुआ थोड़ा दूसरी तरफ खिसक जाने के सिलसिले में किसी अन्य से टकरा जाता है। कोई तंदूरी रोटी खा रहा है तो कोई हरी-मटर की कचौरी गरमागरम। छोले-भटूरे की दुकान तक आते-आते तो पेट भर खाने के बाद भी क्षुधा उत्पन्न होती प्रतीत होती है। पहले से ही टिफिन में गले तक खाने के बाद तो शायद ही किसी को फिर से खाने की इच्छा हो। एक इंच भी जगह पेट में नहीं बची है। मैं चुपचाप आगे बढ़ता जाता हूँ। बगल में ही फलवाले की दुकान को देखकर अपने आपको रोकना मुश्किल हो जाता है। मैं बिना कटे दो फल लेता हूँ और जलेबीवाले की दुकान से पानी लेकर उस पर गिराता हूँ तथा खाते-खाते यह कहते हुए चल देता हूँ कि भाई साहब, आज जलेबी नहीं खानी है। जलेबीवाला मुसकरा देता है। बढ़ते-बढ़ते जब एजी बंगाल के ऑफिस के पास पहुँचता हूँ तो रुक जाता हूँ। देखता हूँ, बुढ़ापे में कदम रखता हुआ एक व्यक्ति। उसके चेहरे पर झुर्रियों ने दस्तक देकर अपना अड्डा जमा लिया है। उसके बदन का रंग साँवले से बढ़कर कोयले की तरफ अग्रसर है। कपड़े फटकर चिथड़ा बनने के कगार पर हैं, पेट भूख को सहन करने के बाद अंदर पीठ की ओर धँसता हुआ। जमीन पर ही कुछ औजार रख जीवन की लड़ाई लड़ने की खातिर लोगों के जूतों को साफ कर आईने की हद तक चमकाने के लिए चुपचाप खाली बैठे ग्राहकों के इंतजार में आराम करने की मुद्रा में है।

ऐसी हालत में मुझे अपने जूतों पर गंदगी के अलावा कुछ नहीं दिखाई देता है। मैं अपने जूतों को पॉलिश करवाने के चक्कर में उसके आराम करने की मुद्रा को भंग कर देता हूँ। लकड़ी के बने उसके बॉक्स के ऊपर पूलनुमा बनावट पर अपने जूतों सहित पैर रखते हुए मुझे तनिक भी संकोच नहीं होता है कि यह व्यक्ति तो हमारे दादाजी की उम्र में प्रवेश करता हुआ एक मनुष्य है। इससे मैं अपना पैर···। यह तो हमारी संस्कृति

'मरुतृण' साहित्य पत्रिका के संपादक। पत्र-पत्रिकाओं में कविता, कहानी, लघु कथाएँ आदि प्रकाशित। संप्रति उद्योग निदेशालय, प.बं. सरकार में कैशियर।

में नहीं है तो फिर यह···। मुझे देखकर उसकी अर्ध-निद्रावाली तंद्रा टूटती है। मेरे पैर सहित जूतों को अपने कब्जे में लेकर वह अपना काम शुरू कर देता है। उसके पेट की तरफ मेरी नजर नहीं जाती। मैं अपने पेट में अब एक चीज भी न डाल पाने और उसके पेट में कुछ भी न पड़ पाने के कारणों में अंतर नहीं कर पाता हूँ। बड़ी तन्मयता से उसने अपना कार्य प्रारंभ कर दिया। उसकी एकाग्रता अपने जूतों पर देख, मेरी एकाग्रता उसके हाथों तथा उसकी कार्य प्रणाली पर जा टिकती है। सबसे पहले वह जूतों से धूल-कण को इतनी बारीकी से हटाना प्रारंभ करता है, जैसे कोई माँ अपने बच्चे को धूल से उठाकर उसे ध्यान से साफ करती हो।

मुझे अब न उसका सूखा चेहरा दिखाई देता है और न ही उसका पीठ में धँसा पेट ही और न ही चारों तरफ की चहल-पहल दिखाई देती है। मुझे उसकी निगाहें, जो जूतों पर टिकी हैं और उसके हाथ जो बिना रुके जूतों में लगे हैं, वे ही दिखाई देते हैं। जितनी तन्मयता से वह क्रीम और पॉलिश जूतों पर लगा रहा था, उतनी तन्मयता से तो शायद मेरी पत्नी भी शृंगार के लिए अपने चेहरे पर ध्यान देती हो। उसकी जैसी एकाग्रता तो हम अपने कार्य में कभी भी शायद ही करते हों, क्योंकि कार्य के समय हम लोग दूसरों से बातें कर लिया करते हैं, मगर यह अपने कार्य में इतना मग्न है कि उसे आस-पास का कुछ भी दिखाई नहीं देता है। उसे तो हमारी तरफ देखने की भी फुरसत नहीं है। इसलिए उसे पता ही नहीं चलता है कि मेरी निगाहों ने उसे पूरी तरह बहुत देर से अपने कब्जे में कर रखा है, जैसे हमें पता नहीं होता कि हमें कौन-कौन हमेशा कब्जे में किए रहते हैं। कभी हमें कोई नेता अपने कब्जे में कर लेता है तो कभी कोई सरकारी ऑफिसर अपने कब्जे में, तो कभी कोई दुकानदार। इस वक्त मैं उसे अपने कब्जे में कर रहा हूँ। वह पूरी निष्ठा और लगन से अपना कार्य पूरा करता है और अंतिम बार मेरे जूतों को हल्के से ऐसे हटाता है, जिससे

उसकी जुबान से बिना कुछ कहे ही पता चल जाता है कि जूता पॉलिश हो गया है। उस हल्के से झटके का मतलब ऐसा प्रतीत होता है, मानो वह कह रहा हो कि अब तो अपने गरुड रूपी जूते को मेरे सामने से हटाओ, जो तुमने मेरे सामने अपने पैर समेत रखे हैं। मेरे पेट की मार ने मुझे यह भार सहने पर मजबूर कर रखा है। मेरे हाथों ने संघर्ष कर कुछ देर के लिए इस भार को हटा दिया है।

मैं जब अपनी निगाहें उसके चेहरे से अपने जूतों की तरफ दौड़ाता हूँ तो पाता हूँ कि अब वह इतना चमक रहा है कि अपना चेहरा पूरा नहीं देख सकता हूँ तो कम-से-कम चेहरे की हकीकत तो उसमें महसूस कर सकता हूँ। उसपर एक कर्मठ व्यक्ति की मेहनत का पसीना है। उसकी हाथों की सफाई अब मेरे जूतों पर चमकने लगी है। मैं पूछता हूँ, कितने हुए?

'पाँच रुपए।' वह कहता है।

मैं मन-ही-मन प्रसन्न हूँ कि चलो, पाँच रुपए में काम हो गया। नहीं तो अन्य जगह कोई शायद दस रुपए से कम न लेता। मैं अपना पॉकेट टटोलता हूँ तो पाता हूँ कि पाँच के सिक्के के साथ एक का सिक्का भी हाथ आ गया है। मैं दोनों को निकालता हूँ और अनायास ही एक साथ जोड़कर दे देता हूँ, अपने आप को सदियों से चली आ रही दान परंपरा के आदर्शों को ध्यान में रखते हुए। उसपर एहसान जताते हुए किसी नेता की तरह मनोभाव रखते हुए मैं कहता हूँ, 'आपने अच्छा काम किया, इसलिए छह रुपए रख लीजिए।' किसी काम को स्वयं होता देखकर या किसी अन्य द्वारा संपूर्ण होता देखकर कोई नेता उसके क्रेडिट को अपने हवाले जिस प्रकार करने की कोशिश करता है, उसी प्रकार मैंने कहा, 'काम आपका पाँच रुपए से ज्यादा का हुआ है। इसलिए आप छह रुपए ही रख लीजिए। आपने जो काम किया है, वह छह रुपए से ज्यादा का है।'

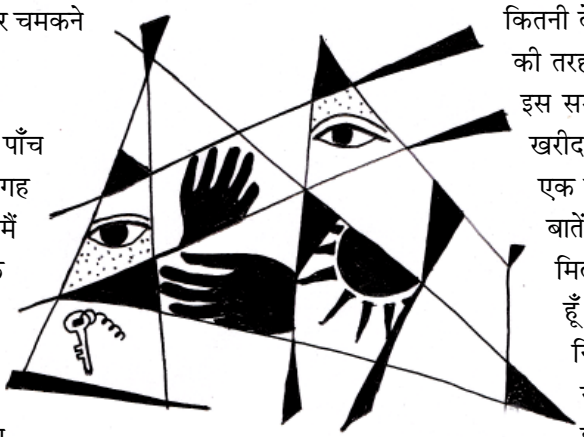

एक रुपया ज्यादा पाकर उसके चेहरे पर खुशी ऐसे छा गई, जैसे वह सोने की खान पा गया हो। कोई बाप-दादा के गड़े धन पाकर भी शायद ही इतना खुश होता होगा। मुझे तो उसे देखकर यहाँ तक आभास हो जाता है कि उसे राह में पड़ा कोई सोने का सिक्का हाथ लग गया हो। खैर, मुझे चाहे जो भी महसूस हो रहा हो, उसके चेहरे पर अजीब सी मुसकराहट है। उसकी निगाहें खुशियाँ समेटकर छिपाने में लगी हैं। उसके चेहरे की सारी मांसपेशियाँ चहक उठी हैं। अजीब सा कुरूप दिखनेवाला उसका चेहरा ऐसे खिल उठा है कि मुझे आनंद का अनुभव देने लगा है। बिना प्रयास के मुसकराहट, देखनेवाले को इतनी खुशी देती है, इसका आभास अभी-अभी हुआ है, जो किसी मल्टीनेशनल कंपनी के रिसेप्शन में बैठे किसी सुंदरी के बनावटी गाल की मांसपेशियों को सिकोड़कर लाई गई मुसकराहट से सर्वदा भिन्न है।

उसकी एक पल की खुशी देखकर अपना हृदय न जाने क्यों गद्‌गद हो जाता है और हल्का मीठा सा दर्द लिये झूमते कदम और भीगे नयनों से उसे देखने में लग जाता है। एक वाक्य में कहूँ तो हृदय प्रसन्न हो उठा है। मुझे एहसास हो रहा है कि एक रुपए में उसका तो कुछ नहीं होने वाला, पर मैंने अपने हृदय के लिए खुशियाँ खरीद ली हैं। बिन माँगे ही न जाने किसने यह दे दी है। माध्यम तो जूते सिलनेवाले के रूप में सामने दिखाई दे रहा था, मगर उसका स्रोत नहीं दिखाई दे रहा था। मेरा हृदय उसकी खुशी देखकर इतना प्रसन्न था कि मुझे यकीन ही नहीं हो रहा था कि एक रुपए में इतनी बड़ी खुशी हासिल की जा सकती है। खुशी खरीदना! वो भी एक रुपए में! इतना आनंददायी हो सकता है! मुझे तो अब तक ज्ञात नहीं है। हाँ, अब हो चला है। पता नहीं, कितनी देर तक रहेगा। यह जरूर एक रुपए के कपूर की तरह उड़ जाएगा। खैर, बाद की बाद में देखेंगे! इस समय तो मैं एक रुपए में इतनी सारी खुशियाँ खरीद कर गद्‌गद हो गया हूँ। मैं जान-बूझकर वहाँ एक पल और रुक जाता हूँ, उससे यहाँ-वहाँ की बातें करता रहता हूँ। उसे खुश देखकर जो खुशी मिल रही है, उसे अच्छी तरह बटोर लेना चाहता हूँ। बातें तो मैं उससे कर रहा होता हूँ, मगर मेरी निगाहें उसके चेहरे पर हैं। इस तरह तो कोई नवयुवक किसी नवयुवती से बातें करता ही होगा।

इस एक रुपए में खरीदी खुशी का चस्का ऐसा लगता है कि मैं हर सप्ताह उसके पास जाने लगता हूँ। जूते पॉलिश करवाने और उसे पाँच रुपए की जगह एक रुपया ज्यादा, छह रुपए देकर, उसे खुश देखकर स्वयं खुश होने की चाह रखने लगता हूँ। उसके बाद जब भी उसके पास जाता हूँ तो मुझे देखते ही उसके चेहरे पर हल्की सी प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती है, मगर होती वह क्षणिक है, क्योंकि मुझे उस पहले दिन वाली खुशी की तलाश रहती है। परंतु वह मिलती नहीं है। अगली बार मैं जब कभी भी उसके पास जाता हूँ, पहले की तुलना में मुझे कम खुशी मिलती है। मुझे लगता है कि यह सब रुटीन में बदल गया है। अब मुझे यह सब आम घटना की तरह जैसे कहीं भी जूते पॉलिश करवाने जैसा लगने लगता है। यह क्या हुआ, पहले दिन तो लगा था कि यहाँ खुशियाँ क्षय होनेवाली हैं। बाहर तो सबकुछ पहले जैसा ही रहता है। हम ही अपने अंदर सब अपने अनुसार ही बदल लेते हैं और दोष देने लग जाते हैं किसी दूसरे को। मुझे उसके जूते पॉलिश करने में अब तन्मयता भी कम दिखाई देने लगती है या यह भी हो सकता है कि वह सचमुच पहले से कम मन लगाकर काम करता हो। इसका निर्णय करना मेरे बस की बात नहीं है। मुझे लगता है कि वह अपना काम जल्दी-जल्दी निपटाकर पैसे लेने के चक्कर में रहता है। अब मुझे अपने जूतों की चमक भी नहीं दिखाई देती है। मुझे लगता है कि जूते अब बिना पॉलिश के जितना चमक रहे होते हैं, पॉलिश के बाद भी वैसे ही हैं। मेरे मन में विचार उठता है कि अब इसे एक रुपया देने से क्या फायदा। मैं एक रुपए

में भी लाभ-हानि का सौदा करने की सोचने लग जाता हूँ।

आज फिर मैं टिफिन लिये उसके पास पहुँचता हूँ, बाहर का सारा वातावरण वैसा ही है, जैसे पहले दिन था। समोसे, कचौरियों की क्षुधा-उत्तेजक सुगंध आज भी है। मगर मेरे मन पर जूता पॉलिश करवाने का बोझ वैसे ही है, जैसे मेरे कार्यालय में एक ही तरह के काम रोज-रोज करने से होता है। इससे पहले मैंने उससे कभी पूछा नहीं था कि कितने देने हैं आपको? लेकिन आज मैं यह प्रश्न कर बैठता हूँ, जिससे मेरी मनसा साफ झलकती है, जिसे भाँपने में उसे तनिक भी देर नहीं लगती है कि मैं आज से उसे एक रुपया ज्यादा नहीं देना चाहता हूँ। उसने कहा, 'आप से दाम क्या कहना? देना चाहते हैं तो सिर्फ पाँच रुपए ही दे दीजिए, मैं तो पाँच रुपए ही सबसे लेता हूँ। आपसे अब क्या कहना है!' यह अंतिम वाक्य वह ऐसे कहता है, मानो उसे किसी ने थप्पड़ मार दिया है, जिसे सहना उसकी मजबूरी है। उसे तो यह भी नहीं समझ आता है कि यह एक रुपए का साम्राज्य उसने तो तैयार नहीं किया था, तो उसे ढह जाने का दु:ख उसे क्यों भुगतना पड़ रहा है। अगर उसे इसकी समझ होती तो वह हमसे जरूर यह प्रश्न करता। मगर हम बुद्धिजीवी तो बहुत सारे प्रश्न करने ही नहीं देते हैं। जिस प्रकार किसी संभाषण में कोई नेता जनता को कोई प्रश्न ही नहीं करने देता है। जो भी वह मंच पर बक देता है, उसे सुनने की हमारी मजबूरी होती है। इस समय तो उसके पास कोई प्रश्न ही नहीं है तो वह करेगा कहाँ से।

इस एक रुपए में खरीदी खुशी का चस्का ऐसा लगता है कि मैं हर सप्ताह उसके पास जाने लगता हूँ। जूते पॉलिश करवाने और उसे पाँच रुपए की जगह एक रुपया ज्यादा, छह रुपए देकर, उसे खुश देखकर स्वयं खुश होने की चाह रखने लगता हूँ। उसके बाद जब भी उसके पास जाता हूँ तो मुझे देखते ही उसके चेहरे पर हल्की सी प्रसन्नता की लहर दौड़ जाती है, मगर होती वह क्षणिक है, क्योंकि मुझे उस पहले दिन वाली खुशी की तलाश रहती है। परंतु वह मिलती नहीं है। अगली बार मैं जब कभी भी उसके पास जाता हूँ, पहले की तुलना में मुझे कम खुशी मिलती है। मुझे लगता है कि यह सब रुटीन में बदल गया है।

इस दिन मैं सिर्फ पाँच रुपए ही देता हूँ। और उसके कुछ न कहने पर भी अपना पक्ष मैं जबरदस्ती रखने की कोशिश करता हूँ, 'अब आपकी पॉलिश उतनी अच्छी नहीं होती है। जूता चमकता ही नहीं है!' मेरी आवाज में झल्लाहट थी। मन में खिन्नता थी, अनिच्छा थी। और उसके चेहरे पर फिर वही झुर्रियाँ, बदन पर वही गंदगी, पेट के लिए दूसरों के जूतों पर गिरने की विवशता थी। मेरे चेहरे पर एक बुजुर्ग को अपने जूतों पर गिराने की ग्लानि ने कब्जा जमाना चाहा; लेकिन वह मेरे ही मन द्वारा बनाए गए खिन्नता के विशाल साम्राज्य में विलीन होता चला गया।

१५ नापित पाड़ा मेन रोड, बिधान पल्ली
बैरकपुर, पो. मोना चंदनपुकुर
कोलकाता-७००१२२
दूरभाष : ९२३१८४१२७५

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

सेवा परमो धर्मः

● चितरंजन लाल भारती

शास्त्रों की एक प्रसिद्ध उक्ति है 'सेवा परमो धर्मः' अर्थात् सेवा ही सबसे बड़ा धर्म है। मूलतः मनुष्य कर्मवादी है। वह जाने-अनजाने कुछ-न-कुछ कार्य करता ही करता है। भला इससे कौन इनकार कर सकता है कि हम कर्म नहीं करते अथवा करना नहीं चाहते। गीता की उक्ति है—

न हि कश्चिक्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मवत्
कार्यते हयवशं कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।

अर्थात् कोई भी व्यक्ति क्षण भर के लिए भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता। प्रकृति से उयन्न गुणों के कारण प्रत्येक व्यक्ति को विवश होकर कर्म करना ही पड़ता है।

मगर यह कार्य सकारालक, सृजनालक और समाजसमत होना चाहिए, तभी उस कार्य की सार्थकता है। और इसलिए गीता में 'निष्काम कार्य' की बात कही गई है। फल की इच्छा किए बिना कार्य करना ही 'निष्काम कार्य' है और यह अपने कार्यों में सेवा-भाव अपनाने से ही प्राप्त होता है। वैसे कहा गया है कि उच्च विचार और विराट् हृदय होने से ही सेवा सधती है।

विश्व के किसी भी धार्मिक ग्रंथ एवं उसके विद्वानों के विचारों को देखने से मूल रूप से यही सेवा भाव दिखाई देते हैं। सत्य, अहिंसा, करुणा, क्षमा, त्याग, सहनशीलता, निरासक्ति आदि व्यक्ति को इसी ओर ले जाते हैं। सभी धर्मों के महापुरुषों ने इस पर व्यावहारिक अमल किया तो वे समाज-स्वीकृत, आदरणीय एवं वंदनीय बन गए। भारतीय संदर्भ में देखें तो मध्यकाल के सभी भक्त कवि यही भाव लेकर अपने पथ पर आगे बढ़ते रहे और उनका एक कारवाँ बनता गया। १९वीं सदी में सभी भारतीय समाज सुधारक इसी दिशा में आगे बढ़े और सती-प्रथा, जाति-प्रथा, बाल-विवाह, विधवा-विवाह, स्त्री-शिक्षा से लेकर पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ने तक का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। राजा राम मोहन राय, विवेकानंद आदि से शुरू होकर ये सभी सद्कार्य महात्मा गांधी और सुभाष चंद्र बोस आदि द्वारा संपन्न किए गए और इस परंपरा को विनोबा भावे और जयप्रकाश नारायण जैसे महापुरुषों ने गतिशीलता प्रदान की। बाबा आप्टे, मदर टेरेसा आदि ने निस्सहाय दीन-दुःखी, बीमारों की सेवा-सुश्रुषा शुरू की, तो उनके समर्थन में एक विशाल जमात सी खड़ी हो गई। इन सभी महापुरुषों के सेवा कार्यों का ही परिणाम है कि वर्तमान भारतवर्ष एक सुखी, संपन्न और सशक्त राष्ट्र है।

जाने-माने साहित्यकार। अब तक 'किस मोड़ तक', 'अब और नहीं' (कहानी-संग्रह); 'आम जनता के लिए' (लघुकथा-संग्रह); 'नई यात्रा' (उपन्यास) प्रकाशित। 'अखिल भारतीय प्रगतिशील लघुकथा मंच सम्मान' तथा 'आचार्य' की उपाधि से सम्मानित।

मगर इस सेवा भाव की जरूरत विश्व में हमेशा रही है और रहेगी, क्योंकि यह प्रकृति का नियम है कि कुछ विध्वंसात्म तत्त्व समाज में हमेशा उपस्थित रहेंगे। यह प्रकृति प्रदत्त अकाल, बाढ़, तूफान, आगजनी आदि और मनुष्य निर्मित युद्ध, दंगा, संघर्ष आदि कुछ भी हो सकता है। ऐसे वक्त में इस सेवा-भाव के द्वारा मनुष्य को इन विपत्तियों से बचाया जा सकता है, बचाया जाता है। विनोबा भावे का कथन है, 'सृष्टि के अस्वस्थ भाग की सेवा करने से पूरी सृष्टि की सेवा होती है।'

मनुष्य मूलतः अहिंसक, सात्त्विक विचारोंवाला है। दूसरों के दुःख को देखकर स्वाभाविक ही कठोर-से-कठोर हृदयवाले व्यक्ति के मन में भी करुणा उपजती है और वह सेवा भाव की ओर प्रवृत्त होता है।

कृष्ण यर्जुर्वेद के शारीरिक उपनिषद् का एक प्रथम मंत्र है—

ॐ सहनाववयुत्। सह नौ भुनवतु। सह वीर्यमू करवावहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्धिषावहै। ॐ शान्ति शान्ति शान्ति।

अर्थात् हे परमशक्ति! हम सभी की रक्षा करो। हम सभी को पुष्ट करो। हम सभी पूरी ऊर्जा के साथ कर्मशील रहें। हमारा अध्यवसाय कारगर हो। हम आपस में झगड़ा नहीं करें। एक-दूसरे से ता नहीं करें। ॐ शान्ति शान्ति शान्ति।

शांतिपूर्ण सहजीवन के इस मंत्र से भला कौन इनकार कर सकता है। फिर भी नकारात्मक शक्तियाँ अपनी सत्ता बढ़ाने और अपने अहं को संतुष्ट करने के लिए विध्वंसात्मक कार्य, यथा—युद्ध एवं दंगे-फसाद जैसे कार्यों की ओर प्रवृत्त रहती हैं। ऐसे कठिन वक्त में कुछ ऐसे समाज-सेवक आगे बढ़कर अपना कार्य कर पुनः सामाजिक समरसता को पटरी पर लाने का प्रयत्न करते हैं। साथ ही वे हमसे भी ऐसी ही अपेक्षा रखते हैं। ऐसे गाढ़े वक्त में हमें उन्हें हर संभव नैतिक, शारीरिक और आर्थिक मदद करना हमारा कर्तव्य बन जाता है। ऐसे वक्त में यह

सवाल भी उठता है कि हम क्या करें, जो सात्त्विकता से परिपूर्ण हो और तब गीता का यह निम्न श्लोक हमारा मार्गदर्शन करता है—

नियतं संगरहितमरागद्वषतः कृतम्।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्मात्त्विकमुच्यत॥

अर्थ—वह कर्म, जिसे करना आवश्यक है, जिसे आसक्ति के बिना किया जाता है और जिसे राग-द्वेष से शून्य होकर फल की इच्छा से रहित व्यक्ति द्वारा किया जाता है, सात्त्विक कर्म कहलाता है।

महात्मा गांधी हमेशा साध्य को पाने के लिए साधनों की पवित्रता पर विशेष ध्यान देते थे। उनका संपूर्ण कार्य इन्हीं सिद्धांतों पर आधारित रहा। कहना नहीं होगा कि इसलिए वे बहुत कुछ कर पाने में समर्थ हुए। अनेक सामाजिक दोषों के परिमार्जन में वे सफल हुए। उन्होंने हमेशा सर्वधर्म समभाव पर जोर दिया। उनके प्रिय भजन का बोल ही था—'वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीर पराई जाने रे।' अर्थात् ईश्वर-भक्त वही है, जो दूसरों की तकलीफ को जान सकता हो, अपना मान सकता हो, क्योंकि जिस व्यक्ति के मन में यह भाव-बोध आएगा, उसमें तामसिक प्रवृत्तियाँ जन्म नहीं ले सकतीं। वह सत्कार्यों के प्रति सेवा भाव लेकर स्वमेव उन्मुख होगा।

कुछ सफल भी होते हैं, मगर अंतिम स्थिति निराशाजनक रहती है, तो सिर्फ इसलिए कि वह सिर्फ 'स्व' की तरफ देखने लगते हैं। उनपर उनका अहं हावी हो उठता है। इसी को लक्षित कर विवेकानंद ने कहा कि 'अपने भाइयों के नेतृत्व का नहीं वरन् उनकी सेवा करने का प्रयल करो। नेता बनने की इस क्रूर उन्मत्ता ने बड़े-बड़े जहाजों को इस जीवन रूपी समुद्र में डुबो दिया है।' आगे उनका कथन है 'कुछ मत माँगो, बदले में कुछ मत चाहो। तुम्हे जो देना है, दे दो। वह तुम्हारे पास लौटकर आएगा, पर अभी उसकी बात मत सोचो। तुममें केवल देने की शक्ति है, दे दो। बस, बात यहीं पर समाप्त हो जाती।'

ऐसा दिखता है जैसे वर्तमान समय में यह सेवा-भाव तिरोहित हो चला है। वर्तमान समय में जो भी सामाजिक संदर्भ में सेवा कार्य करता है, कालांतर में वह कुछ महत्त्वाकांक्षाएँ पाल बैठता है और उसकी प्रतिपूर्ति के लिए राजनीतिक सत्ता प्राप्त करना चाहता है। कुछ सफल भी होते हैं, मगर अंतिम स्थिति निराशाजनक रहती है, तो सिर्फ इसलिए कि वह सिर्फ 'स्व' की तरफ देखने लगते हैं। उनपर उनका अहं हावी हो उठता है। इसी को लक्षित कर विवेकानंद ने कहा कि 'अपने भाइयों के नेतृत्व का नहीं वरन् उनकी सेवा करने का प्रयल करो। नेता बनने की इस क्रूर उन्मत्ता ने बड़े-बड़े जहाजों को इस जीवन रूपी समुद्र में डुबो दिया है।' आगे उनका कथन है 'कुछ मत माँगो, बदले में कुछ मत चाहो। तुम्हे जो देना है, दे दो। वह तुम्हारे पास लौटकर आएगा, पर अभी उसकी बात मत सोचो। तुममें केवल देने की शक्ति है, दे दो। बस, बात यहीं पर समाप्त हो जाती।'

यह आवश्यक है कि व्यक्ति समाज-सेवा हेतु व्यष्टि के बजाय समष्टि की ओर देखे। ऐसे समय में महात्मा गांधी द्वारा प्रदत्त जंतर को ध्यान में रखना चाहिए, जो यह है कि 'जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे तो यह कसौटी आजमाओ—जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितनी उपयोगी होगी। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुँचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा, जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है? तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

सेवा-भाव के कारण ही हनुमान श्रीराम के और अर्जुन कृष्ण के प्रिय बन गए। कबीर, सूरदास, तुलसीदास, चैतन्यदेव, शंकरदेव, माधवदेव, तुकाराम आदि भक्त-कवि अपने गुरु से भी अधिक उच्चत्त्व को प्राप्त किए। गौतम बुद्ध और महावीर की शालीनता और सेवा-भाव ने एक समय संपूर्ण जगत् को अपने दायरे में ले लिया था। ईसा मसीह के प्रेम, करुणा और सौहार्द ने लगभग आधे विश्व को अपने आगोश में ले लिया। मुहमद साहब ने भी यही रास्ता अपनाया और पवित्र कुरान में इन्हीं सद्गुणों को थोड़े हेर-फेर के साथ रखा गया।

धन, ज्ञान और ताकत कुछ ऐसी चीजे हैं, जिन्हें प्राप्त कर मनुष्य अहं में भर उठता है। ऐसे में दुर्जन व्यक्ति इनका दुरुपयोग करता है तो सज्जन उनका सदुपयोग कर समाज की सेवा करते हैं। प्रस्तुत श्लोक देखें—

विद्या विवादाय धनं मदाय शक्तिः परेषां परपीडनाय।
खलस्य साधोविपरीतमेतत् ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय॥

इसका अर्थ यह है कि दुष्ट ज्ञान का उपयोग विवाद उत्पन्न करने में, धन का उपयोग विषयासक्ति हेतु एवं ताकत का उपयोग दूसरों को पीड़ा पहुँचाने के लिए करते हैं। जबकि सज्जन पुरुष इनका उपयोग इसके उलट ज्ञान प्राप्ति, दान एवं रक्षण कार्य हेतु किया करते हैं। वैसे सामान्य सेवा कार्यों को भी यदि व्यक्ति जीवन पर्यंत करता रहे तो उसका अहं भाव समाप्त होकर उसके लिए आध्यात्मिक उत्थान का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। सीधी सी बात है, इनके द्वारा निष्काम भाव से सेवा की जा सकती है। वर्तमान समय में आज भी अनेक सज्जन लोग क्या गाँव, क्या शहर यह निष्काम सेवा करते भी हैं। बस आवश्यकता इस बात की है कि हम भी उनके इस निष्काम सेवा में अपना हाथ बँटाएँ, ताकि उनको संबल मिल सके।

क्वार्टर नं. बी-१५२, एच.पी.सी. टाउनशिप
पो. ग्राम, असम-७८८८०२
दूरभाष : ९४०१३७४७४

ललित-निबंध

कविता और सोच

● पंकज परिमल

बिना सोच के कविता नहीं होती। कविता है तो सोच है। अगर सोच के बारे में गहराई से जानना हो तो यह रोचक लग सकता है कि मूल शब्द 'शोच' या 'शोक' है। मैं यह कोई भाषाशास्त्रीय स्थापना नहीं दे रहा हूँ। कुछ लोगों को ये दो शब्द अर्थ की दृष्टि से भले ही तीरघाट और मीरघाट लगें, पर मेरी दृष्टि में तो एक जैसे हैं, ज्यादा से ज्यादा जीवात्मा और परमात्मा की तरह सखा-सहोदर जैसे। आह्लाद के बारे में क्या सोचना? सोच है तो शोकप्रद बातों की ही। शोक होगा जानेवाले के प्रति या जो चला गया है उसके प्रति। पर हर जानेवाला शोचनीय नहीं है। इसे कैकेयी का अशोच्य हठ कह लें कि 'कोसलेस नहिं सोचे जोगू' या 'सोचिय बिप्र जो वेद न जाना'। निस्संदेह ऐसे विशिष्ट लोग शोचनीय हैं, जो ज्ञान की परछाईं तक से रहित हैं।

शोक अर्थात् विषण्णता का भाव, विषाद और शोक का भाव, उद्विग्नता, चिंता, एंक्जाइटी। कविता इसी 'एंक्जाइटी' में कहीं जन्म लेती है। जो 'एंक्जाइटी' से जन्म न ले, वह भी क्या कविता? आज के समय की हमारी कोशिश इस 'एंक्जाइटी' के विरुद्ध है। अत: ये कोशिशें जाने-अनजाने कविता के विरुद्ध भी हैं। तरह-तरह की चिंताएँ हैं इस समय में, तरह-तरह के अवसाद। देह के ही नहीं, परिवार के क्लेश, अर्थ की अपर्याप्तता के क्लेश ही नहीं, अर्थ की प्रचुरता के क्लेश भी। अर्जुन कहते हैं—अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीमाभिरक्षितम्। भीम की सुदृढ अगुवाई में हमारे पास बल तो बहुत है, पर अपर्याप्त है। उधर भीष्म की अगुवाई में जो सेना है, वह प्रचुर है, पर्याप्त है। शब्द के भार की दृष्टि से भले ही भीष्म और भीम का भार बराबर हो, पर भीष्म में एक अर्धाक्षर आधा 'ष' तो ज्यादा है ही। रंचमात्र भी किसी के पास ज्यादा हो, यह हमारे अवसाद का कारण बन जाता है। दूसरे की थाली में सबको घी ज्यादा दिखाई देता है, अपनी में कम। एक भाषा-शास्त्र के अध्यापक का अवसाद यह है कि पद, वेतन-भत्ते समान होते हुए भी विज्ञान के अध्यापक का जीवन सुधरा हुआ है। एक कमाऊ चिकित्सक का अवसाद यह है कि रात के बारह-एक बजे भी लोग चैन नहीं लेने देते। कोई सोचे नहीं, किसी को कोई अवसाद न हो, यह असंभव न भी हो, पर है बड़ा मुश्किल। महादेवी एक बार बता रही थीं—डॉक्टर कहता है, बोलो मत, यह हो सकता है। लिखो मत, यह भी हो सकता है। पढ़ो मत, यह भी संभव है। पर डॉक्टर कहता है—सोचो मत, यह कैसे संभव है, यह तो हो ही नहीं सकता। आज के समय में चिकित्सा शास्त्र का सारा द्रविड़ प्राणायाम मनुष्य को इस घनीभूत पीड़ा की स्मृति तक से मुक्त करने के लिए है। ये पीड़ाएँ अब दुर्दिन के आँसू या कविताएँ बनकर नहीं बरसेंगी। इस बात की पूरी तैयारी कर ली गई है। तरह-तरह की मन: प्रसादक, एंक्जियोलाइटिक दवाओं से बाजार पटा पड़ा है—

रोज रात को गोली खा-खाकर,
दूर करो चित्त के अवसाद सघन।

अन्न भी न मिले तो चिंता काहे की, गोली है न। ये गोली अन्न के अभाव में तेरे जीवन को गाली बनने से रोक लेगी—

अन्न जरा सा और दवाएँ ज्यादा खा,
अब कहता है वैद्य, भूख से आधा खा।

बड़े-बूढ़े नहीं, बच्चे तक चिंतामग्न हैं, इस बात की चिंता नहीं कि उनका बचपन खो रहा है, अपितु इस बात की गंभीर सोच कि कहीं वे कॅरियर की दौड़ में पिछड़ तो नहीं रहे। योग्यतम की उत्तरजीविता के नियम-काल में कहीं योग्यता के अपेक्षाकृत निचले पायदान पर तो नहीं खड़े।

विद्वत्ता और ज्ञान शोक से मुक्त करते हैं। इसी विचार से बच्चे दिन-रात का भेद भुलाकर कहीं भलीभाँति प्रयत्न करके उत्तमोत्तम ज्ञान को प्राप्त करने में लगे हैं तो कहीं रटंतू शुक बनकर देशी-विदेशी दीक्षाओं-डिग्रियों की शुक-सिद्धि करने में लगे हैं। जानेवाले या बचे हुए के लिए यदि कोई शोक नहीं करता तो वे हैं विद्वान्, पंडित। गतासूनऽगतासूंश्च नानु शोचन्ति पण्डिता:। मूर्ख करते हैं शोक, जानकार और पंडित किसी के लिए शोक नहीं करते। शोक तो मूर्खों की धरोहर है। शोक तब तक बचा रहता है, जब तक मूर्खता जीवित रहती है। निज दु:ख कातरता हो या परदु:खकातरता; यह साधारण मनुष्य के ही बस का है। निज परिताप द्रव नवनीता। पर परिताप संत सुपुनीता। संत दूसरों के दु:ख से विगलित होता है। दु:ख विगलित हो पाता है तो कवि बन पाता है। कवि में इस प्रकार दोनों तत्त्व हुए—मूर्खत्व भी और संतत्व भी। गलती से हम कवि की सारस्वत-साधना को उसका पांडित्य समझ लेते हैं। पांडित्य और कविता—दो विरोधाभासी तत्त्व हैं। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं, पर कवि में मूर्खता और पांडित्य दोनों रहते हैं। कवि की संवेदनशीलता बढ़ती है तो पांडित्य घट जाता है और पांडित्य बढ़ता है तो संवेदनशील होने की मूर्खता कवि कम करता है। लेकिन कवि और कविता जब इन संज्ञाओं से जाने जाते हैं तो अपनी संवेदनशीलता के बल पर, न कि कविता

जाने-माने साहित्यकार। पत्र-पत्रिकाओं में ललित निबंध, लेख, कविताएँ आदि प्रकाशित। आकाशवाणी (नजीबाबाद) से काव्य पाठ। अनियतकालिक रूप से 'मराल' का संपादन-प्रकाशन। संप्रति राजकीय सेवा में चिकित्साधिकारी के पद पर कार्यरत।

में प्रदर्शित प्रकांड पांडित्य के बल पर।

वाल्मीकि को जब कवि चीन्हा गया तो वे विषण्ण थे, पर दु:ख संतप्त थे। उनके मुँह से जो शोकपूर्ण उच्छ्वास निकला, वही श्लोक हुआ। वाल्मीकि पांडित्य के किसी गुरुकुल से स्नातक होकर नहीं आए थे। उनकी दीक्षा संवेदना की शाला में हुई थी। जिस संवेदना से उनके तथाकथित परवंचक और दस्यु जीवन का दूर-दूर तक का संबंध न था। जिस दिन यह संबंध जुड़ गया, उनके नाम से कवि की उपाधि जुड़ गई। अपढ़, कुपढ़ और लगभग मूर्ख ऋषि भी हैं इतिहास में, मसि-कागद और कलम को हाथ न लगानेवाले कवि भी हैं परिदृश्य में। कबीर जितने कवि हैं, उससे कहीं ज्यादा संत। और भी कई हैं। रैदास भी हैं। शस्त्र में ही नहीं, शास्त्र में भी निपुण हैं, पंडित हैं रावण। उच्चतम मेधा का प्रदर्शन करनेवाले उच्च प्रशासनिक पदों पर सोहनेवाले अगर संवेदनशील हो जाएँ तो शासन कैसे चलेगा? रावण अगर संवेदनशील हो जाए तो हर ऐरा-गैरा मुफ्त में लंका जलाकर चला जाएगा। भूषण और चंदरबरदाई कैसे युद्ध कर पाते होंगे, मैं तो यह सोचकर हैरान होता हूँ। वहाँ भी शस्त्र और शास्त्र गुत्थम-गुत्था हैं, संवेदनशीलता और संतत्व गुँथे होते तो शस्त्र तो क्या, युद्ध मुद्रा भी नहीं साध पाते।

मूर्खों की चर्चा से पहले पंडितों की दो-एक बातें। एक तो यह कि नवनीत अपने अंदर के ताप से विगलित होता है। नवनीत है पांडित्य। पांडित्य आत्मोन्मुख होता है, लोकोन्मुख नहीं। उत्कृष्टतम मेधावाले व्यक्ति समाज का नवनीत कहे जाते हैं। ये भी विषण्ण होते हैं, पर इनके संताप नितांत निजी हैं। ये अगर परदु:खकातर हो पाते तो कवि होते या संत होते। संत या कवि होते तो निरे बैल भी कहलाते। संवेदनशीलता का जितना-जितना स्तर घटता जाएगा, उतना-उतना पांडित्य निखरता जाएगा। मनुष्य जितना चंदन भारवाही गधा ज्यादा होगा, उतना शोकवाही बैल कम होगा। पांडित्य व्यावहारिक चीज है, जो व्यवहार के कुछ तयशुदा सिद्धांतों को मानती है, जैसे यह कि विद्या विनय संपन्न ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता और चांडाल; इनके प्रति पंडित समदर्शी होते हैं—

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता: समदर्शिन: ॥

अगर इस पंडित की जगह कोई जड़-मूर्ख या संवेदनशील मनुष्य होता तो वह निस्संदेह चांडाल के दु:ख या मन:स्थिति को एक पंडित के दु:ख या मन:स्थिति से अलग करके आँकता। वह कुत्ते और चांडाल में भी भेद-बुद्धि रखता। वह चांडाल को कुत्ते के समान समझने की समझदारी नहीं दिखाता। पर पंडित यहाँ समदर्शी होने का नीतिगत लाभ ले लेता है। नीतियाँ हमें मनुष्य नहीं रहने देतीं। नीतियों की आवश्यकता पड़ती है, आगे बढ़ने के लिए। नीति अर्थात् जो लेकर आगे बढ़े, फिर चाहे वह राजनीति हो या कूटनीति या कुछ और। मूर्ख तो जड़ होता है। या तो उसे कहीं जाना नहीं होता या ज्यादा से ज्यादा वह प्रतिगामी होता है। विकास वह नहीं जानता। जड़ जो होता है, वही कहता हुआ सुना जाता है—

हम चाकर रघुबीर के, पढ़्यो लिख्यो दरबार।
तुलसी अब क्या होएँगे, नर के मनसबदार॥

उसका यह आदिम मूर्खत्व ही है, जो उससे वह डाल कटवाता है, जिस पर वह बैठा है। जड़ और प्रतिगामी सोचवाला ही है वह, जो सीकरी के राजदरबारों के निमंत्रण को ठुकरा देता है। इस संत या कवि की जगह पंडित होता तो उसने चट से मनसबदारी स्वीकार कर ली होती। सीकरी का निमंत्रण स्वीकारा ही नहीं होता बल्कि आगे बढ़कर सीकरी तक अपना बायो-डाटा और आजकल क्या कहते हैं—रिज्यूम भिजवा दिया होता।

जैसे-जैसे समय और परिपक्वता प्राप्त करके अंडे में से मुरगी का चूजा निकलता है, वैसे ही मूर्खत्व में से पांडित्य निकलता है। जड़ कालिदास में से कविश्रेष्ठ पंडित कालिदास निकलते हैं। जैसे-जैसे पांडित्य बढ़ता है, मूर्खतावाली, परदु:खकातरता वाली संवेदनशीलता का शुभ्र खोल छूटता जाता है। आयुर्वेद में उल्लेख है कि जिन दिनों में सूर्य का बल घटता जाता है, मनुष्य का देह-बल बढ़ता जाता है और जब सूर्य का बल बढ़ता जाता है, मनुष्य का देह बल घटने लगता है। पांडित्य के बढ़ने के साथ मनुष्यत्व का घटना ऐसा ही है।

जब मनुष्य में अपराध-बोध बढ़ता है तो एक व्यग्रता बढ़ती है, उसकी मूर्खता बढ़ती है, उसका कवि बढ़ता है। वह ऐसी-ऐसी बातें सोच जाता है, जिनका सोचना ही अस्वास्थ्यकर, अप्रीतिकर और अव्यावहारिक होता है। व्यावहारिकता का तकाजा तो यह है कि वह कुछ भी न सोचे। कृष्ण अर्जुन से बार-बार यही कहते हैं—'मा शुच:'। सोच मत कर, शोक मत कर। मैं हूँ न तुझे सब पापों से मुक्त करने के लिए। सब चिंताओं के धर्म छोड़कर बस मेरी शरण हो जा। भरत का भ्रातृ-पितृ शोक कैकेयी के पांडित्य को जाग्रत् करता है, पुत्र सोच में डूब गया तो राजपाट कैसे सँभालेगा—वह अपना पांडित्य सँभालती है—कौसलेस नहिं सोचें जोगू।

कृष्ण का शरणागत होना क्या है? यह पांडित्य की शरण ग्रहण करना है, जिसमें मनुष्यता के किंतु-परंतु नि:शेष हो जाते हैं। यह तर्कों की छाँव गहना है, जैसे कि यह सब तो पहले ही मरे हुए हैं, मैं तो निमित्त मात्र हूँ, मैं किसी की हत्या का अपराधी नहीं हूँ। वाह रे पांडित्य के निबिड़ कृष्णांधकार! हत्या के अपराध-बोध तक को अपने विश्वरूप के हुताशवक्त्र में लील गया। पांडित्य जैसे-जैसे हमारे मूर्खत्व में से उदित होने लगता है, हमारा अपराध-बोध छीजने लगता है, साथ ही छीजने लगती है हमारी मनुष्यता, हमारी संवेदनशीलता। तब कविता में कितने ही सुंदर शब्द गढ़े जाएँ, कितनी ही उपमाएँ और अलंकार क्यों न गढ़े जाएँ, तब कविता में से कविता छीजने लगती है, शास्त्र बढ़ने लगता है। शास्त्र में फिर आप तर्क ढूँढ़िए, जो मूर्खों के पास नहीं होते। नीतियाँ ढूँढ़िएँ, जिन्हें गँवार या उजड्ड आदमी नहीं जानता। उसके शस्त्र के रूप में काम कर सकने की क्षमता ढूँढ़िए, जिसकी संवेदनशील व्यक्ति को जरूरत ही नहीं पड़ती और न हो तो मनोविनोद करने की क्षमता ढूँढ़िए, क्योंकि शास्त्रों के काव्य के मनोविनोद से धीमान् पुरुष अपना काल व्यतीत करते हैं। मूर्ख और संवेदनशील व्यक्ति को उनकी जरूरत ही नहीं होती।

जी-१/ए-१२९, शालीमार गार्डन एक्सटेंशन-२
साहिबाबाद, गाजियाबाद-२०१००५
दूरभाष : ९८१०८३८८३२

शिवाजी और आगरा

● सतीश चंद्र चतुर्वेदी

शिवाजी के संबंध में आगरा के पुरातत्त्व विभाग के अध्यक्ष डी. दयालन का २७ जून, २००३ का लिखा हुआ पत्र प्राप्त हुआ था, जिसमें यह लिखा गया था कि शिवाजी एक शूरवीर मराठा राजा थे। लोगों के मसीहा और देश की शान थे। वे भारतीय इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। औरंगजेब ने जिस जगह शिवाजी को कुछ महीनों के लिए कैद करके रखा था, आगरा के इतिहासकार अभी भी वह जगह पहचान नहीं पाए हैं। इस गुत्थी का अंत अब होना चाहिए। इस विषय में एक बैठक का आयोजन भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग के कार्यालय में ३० जून, २००३ में किया गया था। आगरा के दैनिक 'अमर उजाला' में 'मेरी लेखमाला' आगरा इतिहास के पन्नों में मेरे लेख प्रकाशित हुए थे। अत: मुझे भी इतिहासकार मानकर बुलाया गया था। मेरे अलावा आगरा के सभी कॉलेजों के इतिहास विभाग के अध्यक्षों को भी बुलाया गया था। पुरातत्त्व विभाग के ऑफिस में हम सभी लोगों ने यह कहा कि इस बात का समाधान किले में पहुँचकर ही हो सकेगा। अत: हम सब लोगों को किले में ले जाया गया। वहाँ हम लोग उस स्थान पर पहुँचे, जो स्थान शिवाजी का कैदखाना कहलाता है, हम सबने वहाँ पर इस प्रश्न को सुलझाने पर चर्चा की। मेरे अलावा सबने यह कहा कि शिवाजी यहाँ कैद रहे ही नहीं थे, लेकिन मैंने यह कहा कि शिवाजी अगर यहाँ कैद नहीं रहे तो यह स्थान शिवाजी का कैदखाना क्यों कहलाता है। शिवाजी यहीं कैद रहे और यहीं से बाहर गेट से निकलकर वे चले गए थे। बताते हैं कि शिवाजी किले से निकलकर मथुरा पहुँचे थे। १३ अक्तूबर, १९८९ से १५ जून, १९९० तक मेरे ३१ लेख हर शुक्रवार को प्रकाशित हुए। उस लेखमाला के ग्यारहवें लेख का शीर्षक था—'औरंगजेब काल में आगरा' में हमने शिवाजी का जो हवाला दिया है, वह इस प्रकार है—५ मार्च, १६६६ को शिवाजी ने अपने पुत्र शंभाजी, कुछ अधिकारी तथा ४००० सैनिकों के साथ आगरा के लिए प्रयाण किया था। बादशाह ने खर्च के लिए एक लाख रुपया पहले ही भेज दिया था। पाँच सौ मील की यह यात्रा दो महीने में पूरी हुई थी। राजा जयसिंह ने शिवाजी के साथ ताजसिंह को अपने प्रतिनिधि के रूप में भेजा था। शिवाजी मुगल शासन के लिए बड़ी समस्या बनते जा रहे थे। औरंगजेब ने शिवाजी को काबू में लाने के लिए तथा बीजापुर पर अधिकार करने के लिए राजा जयसिंह को ३० सितंबर, १६६४ को दक्षिण भेजा। दक्षिण की स्थिति को काबू में करने के लिए राजा जयसिंह ने शिवाजी की अनुपस्थिति को उचित समझा। जयसिंह ने औरंगजेब को लिखा था कि वह शिवाजी को आगरा बुला ले। बादशाह ने इस सुझाव को स्वीकार कर लिया। राजा जयसिंह ने शिवाजी को समझाया कि औरंगजेब से मिलने से उन्हें कई लाभ होंगे। आखिर राजा जयसिंह ने शिवाजी को आगरा दरबार में जाने के लिए तैयार कर लिया। ११ मई, १६६६ को शिवाजी आगरा नगर से पूर्व ही सराय मलूकचंद में ठहर गए। शिवाजी की अगवानी करने का कार्य राजा जयसिंह के पुत्र रामसिंह कछवाहे को सौंपा गया था। उस दिन औरंगजेब की सालगिरह का दरबार था और रामसिंह पर किले के सामने की व्यवस्था देखने का भार था। अत: रामसिंह ने मुंशी गिरधरलाल को शिवाजी को आगरा नगर में लाने को भेज दिया। जयसिंह ने शिवाजी को शपथपूर्वक समझाया कि उनके पुत्र रामसिंह दरबार में शिवाजी की देखभाल करेंगे। अत: रामसिंह १३ मई को प्रात: शिवाजी को लाने के लिए रवाना हुए। ख्वाजा फिरोज तथा नूरगंज बाग के बीच शिवाजी की रामसिंह से भेंट हुई। १३ मई, १६६६ को रामसिंह ने शिवाजी और उनके १० सहयोगियों को औरंगजेब के दरबार में दीवानेखास में उपस्थित कराया। शिवाजी की ओर से एक हजार मोहरें और दो हजार रुपए बादशाह को भेंट किए गए। पाँच हजार रुपए न्योछावर किए गए। औरंगजेब ने शिवाजी की सलाम के उत्तर में कुछ नहीं कहा। उन्हें मंत्री जाफर खाँ ने ले जाकर पाँच हजारी मनसबदारों में खड़ा कर दिया। शिवाजी की उपस्थिति को महत्त्व नहीं दिया गया।

शिवाजी के सामने कविता पाठ करते हुए कवि भूषण

कारवाई यथावत् चलती रही। शिवाजी को यह सब अपमानजनक लगा। शिवाजी का तमतमाया हुआ चेहरा देखकर औरंगजेब ने रामसिंह से कहा, शिवाजी की कैसी तबीयत है? तब शिवाजी ने रामसिंह से कहा, क्या मैं ऐसा आदमी हूँ कि मुझे जान-बूझकर खड़ा किया जाए? यह कहकर शिवाजी एक ओर बैठ गए। रामसिंह ने बहुत समझाया, पर वे वहाँ नहीं गए और कह दिया कि मेरा सिर काटकर ले जाना चाहो तो तुम ले जाओ, मैं वहाँ नहीं जाऊँगा। सिरोपाण पहनने के लिए कहा, तब शिवाजी ने कहा, 'मुझे जान-बूझकर जसवंत सिंह के नीचे खड़ा किया गया। इसलिए मैं सिरोपाण नहीं पहनता। मुझे मारना चाहो मारो, कैद करना चाहो कैद करो। (शिवाजी यदुनाथ सरकार (संक्षिप्त), पृष्ठ-६९) बादशाह ने उन्हें रामसिंह की देखरेख में कैद कर लिया। फौलाद खाँ को पहरे पर रखा गया। बादशाह ने निश्चय किया कि या तो शिवाजी को किसी दुर्ग में बंदी बना लिया जाए या वध कर दिया जाए। उसने फौलाद खाँ को आदेश दिया कि आगरा किले के अधिकारी रदंदाज खाँ के मकान पर शिवाजी को ले जाया जाए।

रामसिंह को जब यह पता चला तो रामसिंह ने बादशाह के पास संदेश भेजा कि पिताजी के वचन पर शिवाजी आगरा आए हैं। अत: पहले मुझे मार डाले, फिर शिवाजी के साथ चाहे जैसा बरताव करे। शिवाजी ने रामसिंह को संदेश भेजा कि जो सुरक्षा-पत्र आपने सम्राट् को दिया है, उसे वापस ले लें और जो कुछ बादशाह मेरा करना चाहे, उन्हें करने दें। औरंगजेब ने मिर्जा राजा जयसिंह को पत्र लिखकर जानना चाहा कि शिवाजी के साथ क्या बरताव किया जाए। राजा जयसिंह ने बादशाह को लिखा कि शिवाजी की गलती को माफ करना मुनासिब है। अत: शिवाजी पर से कड़ा पहरा कम कर दिया गया। औरंगजेब ने इधर यह आदेश दिया कि शिवाजी को १८ अगस्त को फिदाई हुसैन के मकान में निर्वासित कर दिया जाए। शिवाजी इसका मतलब समझ गए। शिवाजी ने अपने नौकरों को वापस भेजने का आज्ञा-पत्र प्राप्त करके २५ जुलाई को अनुचरों को आगरा से रवाना कर दिया। शिवाजी के पास पैसा नहीं बचा था। अत: रामसिंह से हुंडी लिखकर ६६ हजार रुपए प्राप्त किए।

रामसिंह को जब यह पता चला तो रामसिंह ने बादशाह के पास संदेश भेजा कि पिताजी के वचन पर शिवाजी आगरा आए हैं। अतः पहले मुझे मार डाले, फिर शिवाजी के साथ चाहे जैसा बरताव करे। शिवाजी ने रामसिंह को संदेश भेजा कि जो सुरक्षा-पत्र आपने सम्राट् को दिया है, उसे वापस ले लें और जो कुछ बादशाह मेरा करना चाहे, उन्हें करने दें। औरंगजेब ने मिर्जा राजा जयसिंह को पत्र लिखकर जानना चाहा कि शिवाजी के साथ क्या बरताव किया जाए। राजा जयसिंह ने बादशाह को लिखा कि शिवाजी की गलती को माफ करना मुनासिब है। अतः शिवाजी पर से कड़ा पहरा कम कर दिया गया। औरंगजेब ने इधर यह आदेश दिया कि शिवाजी को १८ अगस्त को फिदाई हुसैन के मकान में निर्वासित कर दिया जाए। शिवाजी इसका मतलब समझ गए।

शिवाजी बीमार हो गए। यकृत, प्लीहा और ज्वर की शिकायत करके जोर-जोर से चिल्लाने लगे। वैद्य और हकीमों से इलाज कराया। स्वस्थ होने पर अमीरों, हकीमों, वैद्यों, ब्राह्मणों निर्धन हिंदू-मुसलमानों को बड़े-बड़े टोकरों में भरकर मिठाई तथा फलादि भर-भरकर भेजने लगे। मथुरा के फकीरों और ब्राह्मणों को भी टोकरे भेजे जाने लगे। उन्हीं टोकरियों में बैठकर शिवाजी और शंभाजी १७ अगस्त की शाम को औरंगजेब की कैद से निकलकर भाग गए। एक कथन यह भी है कि कैद से निकलकर शिवाजी को नीलकंठ महादेव (सिटी स्टेशन रोड) ले जाया गया। वहाँ से शिवाजी मथुरा मार्ग पर पहुँच गए, जहाँ उनके अनुचर घोड़े लेकर प्रतीक्षारत थे। वे काशी नामक ब्राह्मण के घर मथुरा जा पहुँचे। बताते हैं कि शिवाजी को छुड़ाने में ईश्वरदास नागर का बड़ा हाथ था। शिवाजी के आगरा आगमन का वर्णन (मुंतखबुत लुवाव भाग-२, पृष्ठ १८९) पर मिलता है। जयपुर में मिले लगभग २० पत्रों से भी उक्त उल्लेख मिलते हैं। शिवाजी के साथ अनुचरों में कवि परमानंद भी आगरा आए थे, जिसने 'अनुपुराण' और 'शिवपुराण' पुस्तकें लिखी थीं (औरंगजेबनामा हिंदी, पृष्ठ ६७)। शिवाजी आगरा के किले में ९७ दिन कैद रहे। शिवाजी की याद में आगरा के किले के अमर सिंह गेट के सामने शिवाजी की घोड़े पर बैठी हुई मूर्ति लगाई गई है। हिंदी के लौहपुरुष पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी, जो हिंदी समिति के अध्यक्ष भी थे, उनका भेजा हुआ शिवाजी के दरबार में कविता पढ़ते हुए भूषण का चित्र 'धर्मयुग साप्ताहिक' बंबई में प्रकाशित हुआ था। जब हम पं. श्रीनारायणजी के पास उनके निवास पर बैठे हुए थे, तब उन्होंने हमें वह चित्र प्रदान किया था, जो यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। आज के वातावरण में शिवाजी की याद आती है। उनके संबंध में हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार पं. हृषीकेश चतुर्वेदी (१९०७-१९७०) ने शिवाजी पर कविता लिखी थी। बदायूँ निवासी डॉ. ब्रजेंद्र अवस्थी, जिन्हें 'राष्ट्रकवि' लिखा गया है, वे आगरा आए हुए थे। जिन दिनों आगरा इतिहास के पन्नों में मेरी लेखमाला 'अमर उजाला' आगरा में प्रकाशित हो रही थी। 'औरंगजेब-काल में आगरा'। मेरा ग्यारहवाँ लेख १९/१/१९९० को प्रकाशित हुआ था। उस लेख को पढ़कर डॉ. ब्रजेंद्र अवस्थीजी मेरे पास पधारे और उन्होंने शिवाजी पर लिखा हुआ अपना महाकाव्य 'स्वातंत्र्य-सूर्य-शिवा' मुझे १८/११/२००३ को भेंट किया था। यह महाकाव्य अवस्थीजी ने तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयीजी को समर्पित किया था। हमारा लेख 'शिवाजी और आगरा' है और वाजपेयीजी भी जिला आगरा के बटेश्वर क्षेत्र के निवासी हैं।

चौबेजी का कटरा
किनारी बाजार, आगरा-३
दूरभाष : ०५६२-६४५०२८८

दुआ

मूल : **केशुभाई देसाई**
अनुवाद : **शिवचरण मंत्री**

जमीन किसी प्रेम दीवानी नारी के हृदय जैसी नरम पड़ गई थी। पैर रखने से पहले ही विचार करना पड़ता है, न हो कहीं धँसी रह गई तो?

रेशम को लगा, तब तो मुसीबत हो जाएगी। यहाँ तो आवाज भी किसे लगाई जाए? और आता-जाता कोई देख लेगा तो संदेह करेगा, 'क्या कमाई करने के लिए ऐसे भीगे मौसम में बाहर निकली है बाईजी!'

रेशम ने कपड़ों को ऊँचा उठाया। सँभल-सँभलकर डग भरने लगी। जमीन आर-पार फूट चुकी थी। जहाँ थोड़ी कठोर लग रही थी, वहाँ साथ ही फिसल पड़ने का भय लग रहा था। चारों ओर डबरे भर गए थे। रास्ता टूट गया था। जरा सी भी नजर चूकी नहीं कि धप्प से पानी के भँवर में! अभी पिछले सप्ताह ही बँध रही तालाब की पाल (किनारा) बरसात के साथ बह गई थी।

रेशम ने तालाब की ओर देखा, इस पिछले बुधवार को तो एक बूँद भी पानी नहीं था और इस तरह रातोरात यह दरिया कहाँ से भर गया! उसका तालाब में डुबकी लगाकर तरबतर हो जाने का मन हो आया, परंतु अगले ही क्षण छाती में एक भारी निश्श्वास भर गया और वह चुपचाप आगे बढ़ी।

तालाब के सामनेवाले किनारे पर जुम्मन शा पीर की दरगाह की हरी धजा दिखाई दे रही थी। वृक्षों के बीच गढ़ चुकी वह दरगाह पूरे प्रदेश में प्रसिद्ध थी। पीरबाबा का जबरदस्त सत था। खरे मन से आँचल फैलाकर माँगनेवाले की मनोकामना पूरी होती थी। माँगनेवाला माँगते समय झिझक जाए; बाकी पीर बाबा देते हुए झिझकनेवाले नहीं थे।

रेशम को जल्दी लगी हुई थी। उसे कुछ ऐसा माँगना था, जिसे इन पीरबाबा को देते हुए दो बार विचार करना पड़े। परंतु रेशम से अब अधिक ठहरा नहीं जा रहा था, पीरबाबा उसकी माँग कबूल नहीं करेंगे तो उनका भी सत तो परख लिया जाएगा न?

रेशम भले ही इसका ढिंढोरा न पीटे, बाकी अपने आपको तो पीरबाबा के खोखले प्रभाव के संबंध में अवगत करा सकेगी न? और एक खुदा का बंदा (औलिया) उसके जैसी कच्ची उम्र की छोरी के आगे शर्मिंदा हो गया, बस यही बहुत है! उसके सत की कसौटी हो चुकी!

रेशम को जबरदस्त शौर्य चढ़ा हुआ था। आखिर लहू तो ठाकुर का था न! रणचंडी की तरह मरने-मारने को उतारू होती वह पीरबाबा की दरगाह की ओर आगे बढ़ रही थी।

पिछले सप्ताह के दौरान आकाश जी खोलकर बरसा था। भयानक अकाल के जबड़े में पहुँचे उस गाँव पर जैसे मेघराजा ने अपनी कृपा बरसा दी हो। वैसे अभी मुल्क पूरा-का-पूरा सूखा पड़ा है और यहाँ तो तालाब टूटने को हो रहा है, इस पहले आगमन के साथ ही।

रेशम फिसलते-फिसलते मुश्किल से बची। 'तुम्हारा सत्यानाश हो!' उसने बरसात को शाप दिया।

पिछले सप्ताह तो इस तालाब की पाल के ऊपर कम-से-कम एक हजार लोग काम पर लगे हुए थे। धुआँधार काम चलता था। पहले सड़क बनी, फिर नाले बने और अंत में सरकार ने इस तालाब का काम प्रारंभ किया था। जीपों की धूल उड़ती। बड़े-बड़े अधिकारी दौड़-धूप करने में जुट जाते। आखिर में जो छाछ की प्याऊ शुरू हुई, तब तो राज्य के मंत्री आए। पूरे गाँव में घर-घर में विवाह होने जैसी खुशी छा रही थी।

यह कलमुँहा मेह कहाँ से आ गया कि आते ही पूरे गाँव की जीविका ही इस तालाब की नई बँधी हुई पाल की तरह बलात् खींच ले गया अपने साथ।

रेशम को जबरदस्त गुस्सा आ रहा था।

उस साँझ को आकाश में बादल घिर आए और पूर्व दिशा की पवन चलने लगी। तभी उसे वहम हो गया था, अब यह सब···थोड़े दिन बरसात हुई नहीं कि—

और पठान को भी चिंता तो हो ही गई थी। बरसात हुई नहीं कि तुरंत ही ये राहत कार्य बंद और अपनी यह रासलीला भी बंद। पठान ने उदास चेहरे से कहा था, 'रेशम, अब कहाँ मिलेंगे? यह राहतकार्य तो आज-कल में बंद हुआ ही समझो, फिर तो···' और वह व्यथित जीव आकाश की ओर विवश दृष्टि से ताकते हुए बोला था, 'मुझे लगता है, अब हम कभी नहीं मिल सकेंगे।'

पठान का भय झूठा नहीं था। ठाकुरों का गाँव और वह भी फिर तहसील के एकदम किनारे आया गाँव। पठान लाख चाहता हो तो भी यहाँ

वह बेचारा आए भी तो किस बहाने? और न हो, कदाचित् कोई कारण निकल ही आए, परंतु इससे मतलब थोड़े ही सिद्ध होनेवाला था? रेशम उससे मिलने के लिए थोड़े ही पंचायत की चौपाल में आ सकती थी?

दोनों जने समाधान विहीन घबराहट महसूस कर रहे थे। पठान के चहरे पर दुहरे अकाल से ग्रस्त आदमी के चेहरे जैसी खिन्नता छाई हुई थी।

जीवन में कभी भी अनुभव में नहीं आई अकुलाहट उसे उस शाम महसूस हो रही थी। उसकी आकुलता का पार नहीं था। मुश्किल से दो बरस हुए, कितनी-कितनी सिफारिशें लगवाने के बाद उसे यह दो पैसे सुख से मिल जाएँ, ऐसी नौकरी मिली थी। घर में विधवा माँ और छोटी उम्र की तीन बहनें आशा भरी नजर से पठान की तनख्वाह की बाट जोहती रहती थीं।

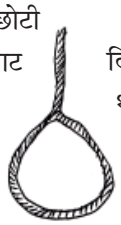

पठान तहसीलदार के ऑफिस का कर्मचारी था। गरीब घर की अल्लाबेली ने पीड़ा (आर्ति) सुनी कि तभी पूरे प्रदेश पर दुष्काल की दाह फैल गई।

थरथराती आवाज में माँ पूछती, 'बेटा, अकाल में कहीं तुम्हारी नौकरी तो···'

हँसकर पठान उसे धीरज बँधाता, 'एकदम पागल है! उलटे अकाल में तो बिना नौकरीवाले को नौकरी मिलती है। तू देखना अम्माँ, हजारों गरीब-गुरबों को सरकार के राहत कार्यों के नाम पर रोजी मिलेगी। तू नाहक ही चिंता कर रही है।'

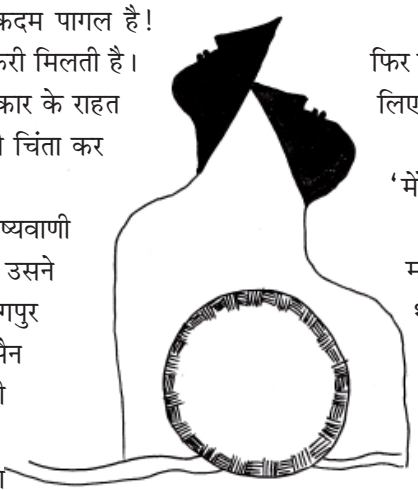

और थोड़े ही दिनों के पश्चात् अपनी भविष्यवाणी सच्ची होती दिखी तो विधवा माता को रोब से उसने कहा था, 'अम्मीजान, तुम्हारा हुसैन कल से रंगपुर के राहतकामों की देखरेख सँभालेगा! तुम्हारे हुसैन के हाथ नीचे हजारों मेहनतकश मजदूर अपनी रोजी कमाने लगेंगे! दुआ कर!'

'दुआ! मेरे हुसैनखाँ बेटे को खुदाताला होशियार रखे! मेरे बेटे के हाथों दीन-दु:खी जीवों के लिए, अबोल जानवरों के लिए खैरात करवाए!' कहती हुई उसकी माँ ने उसकी बलाएँ ले-लेकर पठान को उसकी नई ड्यूटी पर रवाना किया था।

उसके पश्चात एक दिन तेज धूप की दोपहर को सिर पर मिट्टी की तगारियाँ ढोती रेशम चक्कर खाकर धरती पर गिर पड़ी, तब पठान अपना हाजिरी रजिस्टर पड़ा छोड़कर दौड़ गया था उसके पास। रेशम को पानी भी अपने हाथ से पठान ने ही बूँद-बूँद करके पिलाया था। दूसरे मजदूरों को काम पर चलते रहने की सूचना देकर रेशम को उसने दिनभर दरगाह की गहरी छाया में आराम करने की छूट दे दी थी। अंत में दिन ढलने पर रेशम को आराम हुआ, तब चेहरे पर आर्द्रता लाकर पठान ने उससे कहा था, 'पीरबाबा से कब से प्रार्थना कर रहा हूँ! आखिर उनने दुआ की है।'

रेशम की आँखों में रेशमी मुसकान फैल रही थी। मृदुल हँसी के साथ उसने कहा था, 'साहब, आपने इतनी चिंता नहीं की होती तो आज मैं मर ही गई होती। तीखी धूप में मेरे तो प्राण ही निकल गए होते।'

रेशम को पता है, उन दिनों वह रजस्वला थी। सबेरे से चक्कर आ रहे थे तो भी हाजिरी लग जाए, उस लालच से वह तालाब तक बरबस आ गई थी।

पठान ने उसे दो-तीन दिन आराम करने की सलाह दी थी। उसने कहा था, 'रेशम, तुम निश्चिंत रहना। तुम्हारी हाजिरी लग जाएगी। और सुन, दवा-दारू करवाना!' बीस रुपए का नोट पैंट की जेब से निकालकर देते हुए उसने कहा था, 'ये पैसे तुम्हारी तनख्वाह में से नहीं काटूँगा, समझी!'

उस शाम को रेशम अपने घर की ओर जा रही थी, तब उसके दिलोदिमाग की दरगाह में एक नया औलिया धूनी जलाकर बैठ गया था। एक पल को भी उसकी याद नहीं हटती थी। उसके उपकार का भार भी जैसे कैसा हल्का फूल! और उसकी वाणी? वाणी नहीं, साक्षात् जैसे धूपबत्ती की धूप!

रेशम को उसके बाद की तीन रात तक नींद ही नहीं आई। फिर तो पठान उसका पीर और वह पठान की—

'रेशम, तुम्हें रेशमा कहूँ तो अच्छा लगेगा न?'

'जो कहना हो वह कहो न!' रेशम थोड़ा-थोड़ा हँसी थी। फिर फड़कते होंठों के बीच जो बैन दब गए थे, वे ये थे, 'स्त्री के लिए तो उसका आदमी ही उसका धरम!'

पठान रंग में आ गया था। साहस करके पूछ बैठा था, 'मेरे साथ निक्का पढ़ेगी?'

और दुगने जोर के साथ रेशम टहूकी थी, 'निक्का-मक्का सब कबूल!' और फिर शरमाकर दौड़ती हुई जा पहुँची थी अपने काम पर।

पठान ने खुदाताला का शुक्र अदा करते हुए कहा था, 'परवरदिगार! तेरी रहम बेशुमार है। दुआ कर, दुआ कर!'

दरगाह का फाटक आ गया। रेशम ने देखा, वीरान जंगल में एक पीरबाबा के अलावा चिड़िया भी नहीं दिख रही थी। सवेरे-शाम कोई मौलवी अगरबत्ती कर जाता, बस इतना भर। कौन खाली था पीरबाबा की चाकरी करने के लिए। लोग तो सब स्वार्थ के सगे। अभी उर्स आएगा, तब जैसे चींटियों का बिल छलक उठेगा। इतने लोग उमड़ेंगे कि दरगाह में पाँव रखने की जगह नहीं बचेगी। और दिनों में तो पीरबाबा बेचारे अकेले-अकेले हवा खाते रहते हैं इस तालाब के सुनसान किनारे पर।

यद्यपि हर वर्ष सप्ताह भर पहले पीरबाबा की सार-सँभाल जरूर कर ली जाती। खरे दिल से ली जाती। पठान को पीर का पक्का भरोसा था। वह नित्य पीरबाबा की मजार पर फूल चढ़ाता। घंटों बंदगी में गुजारता। फिर आँखें खोलकर दोनों हाथों से दुआ माँगता, 'बाबा, रहम कर, रहम कर! रेशम के साथ मुहब्बत हो गई है। तेरे बिना मेरा और कोई मददगार भी कौन हो सकता है? ये पाक मोहब्बत है, बाबा! तूने तो अपनी नजरों से देखी है।'

पठान की आँखें भीग जातीं। रेशम से यह सहा नहीं जाता, तब वह भी चुपके-चुपके रो लेती। बरसात हुई कि अगले ही दिन से राहतकार्य बंद कर दिए गए थे।

पठान कोई भी बहाना बनाकर गाँव में अवश्य आएगा, इस आशा के साथ रेशम कान लगाकर दिन भर बैठी रहती। अभी जीप आएगी और फाटक पर खड़ी रहेगी। पठान जीप में से उतरकर अमर सिंह ठाकुर का घर पूछता-पूछता मुहल्ले के किनारे उस विहत देवी के मंदिर के समीप आकर खड़ा हो जाएगा और मैं दौड़ती हुई अपने कमरे के बाहर पहुँच जाऊँगी। चमचमाते चेहरे से उसका स्वागत करूँगी; चारपाई बिछाकर बैठाऊँगी। फिर अपनी माँ से कहूँगी, 'साहब आए हैं ?' तहसील से पधारे हैं ! माँ उनके लिए चाय चढ़ाने को कहेगी और मैं उमंग के साथ कड़क मसालेदार चाय बनाकर···

परंतु ऐसा कुछ भी नहीं घटा। सप्ताह बीत गया, किंतु गाँव में एक भी जीप नजर नहीं आई।

रेशम की अकुलाहट का पार नहीं था, क्या कभी नहीं आएँगे ? इतना-इतना सद्भाव, इतना गहरा प्रेम ! वह सारा धुल गया इस पहली वर्षा के साथ ही ? उस तालाब की पाल की तरह यह भी धँस गया सारा-का-सारा, 'भड़ाभड़ आवाज के साथ' रेशम का मन मानने को तैयार नहीं था।

ऐसा तो हो ही नहीं सकता; यों कोई घोर कलियुग तो अभी तक नहीं पहुँचा ! फाटक खोलकर वह भीतर घुसी। पूरी दरगाह महक-महक उठती थी। किसने महकाया होगा धूप, इस दोपहर की वेला में ?

रेशम ने कौतूहल से मजार की जाली में झाँककर देखा। भीतर तो कुछ भी नहीं था। पीरबाबा भी दोपहर की नींद का आनंद ले रहे थे। सबकुछ शांत था, एक इसके मन के सिवा। उसने पीरबाबा को हाथ जोड़े।

उसे याद आया, पिछले तीन-तीन महीनों लगातार पठान ने पीर बाबा की बंदगी गुजारी थी। दिन में पाँच-पाँच वक्त नमाज अदा की थी। और हरेक बार मात्र एक ही दुआ माँगी थी—मेरी रेशमा मुझे मिला दो, पीरबाबा। मुझे कुछ भी नहीं चाहिए।

रेशम को कितना कुछ याद आ गया था !

दिल को मजबूत करके वह निकली, तब मन:पूर्वक संकल्प करके निकली थी। आज तो इस पार अथवा उस पार। बस, आज तो पीरबाबा के आगे आँचल फैलाकर कह देना है—बाबा, इस बरस तो बरसा, परंतु अगले बरस जरूर अकाल पटकना, एक तुम्हारी इस रेशम के लिए, इस गरीब बेटी के लिए ! दुष्काल नहीं पड़ेगा तो वह कभी वापस नहीं आ सकेगा बाबा, इतनी अरज कबूल करोगे न ?

कौन जाने वह सब कैसे विस्मरण हो गया। पीर को सत की सूली पर चढ़ाने आई हुई रेशम के पैर ढीले पड़ गए। पता नहीं, उसका क्रोध कहाँ गायब हो गया ! और आँखें मींचकर वह बोल उठी, 'सबका भला करना बाबा !' बरसो-बरस ऐसा मेह बरसाना···लोगों के घरों में कोठियों में नहीं समा सके, इतना अनाज पकाना···' और पलकें खोलते-खोलते हलका निश्श्वास छोड़कर उसने कहा, 'मेरा तो जो होना होगा, वह होगा, परंतु पूरे गाँव का भला करना।'

और फिर भीतर के किसी गुप्त उत्साह के साथ अपने घर की ओर वापस मुड़ी कि अचानक उसे पश्चिम दिशा से आती हुई जीप की रेत के टीलों से उठती घर्र-घर्र-घर्र की आवाज सुनाई पड़ी। हर्ष-विह्वल हरिणी की तरह रेशम गाँव की चौपाल की ओर दौड़ पड़ी।

मु.+पो. : श्री नगर
जिला-अजमेर (राज.)
दूरभाष : ०९८७६५४३१३२

कविता

पेड़

● शरद नारायण खरे

पेड़ लगाओ,
पेड़ बढ़ाओ;
पेड़ों से मधुबन है।
पेड़ साँस हैं,
पेड़ आस हैं;
पेड़ों से जीवन है।
पेड़ नीर हैं,
पेड़ पीर हैं;
पेड़ों से सावन है।
पेड़ सुहावन,
पेड़ मनभावन;
पेड़ों से उपवन है।

पेड़ सुर हैं,
पेड़ ताल हैं;
पेड़ों से सरगम है।
पेड़ हैं मौसम,
पेड़ हैं कल-कल;
पेड़ों से कानन है।
पेड़ हैं प्रीत,
पेड़ मनमीत;
पेड़ों से दमखम है।

शासकीय महिला महाविद्यालय
मंडला-४८१६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५४८४३८२

भूतपूर्व मंत्री से···

● डी.एन. श्रीनाथ

''भूतपूर्व मंत्रीजी को नमस्कार!''

''...''

''नमस्कार भूत···''

''कौन हैं आप?''

''आप कुछ ही दिन पहले मेरे यहाँ आए थे और हाथ जोड़कर मुसकराते हुए मेरी पीठ थपथपाई थी, मैं वही मतदाता हूँ। आप इतनी जल्दी भूल गए?''

''मतलब?''

''मतलब, मैं एक मतदाता हूँ।''

''ठीक है, ठीक है। अब मुझसे क्या काम है?''

''इससे पहले भी आपसे कुछ भी नहीं बन पड़ा था, अब तो कुछ भी संभव नहीं है।''

''आपसे कुछ भी नहीं बन पड़ा था, इसका मतलब?''

''वही तो मुश्किल की बात है, सर।''

''ठीक है, ठीक है। अब क्यों आए हो?''

''आपको देखने के लिए। आपकी हार के बारे में जानने के लिए···''

''अबे, कौन हारा है?''

''क्या? आपने रिजेल्ट नहीं सुना? टी.वी. नहीं देखा? अखबार नहीं पढ़ा?''

''वह मेरी हार नहीं है, वह जनता की हार है।''

''मतलब?''

''लोगों को चुनना नहीं आता। उनमें इतनी योग्यता और अक्ल नहीं है, इसलिए वे ठीक आदमी को चुन न सके।''

''आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई।''

''मतदाताओं की बात भी हमारी समझ में नहीं आती। देखिए, मैंने लोगों की भलाई के लिए क्या-क्या नहीं किया। क्या-क्या नहीं त्यागा? मैं दूर दिल्ली से अपने क्षेत्र के लिए पाँच बार आया और जब चुनाव घोषित हुआ तो क्षेत्र में ही रहकर उनके साथ एक आम आदमी बन गया था। मगर मतदाताओं ने मुझे समझने में कसर की। मैं कहता हूँ कि सच्ची हार मेरी नहीं है, यह हार उनकी ही है, यह हार लोकतंत्र की है।''

''मतलब?''

''मतलब, मतदाता की नैतिक रूप से हार हुई है। देखिए, पाँच सालों में यानी इतने कम समय में क्या किया जा सकता है। अगर वे एक बार और मुझे जिताते तो उनका क्या नुकसान होता?''

''वह बात रहने दीजिए, अब आप यह बताएँ कि आपके हार के क्या-क्या कारण हो सकते हैं?''

सुप्रसिद्ध लेखक एवं अनुवादक। कन्नड़-हिंदी में परस्पर अनुवाद की ६० पुस्तकें प्रकाशित। साहित्य अकादेमी का अनुवाद पुरस्कार, कर्नाटक साहित्य अनुवाद अकादेमी पुरस्कार, कमला गोयनका अनुवाद पुरस्कार, गोरूर पुरस्कार, विश्वेश्वरैया साहित्य पुरस्कार आदि पुरस्कारों से पुरस्कृत।

''पार्टी में झगड़ा, आपसी दुश्मनी, सभी की कुरसी पर नजर···''

''इसमें आप भी एक हैं न?''

''छिह! छिह! यह आप क्या कह रहे हैं? जब मैं जीतकर गया तो मैं विधानसभा में बैठा ही नहीं। मैं एक ही बार कुरसी पर बैठा था, जब मैंने अधिकार ग्रहण किया था। बाद में मैंने अपना सारा समय विदेशों में ही बिताया। इसलिए मुझे झगड़ा करने का मौका ही नहीं मिला।''

''आपके भूत···''

''कौन है भूत?''

''जी, मैंने अभी अपनी बात पूरी नहीं कही है। सुना है कि आपके भूत (निर्वाचन स्थान) में नकली मतदान कुछ ज्यादा ही हुआ था।''

''ठीक है। अगर असली मतदान होता तो मैं हारता नहीं!''

''और यह भी सुना है कि असली मतदान के लिए आपके गुंडों ने मौका ही नहीं दिया।''

''नो कॉमेंट्स।''

''सुना है कि आपने चुनाव के पिछले दिन पैसे पानी की तरह बहाए···।''

''देखिए, आप 'सुना है, सुना है' कहते रहिए! मैंने तो उनका पैसा उन्हीं के लिए खर्च किया। गलत ही क्या है?''

''ठीक है सर, अब आपका अगला लक्ष्य क्या है?''

''शासन के हर काम की निंदा करना, नई सरकार को गिराना और फिर चुनाव हो, इसके लिए जी-जान से कोशिश करना।''

''जी, आपने मुझसे जी खोलकर बातें की, बहुत-बहुत थैंक्स। अब मैं आता हूँ।''

''आप मत आइएगा। मैं ही जल्दी आपके पास आऊँगा, मत की याचना करने के लिए! अब आप चलिए!''

नवनीत, द्वितीय क्रॉस, अन्नाजी राव लेआउट
प्रथम स्टेज, विनोबानगर
शिमोगा-५७७२०४ (कर्नाटक)
दूरभाष : ०९६११८७३३१०

श्रीराम के पुरातात्त्विक कला-शिल्प

● ललित शर्मा

पुरातात्त्विक शिल्प, स्थापत्य तथा इतिहास के आधार पर विद्वानों का मानना है कि मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के मंदिरों के निर्माण की परंपरा हमारे देश में गुप्तकाल से पहले की प्राप्त नहीं होती। पुरातत्त्वविद् डॉ. शशिकांत भट्ट का मानना है कि मूर्तिपूजा मूलत: व्यक्ति पूजा का ही रूप था और इसके पूर्व श्रीराम के सद्कार्यों व उनके जीवन-आदर्शों की पूजा के मृद्पट्ट पुरातात्त्विक रूप में हमारे देश के मध्य प्रदेश से लेकर हरियाणा और कौशांबी तक के विस्तृत क्षेत्र में मिले हैं।

श्रीराम के कला-शिल्प में रामायण के जो दृश्य उकरे हैं, वे मूलत: पकी हुई ईंटों पर हैं, इनमें श्रीराम, हनुमान तथा उनकी वानर सेना है। ये ईंटें पटना के पुरा संग्रहालय में प्रदर्शित हैं। मध्य प्रदेश के पन्ना जिलांतर्गत नचना नामक पुरास्थल के मंदिरों में गुप्त युग के कला स्थापत्य के सुंदर शिल्प में श्रीराम से संबंधित कई दृश्य देखने को मिलते हैं। इनमें सीता से रावण द्वारा छद्म साधुवेश में भिक्षा की याचना करते हुए तथा श्रीराम की उपस्थिति में लक्ष्मण द्वारा सूर्पणखा की नासिका काटते हुए शिल्पांकित किया गया है। ऐसी शिल्प-परंपरा पन्ना से नर्मदा नदी तक उसके पूर्वी निमाड़ क्षेत्र के बटकेश्वर मंदिर तक प्रसारित रही। नर्मदा तट पर बसे नेमावर के मंदिरों में भी रामायण के कुछ दृश्य शिल्प रूप में देखे गए हैं।

पुरातत्त्वविद् डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार, गुप्त युग में श्रीराम के मंदिर चौकोर भवनवाले, परंतु शिखरविहीन बने थे, जिनकी कई दीवारों पर श्रीराम के चरित्र संबंधी अनेक घटनाक्रम का मृदपट्टिकाओं पर शिल्पांकन किया गया। ये पट्टिकाएँ ४३.४३ से.मी. तथा ५६.५६ से.मी. आकार की हैं। इन पट्टिकाओं में श्रीराम के जीवन आदर्शों से राजा-प्रजा को अवगत करना था, ताकि राजा व प्रजा के मध्य शासन-संचालन तथा व्यवहार सौहार्दपूर्ण, अनुशासित एवं मर्यादा में रहे। इन पट्टिकाओं पर श्रीराम-बाली युद्ध, राम-रावण युद्ध, अशोक वाटिका में हनुमान एवं सीताजी, पंचवटी जाते श्रीराम-सीता और लक्ष्मण, मकराक्ष (राक्षस) के साथ श्रीराम का युद्ध, बाली-सुग्रीव युद्ध, श्रीराम द्वारा त्रिशिरा राक्षस का शिरच्छेदन, स्वर्णमृग का पीछा करते श्रीराम, अशोक वाटिका को नष्ट करते हनुमान, वानर सेनानायक रूप में हनुमान, सेतु निर्माण करती वानर सेना जैसे दृश्य दर्जनों की संख्या में हैं। इन सभी पर (ऊपर या नीचे) गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि में संस्कृत में रामायण के श्लोक एवं शीर्षक उकेरे गए हैं। डॉ. भट्ट के आकलन के अनुसार, लिपिशास्त्र के आधार पर ये शिल्पावशेष वाल्मीकि रामायण के १५०० वर्ष पुराने पुरातात्त्विक प्रमाण हैं।

उक्त प्रसंग में मारीच एवं श्रीराम का फलक मूलत: हरियाणा के नचारखेड़ा स्थल में प्राप्त हुआ है, जो ४३×४३ से.मी. आकार का है। इस फलक में स्वर्णमृग दौड़ता हुआ भयवश पीछे मुड़कर देख रहा है तथा श्रीराम-सीता भी उसे देख रहे हैं। श्रीराम के हाथों में धनुष-बाण और कंधों पर अक्षय तूणीर है तथा जटा पर मुकुट है, जबकि सीता बालों में वन पुष्पाभरण धारण किए हुए हैं। इस मृदफलक पर पंचवटी जाते हुए श्रीराम का जटायु से मिलन का दृश्य भी उकेरा हुआ है, जिस पर ब्राह्मी लिपि में एक पंक्तिबद्ध लेख 'न अन्तरा रघुनन्दन आससाद महागृध्रै:' अंकित है। वाल्मीकि रामायाण में भी इस दृश्य का वर्णन है—

अथ पञ्चवटी गच्छन अन्तरारघुनन्दन:।
आससाद महाकायं गृध्रं भीमपराक्रमम्॥
(रामायण, अरण्य, सर्ग १४, श्लोक १)

हरियाणा के कुरुक्षेत्र से ८० कि.मी. दक्षिण-पूर्व में स्थित संधाय ग्राम से प्राप्त एक मृदफलक (२२×२२ से.मी.) पर श्रीराम तथा मकराक्ष का युद्ध उकेरा हुआ मिला है। इसमें खर नामक राक्षस के पुत्र मकराक्ष को रावण ने अपनी बहन सूर्पणखा के अपमान का बदला लेने के लिए श्रीराम के विरुद्ध भेजा था। मकराक्ष ने लंका की युद्धभूमि में अपने पिता खर की हत्या का प्रतिशोध लेने के लिए श्रीराम से युद्ध किया था। उसने श्रीराम से कहा, 'राम, ठहरो। सावधान हो जाओ, तुम्हारे से मेरा द्वंद्व युद्ध होगा और मैं अपने पैने तीरों से तुम्हारे प्राण ले लूँगा।'

उल्लेखनीय है कि इस राक्षस की आँखें और मुख मकराकृति (मगरमच्छ) जैसा तथा शेष शरीर गधे (खर) जैसा होने से इसे 'मकराक्ष' कहा गया।

फलक पर मूर्तिकार ने मकराक्ष को श्रीराम का बायाँ हाथ अपने जबड़े में पकड़े व श्रीराम को अपना बायाँ पैर राक्षस के पेट पर मारकर उसे धक्का देते बड़े सुंदर शिल्प से सजाया है। यहाँ श्रीराम के कानों में सुंदर कुंडल, ग्रीवा में अलंकृत कंठाभरण हैं, जिसमें चक्रदार पेंडल है, को पहने दरशाया है। श्रीराम द्वंद्वयुद्ध में लँगोट धारण किए हुए हैं। उनके नीचे एक अश्व मृत पड़ा है। मकराक्ष के मुख के नुकीले दाँत तीक्ष्ण हैं तथा उसके सिर पर कान के नीचे लंबे मोटे बाल हैं। उसकी मुखमुद्रा आक्रामक है। वह अपने दोनों खुरों पर खड़ा हुआ श्रीराम से द्वंद्वयुद्ध कर रहा है।

झज्जर के गुरुकुल पुरातत्त्व संग्रहालय में दर्शित एक मृदाफलक काफी भग्न है। इसमें श्रीराम वृक्ष की आड़ में बाली पर धनुष ताने हुए हैं। एक अन्य फलक हरियाणा के हिसार जिले में स्थित दुर्जनपुर के ग्राम नचारखेड़ा में मिला था, जो ४३×४३ से.मी. का है। इसमें रामायण के अरण्यकांड में वर्णित त्रिशिरा राक्षस को उकेरा गया है। वह दो स्तंभ पर आधारित छत के नीचे बनी एक चौकी पर बैठा है तथा उसके दाएँ-बाएँ जमीन पर हाथ में तलवार लिये दो रक्षक बैठे हैं। इनमें से एक के पैर में कुषाणकालीन जूते हैं। त्रिशिरा के चेहरे पर बाईं ओर चौथी सदी की ब्राह्मी लिपि में 'तृशिर' (त्रिशिरा) उकेरा हुआ है। फलक के निचले भाग पर ब्राह्मी में ही 'चतुर्दश राक्षसा सुजित्वा रामद्येय यश:' (अर्थात् श्रीराम ने १४ राक्षसों को जीतकर (यश प्राप्त किया) उकेरा हुआ है। ऐसे ही एक अन्य फलक में त्रिशिरा को युद्धरत दिखाया गया है। फलक में उसके दो मुख भग्न हैं तथा तीसरा मुख श्रीराम के बाण से कटकर गिरने की अवस्था में उकेरा हुआ है। उसे अश्व जुते रथ पर पद्मासन मुद्रा में बैठे व युद्ध करते दरशाया गया है। उसके कुल ६ हाथ हैं, परंतु उनमें से ४ भग्न हैं। शेष दो हाथों में क्रमश: तलवार एवं चक्र हैं।

इस प्रकार श्रीराम के ये पुरातात्त्विक कला-शिल्प सैकड़ों वर्षों पूर्व की रामकथा के ऐसे प्रमाण हैं, जो रामकथा परंपरा की प्राचीनता को पुष्टता प्रदान करते हैं। सामान्य रामभक्त या रामकथा वाचक श्रीराम के ऐसे पुराशिल्प प्रमाणों से अभी अनभिज्ञ हैं। भारतीय इतिहास में मध्य युग के पूर्व भी छठी सदी ई. में भगवान् श्रीराम जन मानस में आराध्य रूप में प्रतिष्ठित होकर मूर्तिपूजा की धार्मिक प्रवृत्तियों में समाविष्ट हो गए थे। इस प्रमाण की चर्चा ११वीं सदी में भारत आए मुसलिम इतिहासकार अलबरूनी ने भी की है। उन्होंने स्पष्ट लिखा, 'यदि आकृति दशरथ के पुत्र राम की प्रतिमा (बनाने) की है तो उसकी लंबाई सामान्य अंगुली की रखें। हिंदू अपनी मूर्तियों का सम्मान उस सामग्री की वजह से नहीं करते, जिससे वे बनाई गई हैं, बल्कि उन लोगों के कारण करते हैं जिन्होंने उन्हें प्रतिष्ठित किया है।'

उसने आगे श्रीराम की मूर्ति के साथ-साथ उनके द्वारा स्थापित रामेश्वरम्, सेतुबंध तथा वानरों की चर्चा करते हुए लिखा, 'रामशेर (रामेश्वर) सरनदीप के सामने है। श्रीराम के रामशेर और सेतुबंध के बीच २ फरसख की दूरी है। यह समुद्र पर बना पुल है, जो दशरथ पुत्र राम की नहर है। जिसे उसने महाद्वीप से लेकर लंका के दुर्ग तक बनवाया था। इस समय इसमें छितरे हुए पर्वत हैं, जिनके बीच में समुद्र बहता है। सेतुबंध से पूर्व की ओर सोहल फरसख की दूरी पर है। किहकिद (किष्किंध) वानरों का पर्वत है। वहाँ वानरों का राजा जंगली व लड़ाकू भी है। हर रोज वह झाड़ी से निकलकर अपने वानर समूह के साथ आता है और वे सब अपने-अपने आसनों पर, जो उनके लिए विशेष रूप से बनाए गए हैं, बैठ जाते हैं। लोक विश्वास है कि वे मानव जाति के ही थे, लेकिन उन्होंने उस समय राम की सहायता की थी, जब से वे राक्षसों से युद्ध कर रहे थे तो उन्हें वानर जाति में बदल दिया गया था। मान्यता है कि राम ने उन्हें ये गाँव जागीर में दिए थे। यदि कोई मनुष्य उन्हें रामायण सुनाता है और राम के मंत्रादि का उच्चारण करता है तो उन्हें वे शांतिपूर्वक सुनते है।'

इस प्रकार ९वीं-१०वीं सदी के आस-पास रामायण संस्कृति एवं साहित्य का विस्तार दक्षिण भारत में भी प्रारंभ हुआ और राम मंदिरों (बड़े गोपुरम् वाले) का निर्माण किया गया। विजयनगर की स्थापना और विस्तार से रामायण की घटनाओं ने शिल्पांकन क्षेत्र में नवीन आयाम स्थापित किए, साथ में महाभारत के भी दृश्य उकेरे गए। गुप्तकाल की अवनति में विशेषकर कर्मकांडों का बड़ा योगदान रहा तथा इस कृत्य ने रामायण साहित्य में अंधविश्वासों का जंजाल रच डाला। जहाँ मूर्तिपूजा पर जरूरत से ज्यादा जोर देने के कारण जनता दिग्भ्रमित हो गई। इस दिग्भ्रमित संक्रमण काल में श्रीराम के साहित्य की उपयोगिता से सभी को अवगत करानेवाले संतवर्ग का उत्कर्ष हुआ। संत रामानंद, संत कबीर, संत पीपाजी जैसे अनेक संतों ने व्यक्ति पूजा के स्थान पर महापुरुषों के आदर्शों का विश्लेषण कर भारतीय समाज में उनकी उपादेयता संबंधी साहित्य व वाणियों का सृजन किया और इससे राम साहित्य का लोकोपयोगी पक्ष उभरकर आया, जिसमें जाति तथा ऊँच-नीच के कथन शिथिल हुए और श्रीराम के जीवन आदर्श मानवीय समानता के आधार बने।

साअ
जैकी स्टूडियो, १३-मंगलपुरा,
झालावाड़-३२६००१ (राज.)

सुझाव

● ममता चंद्रशेखर

आज अजय ने करीब आठ कॉफी पी ली हैं, फिर भी उसका बोझिलपन कम नहीं हुआ। गुमसुम परेशान अजय को कशमकश में देखकर रेस्टोरेंट का मालिक भी कशमकश में आ जाता है, परंतु अजय अपनी धुन में मग्न है। पुल साइड की कोनेवाली टेबल पर वह सुबह दस बजे से अकेला बैठा है। दिन ढलनेवाला है, किंतु अभी भी उसकी उधेड़बुन जारी है। लगता है, वह अपने ऑफिस टाइम में ऑफिस की बजाय यहाँ आकर बैठ गया है। वह इस होटल का लाइफ टाइम मेंबर है, इसलिए रेस्टोरेंट के लगभग सभी कर्मचारी उसे पहचानते हैं।

अजय मन-ही-मन सोचता है कि उसके पास सबकुछ है, परंतु कुछ भी नहीं। वह अपंग है, खुदगर्ज है। अपने बुजुर्ग पिताजी के लिए कुछ भी नहीं कर पाया है। माँ के देहांत के बाद पापा बहुत अकेले हो गए हैं। कोई भी नहीं है उनके पास, सिवाय नौकरों के। हम दोनों भाई अपनी-अपनी जिंदगी में व्यस्त हैं और वह···वे अकेले, तन्हा हैं। पैसा व सुविधाएँ भी उन्हें फीकी लगती हैं। आज···आज सुबह तो फोन पर उनकी आवाज में कंपन था। शायद अकेलेपन से वे घबरा गए हैं, मुझे कुछ करना चाहिए। दृढ निश्चय कर वह झटके से कुरसी से उठा। बिल चुकाकर अपनी गाड़ी की ओर बढ़ गया है।

अँधेरा हो चला था। साँझ की अजान हो रही है। यह वक्त है अजय का अपने घर पहुँचने का, लेकिन आज उसकी गाड़ी विपरीत दिशा में दौड़ रही है। शहर से दूर···तेज रफ्तार से चलती हुई कार अंतत: पवन फड़नीस के घर जाकर रुकती है। यह उसके दोस्त का घर है। जब कभी अजय परेशान होता है, वह अस्सी कि.मी. चलकर यहीं आता है। पवन की पत्नी पँखुड़ी को अजय अपनी बहन मानता है।

अजय अपने दिल की सारी बातें पवन को बतलाता है। पवन सारी बातें सुनने के बाद गंभीर स्वर में कहता है, ''यही दु:ख तो पँखुड़ी को भी है।'' वह आगे कहता है, ''तुझे तो पता ही है कि पँखुड़ी के पिताजी बचपन में ही शांत हो गए थे और पँखुड़ी अपनी माँ की अकेली संतान है। हमारी मैरिज के बाद वे बिल्कुल अकेली हो गई हैं। हम लोगों ने उन्हें यहाँ बुलाना चाहा, परंतु वे यहाँ आना ही नहीं चाहतीं। कहती हैं कि बेटी के घर पर रहना शोभा नहीं देता।''

जानी-मानी कथाकार। कई पुस्तकें तथा शोधकार्य संपन्न। विभिन्न समितियों में सहभागिता। रानी दुर्गावती अवार्ड, बेस्ट पर्सनैलिटी अवार्ड तथा अन्य कई सम्मान प्राप्त।

अजय ने तुरंत कहा, ''पर बेटे के घर तो रह सकते हैं, पर नहीं, मेरे पापा मेरे यहाँ आकर रहने से इनकार कर देते हैं।''

''तेरे यहाँ आकर वे क्या करेंगे। दिनभर न तो तू रहता है, न भाभीजी, न बच्चे। वे अकेले पड़े-पड़े बोर हो जाएँगे।'' पवन ने टोका।

''हाँ, तू सही कहता है, परंतु नौकरी भी तो जरूरी है। सोसाइटी में रहने के लिए यह सब तो करना ही पड़ता है। परंतु यार, मैं अपने पापा के लिए कुछ करना चाहता हूँ।''

उसी समय पँखुड़ी अपने दोनों बच्चों के साथ घर लौटती है। वह शॉपिंग करने गई थी। अजय को देखते ही चहककर बोली—

''हूँ···बहुत दिनों बाद आए हो भैया!''

''हाँ, थोड़ा बिजी हो गया था।''

''भाभीजी वगैरह ठीक हैं।''

''हाँ सब ठीक हैं।''

''चलिए आप लोग बैठिए, मैं कॉफी बनाकर लाती हूँ।'' पँखुड़ी अंदर चली गई। थोड़ी देर बाद वह कॉफी के तीन प्यालों के साथ वापस ड्राइंगरूम में लौटी है।

कॉफी पीते-पीते अजय बोला, ''यार, इस समस्या का कोई तो हल होगा।'' पवन चुपचाप सिर नीचे किए बैठा रहा, वह कोई प्रति उत्तर नहीं देता। हाँ, पँखुड़ी जरूर अजय के दर्द की सहभागी बन गई। वह अपनी माँ का दु:ख बताती है, उनके एकाकी जीवन की दास्ताँ सुनाती तो अजय अपने पिताजी की। बात करते-करते एक घंटा व्यतीत हो गया। अचानक पवन हाथ ऊँचा करके कहता है, ''अगर तुम लोग मेरी कंबल परेड न करो तो मेरे दिमाग में

एक समाधान आया है।''

''क्या?'' अजय व पँखुड़ी एक साथ बोल पड़े।

पवन के स्वर में गंभीरता तैरने लगी, वह थोड़ा रुककर जमाते हुए बोला, ''देखो, तुम दोनों के मम्मी-पापा अकेले हैं, तन्हा हैं, परेशान हैं, दोनों के पास पैसा तो है, परंतु पास कोई नहीं है। दोनों को ही सहारा चाहिए। कोई अपना चाहिए, जिसके साथ वे अपनी बात शेयर कर सकें। साथ-साथ समय बिता सकें···तो···तो···तो··· ।''

''क्या तो···तो···तो···लगा रखी है। अब आगे भी बोलेगा या यों ही तो पर अटका रहेगा?'' अजय ने तेज स्वर में कहा।

पँखुड़ी मौन बस ध्यान से सुन रही है। गंभीरता से।

पवन दोनों की आँखों में आँखें डालकर देखता है, फिर कुछ सँभलते हुए बोला, ''क्यों न हमारे मम्मी-पापा असल जिंदगी में भी अपने 'मम्मी-पापा' बन जाएँ।''

''क्या मतलब?'' पँखुड़ी ने मौन तोड़ा।

''मेरा मतलब···मेरा मतलब है कि हम उनको अकेलेपन से बचाने के लिए ऐसा करते हैं।''

''क्या कर सकते हैं?'' पँखुड़ी ने पूछा।

''शादी।'' पवन ने जवाब दिया।

''शादी।'' शब्द सुनते ही अजय व पँखुड़ी दोनों चौंक गए। अजय ने पूछा, ''यार, तू ये क्या कह रहा है? हम अपने पापा की इस उम्र में···नहीं।''

''तो बुराई क्या है? वो गाना नहीं सुना—तुम बेसहारा हो तो किसी का सहारा बनो।''

''पवन सही कह रहे हैं, अजय।'' पँखुड़ी बोली।

''लेकिन यार, एक बुजुर्ग व्यक्ति से ऐसी बात करने में शर्म नहीं आएगी?''

एक लंबी साँस खींचते हुए पवन ने कहा, ''हाँ, ये दिक्कत तो आएगी, लेकिन मैं इतना जानता हूँ कि व्यक्ति तन से बूढ़ा होता है, मन से नहीं। दूसरी बात, हर किसी को सहारा चाहिए।''

''और भैया आजकल की भागमभाग भरी जिंदगी में कई चीजें पीछे छूट गई हैं। वो संयुक्त परिवार, वो मिलजुलकर रहना, एक-दूसरे के घर आना-जाना, एक-दूसरे के दु:ख-सुख में सम्मिलित होना। अब तो हर इनसान अपने में जीता है। एकाकी परिवार के इस जमाने में किसी के पास किसी के लिए वक्त नहीं है। किसी की परवाह नहीं है। सबकुछ बदल रहा है। समाज, समाज के मूल्य, परंपरा व विचारधाराएँ; फिर यदि हम बदल रहे हैं तो हर्ज ही क्या है?''

पवन ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, ''चल यार, बात करने में क्या जाता है। जैसा हम सोच रहे हैं, वैसा हो जाता है तो हमारे पेरेंट्स को एक-दूसरे का साथ मिल जाएगा। हमारी चिंताएँ बहुत हद तक दूर हो जाएँगी।''

अजय धीरे से कुछ सोचते हुए बोला—

''ठीक है यार, पापा की तन्हाई दूर करने के लिए यह अच्छा सुझाव है।''

पँखुड़ी बोली, ''मैं भी मम्मी से बात करती हूँ। ईश्वर करे, वे मान जाएँ तो मुझे अजय जैसा भाई और अंकल जैसे पापा एक साथ मिल जाएँगे। बचपन से ही पापा के स्नेह के लिए तरसी हूँ।''

अपनी बात कहते-कहते पँखुड़ी की आँखें भर आईं। उसके कंधे पर हाथ रखते हुए पवन बोला, ''तुम तो अभी से भावुक हो गईं। अभी तो सिर्फ विचारों का बीजारोपण हुआ।''

अजय एकाएक दृढता से बोला, ''पवन, इस सुझाव को सत्यता में बदलने के लिए हम लोग मिलकर कोशिश करेंगे। कार्य चुनौतीपूर्ण है, मगर यदि हमारे मन में सर्वकल्याण की भावना है तो यह कार्य अवश्य पूर्ण होगा।''

पवन भी दृढतापूर्वक बोला, ''मेरा विश्वास है, हमारे इस कदम से समाज में एक नवक्रांति का जन्म होगा।''

''अपनी सीट से उठते हुए अजय ने कहा, ''इसलिए तो हर उलझन में मैं चला आता हूँ तेरे द्वार, मेरे दु:खभंजन!''

और इसके साथ तीनों हँस पड़े। अजय विदा लेकर चल पड़ा—नवीन इरादों के साथ, नव दिशा की ओर।

२८, रेडियो कॉलोनी, इंदौर-४५२००१
दूरभाष : ९९७७९९३३१०

इस अंक की चित्रकार

अनुप्रिया

सुपरिचित रचनाकार एवं चित्रकार। राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ तथा बाल साहित्य की पत्रिकाओं में बाल कविताएँ प्रकाशित। इसके अलावा 'संवदिया', 'विपाशा', 'ये उदास चेहरे', 'अंजुरी भर अक्षर', 'हाशिये की आवाज' आदि पत्रिकाओं में रेखाचित्र प्रकाशित।

संपर्क : श्री चैतन्य योग, गली नं. २७, फ्लैट नं. ८१७
चौथी मंजिल, डी.डी.ए. फ्लैट्स
मदनगीर, नई दिल्ली-११००६२
दूरभाष : ९८७१९७३८८८

व्यंग्य

यमपुरी में हड़कंप

● अर्चना चतुर्वेदी

उन दोनों यमदूतों का आज साप्ताहिक अवकाश था, सो आराम फरमा रहे थे और टी.वी. पर फिल्म का आनंद ले रहे थे—वैसे तो यमदूतों का काम कभी खत्म नहीं होता, पर जब से बॉस यमराजजी ने नए यमदूत नियुक्त किए हैं, हफ्ते में एक छुट्टी सबको मिल जाती है, पर अपने टारगेट्स सबको पूरे करने होते हैं।

हाँ तो मैं बता रही थी कि यमदूत फिल्म देख रहे थे, तभी ब्रेक आया और विज्ञापन आने लगे। अचानक एक विज्ञापन देखकर परेशान हो गए। एक बोला, ''यार, ये तो बड़ी गड़बड़ है, यदि ये सचमुच काम करता है तो अपने काम पर तो बहुत असर होगा, खासकर भारतभूमि में तो टारगेट्स पूरे करना मुश्किल हो जाएगा।''

''चलो बॉस को बताते हैं जल्दी से, नहीं तो ये खत्म हो जाएगा।'' दूसरा बोला। दोनों यमदूत यमराजजी के कक्ष की ओर भागे। दरवाजा खटखटाकर अंदर प्रवेश किया। यमराजजी जूस पी रहे थे और रानी साहिबा अपना फेवरिट सीरियल देख रही थीं। दोनों दूतों को एक साथ अपने कक्ष में देखकर यमराज ने पूछा, ''क्या हुआ? आज तो तुम्हारी छुट्टी है, फिर इतने हड़बड़ाते से यहाँ क्या कर रहे हो?''

''सर, बात ही कुछ ऐसी है।'' फिर कुछ रुककर हड़बड़ाते हुए, ''जरा चैनल नंबर १२३ लगाकर देखिए, क्या अनर्थ हो रहा है।'' दोनों दूत एक साथ बोले।

''अरे भाई, उस चैनल का तो पता नहीं, पर इस वक्त रानी साहिबा अपना पसंदीदा सास-बहू सीरियल देख रही हैं और अभी चैनल बदलने की कोशिश की तो सचमुच अनर्थ हो जाएगा। ऐसा क्या आ रहा है? बता दो या फिर हम भी तुम्हारे कक्ष में चलकर ही देख लेते हैं।'' कहकर यमराजजी दूतों के कमरे की ओर चल दिए। यमराजजी दूतों के कमरे में पहुँचे तो देखा कि वहाँ टी.वी. चल रहा है और हनुमानजी का युद्ध चल रहा है काले कपड़ेवाले किसी कुरूप से राक्षस के साथ।

''ये कौन है? इतना बदसूरत सा और कितने पुराने फैशन के कपड़े पहने है, जिससे हनुमानजी लड़ रहे हैं? और हनुमानजी को कितना स्मार्ट बॉडी बिल्डर टाइप दिखाया है।'' ''प्रभू ये आप हैं।'' ध्यान से सुनिए, यमराज ने ध्यान से देखा-सुना तो उनका पारा गरम हो गया और गुस्से में बोले, ''ये किसकी साजिश है? हमें यों बदसूरत दिखाने की और ये क्या नया यंत्र है, जिसे यदि कोई मनुष्य पहन लेगा तो उसकी रक्षा स्वयं हनुमानजी करेंगे। ऐसे तो सब ये यंत्र पहनकर अपनी रक्षा हनुमानजी से करवा लेंगे, पृथ्वी लोक पर भीड़ बढ़ जाएगी और हमारे टारगेट कैसे पूरे होंगे? जल्दी से मंत्रीजी को बुलाओ आपातकालीन बैठक के लिए।''

सुपरिचित लेखिका। एक व्यंग्य-संग्रह 'मर्द शिकार पर है' एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'युवा लेखिका सम्मान', 'श्री गणेश शंकर विद्यार्थी पत्रकारिता सम्मान', 'युवा व्यंग्यकार सम्मान'। संप्रति 'विश्वगाथा' में सहसंपादक एवं स्वतंत्र लेखन।

मंत्रीजी सुनकर दौड़े-दौड़े आए, वे बुरी तरह हाँफ रहे थे। बोले, ''क्या हुआ प्रभु? इस वक्त कैसे याद किया और यहाँ दूतों के कमरे में क्यों बुलाया? आज तो छुट्टी है न।

''मंत्रीजी, हम यमलोक वासियों की कोई छुट्टी नहीं होती और आपसे कितनी बार कहा है कि जिम में आया करो, कितनी तोंद निकल रही है और किस कदर हाँफ रहे हैं, आप। आप जरा देखिए कि पृथ्वीलोक पर क्या हो रहा है?'' यमराज ने टी.वी. की तरफ इशारा किया।

मंत्रीजी चुपचाप देखने लगे, फिर बोले, ''महाराज, ये तो सचमुच चिंता का विषय है। आपको वाकई बहुत बदसूरत दिखाया गया है और तो और भैंसे पर बिठाया है। यदि पेटा वालों को पता लगा तो आप पर जानवरों की सवारी करने के कारण केस कर देंगे; हो सकता है आपको जेल भी हो जाए।''

''तुम्हारा दिमाग खराब है मंत्रीजी।'' यमराज चिल्लाए, ''यहाँ पूरा बिजनेस खतरे में है और आपको भैंसों की पड़ी है। अब किसी ने पृथ्वीवासियों को अपडेट ही नहीं किया तो वो क्या करें। उन्हें क्या पता कि हम अपने प्राइवेट प्लेन से जाते हैं और पृथ्वीवासियों से ज्यादा लेटेस्ट फैशन के कपड़े पहनते हैं। आप यह देखिए, वहाँ जो यंत्र बिक रहा है, जिसे पहनने से स्वयं हनुमानजी हमसे युद्ध करेंगे। यदि ऐसा हुआ तो हम किसी के प्राण ले ही नहीं पाएँगे, फिर तो यमलोक में ताला लगाना पड़ेगा, पृथ्वी लोक के डॉक्टरों की वजह से पहले ही प्राण लेने का बिजनेस कमजोर हो गया है। आपकी भी क्या जरूरत रह जाएगी। कोई उपाय बताइए, क्या करें?''

''महाराज आप इसे रिकॉर्ड करिए और देवताओं की मीटिंग बुलाइए, वो ही कुछ हल निकालेंगे।'' मंत्रीजी ने कुछ देर सोचकर जबाव दिया।

शाम को सभी देवता यम की सभा में उपस्थित थे। उन्होंने पूछा, ''क्या हुआ यमदेव! यों आपातकालीन सभा क्यों बुलाई गई है?''

''जी देवगण, बताता हूँ।'' यम बोले, ''वो रिकॉर्डिंग चलाई जाए।''

यम ने आदेश दिया

सबने वह फिल्म देखी और बोले, ''यमराजजी, यदि यह सूचना है तो वाकई चिंता का विषय है।''

अभी सब सोच में पड़े थे कि नारदजी ने प्रवेश किया। नारायण-नारायण! क्या हुआ प्रभु? आज सब देवता गण यहाँ क्यों हैं? कोई बड़ी घटना हुई क्या?''

''अरे नारदजी, आप तो पृथ्वीलोक पर विचरण करते रहते हैं, आपको तो पता होगी वह सूचना कि मनुष्यों ने ऐसा यंत्र बना लिया है कि अब यमराज उनके प्राण नहीं ले पाएँगे। स्वयं हनुमानजी उनकी रक्षा करेंगे।'' विष्णु भगवान् चिंतित होते हुए बोले।

''अच्छा यह बात है—हा हा हा, हा हा हा।'' नारदजी हँसते जा रहे थे और सभी देवी-देवता परेशान उनका मुँह ताक रहे थे।

''क्या हुआ नारदजी, हँस क्यों रहे हैं?''

''अरे महाराज, हँसूँ नहीं तो क्या करूँ। इन मानुषों की चालाकी देखो। एक-दूसरे को तो बनाते ही हैं, आपको भी बना डाला—हा हा हा।''

''अरे भाई, क्या बना डाला?''

''मूर्ख और क्या!''

''मूर्ख! क्या बक रहे हो नारद?''

''अरे प्रभु, सही कह रहा हूँ। ये सूचना नहीं, विज्ञापन था और मनुष्य लोग ऐसे बहुत से यंत्रों के, तेल के और न जाने कैसे-कैसे झूठे विज्ञापन दिखाकर पृथ्वीलोक के लोगों को मूर्ख बनाते हैं। कभी स्वयं को भगवान् कहते हैं तो कभी अमर होने के उपाय बताते हैं। ये सब तो उनके नए-नए बिजनेस आइडिए हैं। लोग भी ऐसे फालतू लोगों की बातों में आकर खूब धन लुटाते हैं। आप लोग भी आ गए न झाँसे में। ऐसे ही सब आ जाते हैं।'' नारदजी ने बताया।

''पर यह तो सरासर गलत है न। इस पर रोक लगनी चाहिए।'' सारे देवता बोले।

''कैसे रोक लगेगी? पृथ्वी लोक पर तो कोई कानून नहीं इसे रोकने का और मृत्युलोक में तो मरने के बाद ही स्वर्ग-नरक मिलेगा।''

''आप देवता ही कुछ सोचिए कि जीते-जी इन्हें कैसे सजा मिले?'' 'नारायण-नारायण' करते नारदजी चल दिए।

''हम ऐसा करते हैं कि कुछ दिन के लिए अपने बुद्धिमान मंत्रीजी और कुछ दूतों को पृथ्वीलोक में भेज देते हैं। वहाँ रहकर ही वो ऐसे लोगों पर कैसे रोक लगे, इस पर काम करेंगे और वहाँ के मनुष्यों को सावधान भी करेंगे कि वे इन झूठे विज्ञापनों के झाँसे में न आएँ।'' यमराजजी ने कहा, ''हाँ-हाँ, ये सही रहेगा।'' सब देवताओं ने हामी भरी। सभा खत्म हुई और सब चले गए।

मंत्रीजी भी पृथ्वीलोक प्रस्थान कर गए।

कुछ दिन बाद!

एक दिन सुबह मंत्रीजी का प्रवेश।

''अरे मंत्रीजी, आप आ गए! बड़े खुश नजर आ रहे हैं। लगता है, काम हो गया? और आपके हाथ में ये इतना सामान क्या है?'' यमराजजी ने प्रश्नों की झड़ी लगाई, ''अरे महाराज, ये हमारी तोंद कम करने के लिए बैल्ट है और कुछ पेय पदार्थ, जो हमारी बॉडी बनाएँगे। और एक खुशी की बात, अब हमने ऐसी व्यवस्था कर दी है कि किसी भी सामान की डिलीवरी यमलोक में भी होगी और हम ऑर्डर आसानी से कर सकेंगे।''

यमराजजी हैरान-परेशान से होकर बोले, ''पर तुम्हारे साथ कुछ दूत भेजे थे, वो कहाँ हैं?''

''अरे महाराज, दूतों ने वहाँ की कंपनियाँ ज्वॉइन कर ली हैं। वही तो पृथ्वी से यमलोक में सामान पहुचाएँगे।'' ये सुनकर यमराजजी ने अपने सिर पर हाथ रख लिया और आज तक उसी मुद्रा में हैं।

ई-११०४, आम्रपाली जॉडिक्ल प्लॉट, जी.एच. ०३
सेक्टर-१२०, नोएडा-२०१३०७ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८९९६२४८४३

बूढ़ा-बुढ़िया

लघुकथा

● लता कादंबरी

बुढ़िया बोली बुड्ढे से, ''हाय-हाय, नसीब फूटे हैं मेरे, बेटा होता तो बहू आती, गोल-गोल गालों को घुमाते हुए 'गिल्लू-पिल्लू' होते; खेला करते हम उनके साथ, रह गए न बुढ़ापे में ठूँठ से अकेले।'' सीने पर हाथ रखकर, ''ऊपरवाले ने दी भी तो एक ही बेटी दी; बड़ा तड़पाता है यह ऊपरवाला; बताओ तुम्हारे बाद किसके सहारे जीऊँगी? मैं, वो, मेरा वो, मेरा यह दर्द, मेरा वह दुःख...।'' कहते हुए वह फिर से रोने लगी।

यों तो बुड्ढा शांत स्वभाव का था, पर आखिरकार आज उसे भी बुढ़िया पर गुस्सा आ गया। चिल्लाकर बोला, ''चुप कर रोना-धोना, हमेशा अपने ही बारे में सोचा करती है, कुछ मेरे बारे में भी सोचने का समय है तेरे पास? सोच जरा, पहले तू चल पड़ी तो मेरा क्या होगा?'' और दुःखी होकर बोला, ''अपने हाथ की बनी गरम मुलायम रोटियों की आदत डलवाकर अगर पहले तू खिसक गई तो कहाँ ढूँढूँगा मैं तुझे, मेरा निर्वाह तो दामाद के पास होने से रहा। पर तू, तुझे तो उठाकर तेरी बेटी ले जाएगी साथ अपने। तेरा बुढ़ापा तो उसके बच्चों के साथ मजे से खेलते-कूदते कट जाएगा'', दोनों आँखों के कोरो को भिगोकर, ''पर क्या होगा मेरा, कभी सोचा?'' हमेशा अपने ही दुःख के बारे में सोचनेवाली बुढ़िया को अब तो रात-दिन अपने बुड्ढे की चिंता सताने लगी।

७/२०२ स्वरूप नगर
कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष : ७६०७३४५६७८

दंपती

मूल : **फ्रैंज काफ्का**
अनुवाद : **सुशांत सुप्रिय**

व्यापार है ही बुरी चीज। मुझे ही लीजिए। दफ्तर के काम से जब थोड़ी देर के लिए भी मुझे छुट्टी मिलती है तो मैं अपने नमूनों की पेटी उठाकर खुद ही अपने ग्राहकों से मिलने चल देता हूँ। बहुत दिनों से मेरी इच्छा एन. के पास जाने की थी।

कभी एन. के साथ मेरा काफी अच्छा कारोबार चल रहा था, लेकिन पिछले कुछ सालों से यह ठप्प पड़ गया। क्यों ? यह तो मुझे भी नहीं पता। ऐसी बात तो कभी बिना किसी कारण के भी घट सकती है। आजकल समय ही ऐसा है कि किसी का महज एक शब्द भी सारे मामले को उलट-पलटकर रख सकता है, जबकि एक शब्द सबकुछ ठीक-ठाक भी कर सकता है। दरअसल, एन. के साथ कारोबार करना बड़ा नाजुक मामला है। वह एक बूढ़ा आदमी है और बुढ़ापे के कारण काफी अशक्त भी हो गया है, फिर भी वह अपने कारोबारी मामलों को अपने ही हाथ में रखना पसंद करता है। अपने ऑफिस में तो वह आपको शायद ही कभी मिले और उससे मिलने के लिए उसके घर जाना एक ऐसा काम है, जिसे कोई भी भला आदमी टालना पसंद करेगा।

फिर भी कल शाम छह बजे मैं उसके घर के लिए निकल पड़ा। यह किसी से मिलने के लिए जाने का समय तो नहीं था, पर मेरा वहाँ जाना कारोबारी कारण से था, कोई सामाजिक सद्भाव नहीं। सौभाग्य से एन. घर पर ही था। अभी वह अपनी पत्नी के साथ सैर करके लौटा था। नौकर ने बताया कि साहब इस समय अपने बेटे के सोने के कमरे में हैं। बेटा बीमार है। नौकर ने मुझसे वहीं जाने का आग्रह किया। पहले तो मैं थोड़ा हिचका। फिर सोचा कि क्यों न इस अप्रिय मुलाकात को जल्दी निपटा दिया जाए। इसलिए मैं उसी हालत में, यानी ओवरकोट और टोपी पहने, हाथ में नमूनों की पेटी लिये एक अँधेरे कमरे को पार करके नीम अँधेरे कमरे में दाखिल हुआ, जहाँ तीन-चार लोग पहले से ही मौजूद थे।

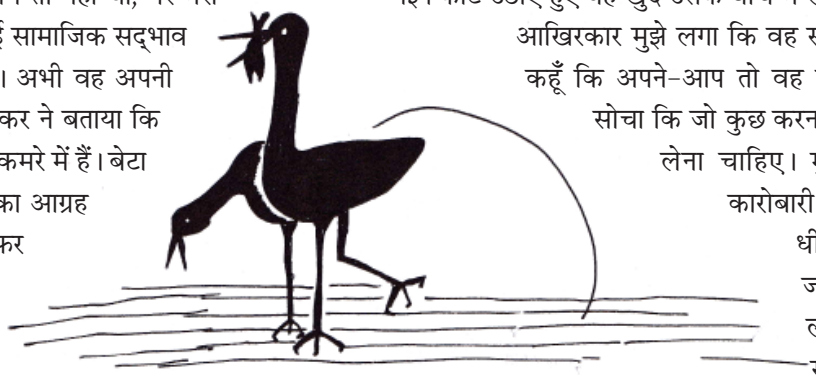

मेरी पहली नजर जिस व्यक्ति पर पड़ी, वह एक एजेंट था, जिसे मैं अच्छी तरह जानता था। एक तरह से वह मेरा कारोबारी प्रतिद्वंद्वी था। मुझे लगा, वह मुझसे पहले ही बाजी मार ले गया। वह आराम से बीमार के बिस्तर के पास ही बैठा था, जैसे वह कोई डॉक्टर हो। अपने ओवरकोट के बटन खोले बैठा वह निर्लज्ज सा लग रहा था। बीमार आदमी भी शायद अपने विचारों में खोया हुआ लग रहा था। उसके गाल बुखार से तप रहे थे। बीच-बीच में वह उस आगंतुक की ओर भी देख लेता था। एन. का बेटा छोटी उम्र का नहीं था। वह लगभग मेरी ही उम्र का होगा। उसकी छोटी सी दाढ़ी बीमारी के कारण छितराई हुई थी।

बूढ़ा एन. लंबा-तगड़ा आदमी था। उसके कंधे काफी चौड़े थे। पर यह देखकर मुझे हैरानी हुई कि वह अब दुबला हो गया है। उसकी कमर भी झुक गई है। वह अशक्त हो गया है। उसने अभी तक अपना कोट नहीं उतारा था। वह अपने बेटे के कान में कुछ फुसफुसा रहा था। उसकी पत्नी छोटे कद की दुबली और फुरतीली महिला थी। ऊँचाई में काफी फर्क होने के बावजूद वह अपने पति के कोट को उतारने में उसकी मदद करने लगी। हालाँकि शुरू में उसे दिक्कत हो रही थी, किंतु आखिरकार वह इसमें सफल हो गई। लेकिन असल दिक्कत तो एन. के अधैर्य की थी। कोट अभी पूरा उतरा भी नहीं था कि वह अपने हाथों से आरामकुरसी के हत्थे टटोलने लगा था। उसकी पत्नी ने कोट उतारते ही आरामकुरसी जल्दी से उसके पास सरका दी और खुद उसका कोट उठाकर रखने चली गई। कोट उठाए हुए वह खुद उसके बीच में लगभग ढक सी गई थी।

आखिरकार मुझे लगा कि वह समय आ गया है या यों कहूँ कि अपने-आप तो वह समय आता नहीं। मैंने सोचा कि जो कुछ करना है, मुझे जल्दी ही कर लेना चाहिए। मुझे लग रहा था कि कारोबारी बातचीत के लिए समय धीरे-धीरे प्रतिकूल होता जा रहा है। उस एजेंट के लक्षण तो मुझे ऐसे दिख रहे थे, जैसे वह वहीं जमा रहना चाहता हो। यह मेरे हित में नहीं था; हालाँकि मैं वहाँ उसकी उपस्थिति को जरा भी अहमियत नहीं देना चाहता था। इसलिए मैंने बिना किसी भूमिका के झटपट अपने धंधे की बात शुरू कर दी, बावजूद इसके कि इस समय एन. अपने बीमार बेटे से बात करना चाह रहा था। दुर्भाग्य से यह मेरी आदत हो गई थी कि जब मैं अपनी असली बात पर आता हूँ, जो कि आमतौर पर जल्दी ही

होता है और इस मामले में तो समय और भी कम लगा, तो मैं बात करते-करते खड़ा हो जाता हूँ और चहलकदमी करने लगता हूँ। किसी दफ्तर में तो यह हरकत बड़े ही स्वाभाविक तरह से हो सकती है, पर यहाँ बड़ा अटपटा लग रहा था। फिर भी मैं खुद को रोक नहीं पाया। इसका एक कारण और भी था। सिगरेट की बड़ी तलब लग रही थी। ठीक है, हर आदमी की कुछ बुरी आदतें होती हैं। दूसरी ओर, उस एजेंट की हालत देखकर मुझे बहुत राहत मिल रही थी। वह उद्विग्न लग रहा था। वह अचानक घुटने पर रखी अपनी टोपी उठाकर झटके से अपने सिर पर रख लेता था और फिर वहाँ उसे ऊपर-नीचे करता रहता। फिर अचानक उसे लगता कि उससे कोई गलती हो गई है। तब वह उस टोपी को अपने सिर से उतारकर वापस अपने घुटने पर रख देता। हर एक-आध मिनट में वह इन्हीं हरकतों को दोहराता जा रहा था। मुझे तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ रहा था, क्योंकि मैं तो चहलकदमी करता हुआ अपने प्रस्तावों में पूरी तरह से खोया हुआ था और उसे अनदेखा कर रहा था, लेकिन उसकी ये हरकतें अन्य लोगों को जरूर आपे से बाहर कर रही होंगी।

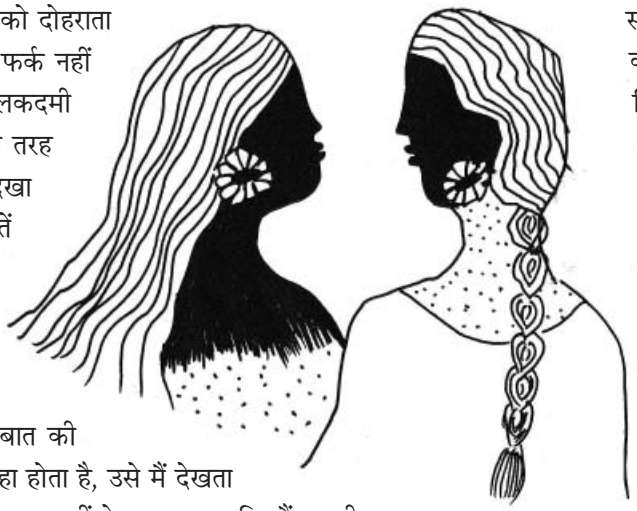

दरअसल, मैं जब अपनी बात में पूरा रम जाता हूँ तो ऐसी हरकतों की ही क्या, किसी भी बात की परवाह नहीं करता। जो कुछ हो रहा होता है, उसे मैं देखता तो हूँ, पर उस ओर तब तक कोई ध्यान नहीं देता, जब तक कि मैं अपनी बात पूरी न कर लूँ या जब तक कोई दूसरा व्यक्ति किसी तरह की आपत्ति प्रकट न करे। इसलिए मैं सबकुछ देख रहा था। मसलन एन. मेरी बात की ओर जरा भी ध्यान नहीं दे रहा था। कुरसी के हत्थे को पकड़े वह बिना मेरी ओर देखे बेचैनी से कसमसाया। वह कहीं शून्य में टकटकी लगाए देख रहा था, जैसे कुछ ढूँढ़ रहा हो। उसके चेहरे को देखकर कोई भी समझ सकता था कि मेरे कहे हुए शब्दों से या सही कहें तो मेरी उपस्थिति से भी वह पूरी तरह अनभिज्ञ लग रहा था। उसकी और उसके बीमार बेटे की हालत मेरे लिए शुभ लक्षण नहीं थे, फिर भी मैंने स्थिति को काबू में रखकर अपनी बात कहनी जारी रखी, जैसे मुझे विश्वास हो कि अपनी बात कहकर मैं सारा मामला फिर से ठीक कर लूँगा।

मैंने एन. के सामने एक लाभकारी प्रस्ताव रखा; हालाँकि बिना माँगे ही जिस तरह की रियायतें देने की बात मैंने कह दी थी, उसने खुद मुझे ही चौंका दिया। इस बात से मुझे बड़ा संतोष मिला कि मेरे प्रस्ताव ने उस एजेंट को चक्कर में डाल दिया था। उस पर एक सरसरी निगाह डालते हुए मैंने देखा कि अपनी टोपी को जहाँ-का-तहाँ छोड़कर अब उसने अपने दोनों हाथ अपनी छाती पर बाँध लिए थे। मुझे यह स्वीकार करने में हिचक हो रही है कि मेरे इस कृत्य का उद्देश्य उसे धक्का पहुँचाना था। अपनी इस जीत के उत्साह में मैं काफी देर तक अपनी बात कहता रहा, लेकिन तभी उसके बेटे ने, जिसे मैं अपनी इस योजना में फालतू चीज समझे बैठा था, बिस्तर से उठकर काँपते हाथों से मुझे धक्का दे दिया। हो सकता है कि वह कुछ कहना चाहता हो या किसी बात की ओर संकेत करना चाहता हो, लेकिन उसमें इसकी ताकत न हो। पहले तो मुझे लगा, जैसे उसका दिमाग घूम गया है, पर जब मैंने बूढ़े एन. पर एक उबाऊ नजर डाली तो सारी बात मेरी समझ में आ गई।

एन. की खुली हुई आँखें भावशून्य और सूजी हुई थीं। लग रहा था, जैसे उसे बहुत कमजोरी महसूस हो रही हो। वह काँप रहा था और उसका शरीर आगे की ओर झुका जा रहा था, जैसे कोई उसके कंधों को ठोक रहा हो। उसका निचला होंठ या यों कहें कि निचला जबड़ा लटक गया था और वहाँ से झाग सा बाहर आ रहा था। वह बड़ी मुश्किल से साँस ले पा रहा था। फिर अचानक जैसे उसे सारे कष्ट से मुक्ति मिल गई हो, उसने कुरसी पर पीठ टिकाकर आँखें बंद कर लीं। दर्द का एक गहरा अहसास उसके चेहरे पर से गुजरा और लगा, जैसे सब कुछ खत्म हो गया हो।

मैं झटके से उसकी ओर गया और उसकी बेजान कलाई थाम ली। वह इतना ठंडा था कि एक बार तो ठंड की एक लहर मेरे पूरे शरीर में दौड़ गई। नब्ज थम गई थी, यानी सब खत्म हो गया था। कुछ भी हो, वह बहुत बूढ़ा हो गया था। काश, हम सबको भी ऐसी मौत नसीब होती। लेकिन अब मैं क्या करूँ? मैंने मदद के लिए आसपास देखा। उसके बेटे ने चादर सिर तक ओढ़ ली थी और उसकी सिसकियों की आवाज मैं साफ सुन रहा था। वह एजेंट तो किसी मछली की तरह ठंडा लग रहा था। वह एन. से दो कदम दूर अपनी कुरसी पर अचल बैठा था और लग रहा था कि वह कुछ नहीं कर पाएगा। इसलिए मैं ही वह एकमात्र व्यक्ति था, जो कुछ कर सकता था। बड़ा कठिन काम था उसकी पत्नी को उसकी मौत की खबर देना और वह भी इस तरह कि वह उसे सहन कर सके। बगल के कमरे से मुझे उसकी पदचाप सुनाई देने लगी थी।

वह अभी तक सैरवाले कपड़ों में ही थी। उन्हें बदलने का उसे अभी तक समय ही नहीं मिला था। वह अपने पति को पहनाने के लिए आग के सामने गरम करके घर के कपड़े लाई थी। हमें स्थिर बैठे देख उसने मुसकराते और अपनी गरदन हिलाते हुए कहा, 'वे सो गए हैं।' अपने अपरिमित निर्दोष विश्वास के साथ उसने अपने पति की वही कलाई पकड़ी, जो कुछ देर पहले मैंने पकड़ी थी और बड़े प्रमुदित मन से उस पर एक चुंबन अंकित कर दिया। हम तीनों आश्चर्य से देखते ही रह गए कि एन. हिला और उसने जम्हाई ली। पत्नी ने उसे घर की कमीज पहनाई और इतनी लंबी सैर के लिए, जिसने उसे थका दिया था, उलाहना देने लगी। वह उस उलाहने को खीज और व्यंग्य के भाव से सुनता रहा और जवाब में उसने कहा कि वह उकताने लगा था और उसी वजह से उसे नींद आ गई

थी। और फिर कुछ देर आराम करने के लिए उसे बीमार के बिस्तर पर ही लेटा दिया गया। सिर के नीचे रखने के लिए उसकी पत्नी जल्दी से दो तकिए ले आई और बीमार के पायताने की ओर रख दिए। अपने कमरे में उसे इसलिए जाने नहीं दिया गया, क्योंकि वहाँ जाने के लिए एक खाली कमरे से गुजरना पड़ता था और उसमें उसे ठंड लग सकती थी।

जो कुछ पहले घटा था, अब उसमें मुझे कोई विचित्रता नहीं लग रही थी। फिर एन. ने शाम का अखबार माँगा और अपने मेहमानों की ओर जरा भी ध्यान दिए बिना अखबार खोल लिया। वह ध्यान से अखबार नहीं पढ़ रहा था। यों ही सरसरी तौर पर इधर-उधर निगाह डाल रहा था। उसने हमारे प्रस्तावों पर कुछ अप्रिय टिप्पणियाँ भी कीं। दरअसल उसने अपने हाथ को बड़े तिरस्कारपूर्ण ढंग से हिलाते हुए जिस तरह की तीखी टिप्पणियाँ की थीं, उसमें इस बात की ओर स्पष्ट संकेत था कि कारोबार करने के हमारे तरीकों ने उसके मुँह का स्वाद खराब कर दिया है। यह सब सुनकर उस एजेंट ने भी एक-दो अप्रिय टिप्पणियाँ कर ही दीं। बेशक, जो कुछ घटा था, उसकी क्षतिपूर्ति का यह सबसे घटिया तरीका था। जल्दी ही मैंने उनसे विदा ले ली। मैं उस एजेंट का आभारी था; क्योंकि यदि वह न होता तो मुझे वहाँ से खिसकने का इतना अच्छा मौका न मिल पाता।

बाहर निकलते हुए बरामदे में मुझे श्रीमती एन. मिल गईं। उनकी करुण मूर्ति को देखकर मैंने कहा कि उन्हें देखकर मुझे अपनी माँ की याद आ गई। उन्हें चुप देखकर मैंने आगे कहा, 'लोग जो भी कहें, पर वे चमत्कार कर सकती हैं। जिन चीजों को हम तोड़-फोड़ देते, वे उन्हें फिर से ठीक कर देतीं। जब मैं बच्चा था, तभी उनकी मृत्यु हो गई थी।' मैंने यह बात बड़े धीरे-धीरे और सुस्पष्ट ढंग से कही। मेरा खयाल है कि वह वृद्धा जरा ऊँचा सुनती थी, पर वह तो बिल्कुल भी नहीं सुन पाती थी, क्योंकि मेरी बात को बिना समझे उसने पूछा था, 'मेरे पति आपके प्रस्ताव पर क्या कह रहे हैं?' विदाई के दो-चार शब्दों के बीच मुझे यह भी लगा कि वह मुझे एजेंट समझ रही है, अन्यथा वह अधिक विनयी होती।

फिर मैं सीढ़ियाँ उतर गया। उतरना चढ़ने से ज्यादा थका देनेवाला साबित हुआ, हालाँकि चढ़ना भी कोई आसान काम नहीं था। ओह, कितनी ही कारोबारी मुलाकातें ऐसी होती हैं, जिनका कोई परिणाम नहीं निकलता है, पर इसके लिए हाथ पर हाथ धरे भी तो नहीं बैठा जा सकता, और मुलाकातें करते रहना पड़ता है।

ए-५००१, गौड़ ग्रीन सिटी,
वैभव खंड, इंदिरापुरम्,
गाजियाबाद-२०१०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ८५१२०७००८६

सुधी पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. १११०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamrit@gmail.com पर इ-मेल करें।

बुंदेलखंडी जनजातियाँ व उनके लोकोत्सव

● एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

हमारा देश विभिन्न धर्मों-समुदायों, भाषा-बोली, प्राकृतिक रचनाओं का अद्‌भुत संगम है और अनेकताओं में एकता को समाहित किए है। आज हमारा देश प्रत्येक क्षेत्र में विकास कर रहा है। संसार के साथ कदम मिलाकर चलने का प्रयास कर रहा है। शिक्षा, रहन-सहन, व्यवहार, आवागमन के साधनों में प्रगति हुई है, किंतु आदिवासी जनजीवन में आज भी अत्यंत विषमताएँ हैं, जिनको अनदेखा नहीं किया जा सकता। आवागमन के साधनों बैलगाड़ी से लेकर हवाई जहाज तक चल रहे हैं। एक समुदाय, जिसे हम आदिवासी या जनजाति कहते हैं, से प्रारंभ होकर संपूर्ण शिक्षित और विकसित परिवार भी देश में हैं। कि इक्कीसवीं सदी में भीजनजातीय लोग कैसे रह रहे हैं और उनके अमोद-प्रमोद के साधन क्या हैं और पूर्व में क्या थे? ये कितने विस्मृत होते जा रहे हैं और कितने आज भी साथ हैं। मैं बुंदेलखंड का निवासी हूँ और जीवन का अधिक समय यहीं बिताया है, हालाँकि देश के अनेक क्षेत्रों में मैंने भ्रमण किया है और लोगों के रहन-सहन तथा संस्कृति को निकट से देखा और समझा भी है। किंतु सबसे अधिक बुंदेलखंड क्षेत्र में निवास करनेवाले आदिवासी जनजातियों के बारे में अध्ययन किया है।

वैसे तो आदिवासियों में अनेक जातियाँ, उपजातियाँ होती हैं, जो अलग-अलग क्षेत्रों के अनुसार पाई जाती हैं, जैसे आज अंगरिया, भील, भिलाल, वैगा, भरिया, भाइना, भट्‌टा, भंजिया, विजवार, विरहूल, वियार, भूमिया, धनवार, दामोर, गौंड, गड़वा, गरलिया, हलवा, कमार, कोरकू, कमोर, कनवर, कोर, वोपची, खैरवार, खारिया, कींड़, खोंड़ कोल, कोलम, कोरवा, कोर मझवार, मुंडा, माँझी, नोसिया, निहाल, नट, नवदीगर, धनका, धनगढ़, परधान, पारधी, परजा, पनिका, पाओ, सबूनरा, सावार, सहरिया सेहरिया सोर, सोंर रावत।

वर्तमान में जिन जनजातियों का यहाँ निवास है, वे हैं सौंर तथा रावत। ये लोग वन, जंगल और पहाड़ों के नजदीक बस्तियाँ बनाकर रहते हैं। इनके रहने के मकान घास, लकड़ी अथवा कवेलू के बने होते हैं। और ये लोग जंगली पशुओं का शिकार करते हैं तथा जंगली फूल, फल, कंद आदि का सेवन करते हैं। जंगलों से सूखी जलाऊ लकड़ियाँ लाकर गाँव-बस्ती में बेचकर आटा, दाल, सब्जी, नमक, मिर्च, तेल और आवश्यक वस्तुओं को खरीदते हैं। कुछ लोग गाँव-बस्ती में अब मेहनत-मजदूरी भी करने लगे हैं। स्वभाव से ये लोग सीधे-सरल और ईमानदार होते हैं। आर्थिक रूप से कमजोर तथा गरीब हैं। शिक्षा आज भी ये ग्रहण नहीं कर पाते हैं। इनमें थोड़ा-बहुत अक्षर ज्ञान तो आया है, किंतु अधिक शिक्षित नहीं पाए जाते हैं।

जाने-माने लेखक एवं कवि। प्रमुख कृतियाँ हैं– 'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (*काव्य-संग्रह*), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (*कहानी-संग्रह*)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल सहित कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

भाषा : जनजातियों की इस क्षेत्र में बोलचाल की भाषा अपभ्रंश, टूटी-फूटी हिंदी तथा बुंदेली है, जो सामान्य लोगों के बोलचाल से कुछ अलग है।

धर्म : ये लोग हिंदू धर्म के अनुयायी हैं, मूर्ति पूजक हैं, किंतु सामान्य हिंदुओं की अपेक्षा इनके इष्टदेव कुछ अलग हैं। जैसे देवी माँ इन की इष्टदेवी हैं। ये लोग भूत-प्रेतों को भी पूजते हैं, जिनमें मुख्य रूप से गौंड़बाबा, करुआ बाबा, घटोइया बाबा और मसान हैं। इनकी पूजा में पशु-पक्षी की बलि देने तथा शराब चढ़ाने का भी रिवाज चला आ रहा है। शादी-विवाहों में भी यही होता है। इसी के अनुरूप इनके व्यवहार, उत्सव, नृत्य-गीत भी होते हैं।

नृत्य और गीत त्योहारों के मनाने के तौर-तरीके सब पारंपरिक पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आ रहे हैं। इनका कोई लिखित लिपिबद्ध साहित्य नहीं पाया जाता है। सभी मौखिक और अलिखित है। इस समुदाय के लोग शरद ऋतु में जब शाम को फुरसत के समय अलाव जलाकर बाहर बैठते हैं तो आग तापते हैं। गरमी के मौसम में भी बाहर खुली हवा में इकट्‌ठा बैठते हैं, तब कहानियाँ भी सुनाते हैं। इनके किस्सा-कहानियाँ राजा-रानी, भूत-प्रेत, जंगल, पहाड़, नदी, तालाबों तथा जंगली जानवर शेर, चीता, वियार, लोमड़ी-गोहा से संबंधित होती हैं। यही इनके मनोरंजन के साधन हैं। कभी-कभी ये लोग देवीजी के भजन, लोकगीत और फागुन गीत भी गाते हैं। जो मौसम और त्योहारों के अनुरूप होते हैं।

उत्सव और त्योहार : इन लोगों के विवाहोत्सव, देवी-देवताओं, भूत-प्रेतों की पूजा के उत्सव हैं। ये त्योहार तो हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार होते हैं, जैसे नवदुर्गा, दशहरा, दीपावली, फाग और रक्षाबंधन

है। इन उत्सव और त्योहारों पर इनके गीत अलग-अलग तरह के होते हैं, जिनका विवरण आगे दिया जा रहा है। सभी उत्सव-त्योहारों के साथ इनके नृत्यों की शृंखला का अवलोकन करते हैं। जो मुख्य रूप से रावला, स्वाँग, मोनिया नृत्य तथा जुगिया नृत्य प्रचलित हैं।

लोक नृत्य : मन में जब उमंग हो तो मन मयूर नाचने लगता है। नई देवी उपासना का पर्व जनजातीय बड़े उत्साह से मनाते हैं। देवीजी का व्रत रखते हैं और प्रात: नहा-धोकर महिलाएँ तथा पुरुष जल चढ़ाते हैं एवं शाम को महिलाएँ एकत्र होकर देवीजी के गीत गाती हैं और नृत्य करती हैं। एक देवी गीत प्रस्तुत है—

नथुनिया लटक रही गोरे गाल पै हो माँ!
ठंडों सो पानी गरम कर लाए
सपरौ खोरो फिर चली जाव
दूधा के लडुवा ताती जलेबी
जैवो फिर चली लाव हो माँ!
सोने के लोटा गंगाजल पानी
पी लो फिर चलीं जावो हो माँ!
पीरी अँगोछी पीतम रंग सारी
पैरो फिर चली जाव हो माँ!
नथुनिया लटक रही गोरे गाल पै हो माँ!

देवी गीत में माताजी के शृंगार का वर्णन करते हुए उनसे प्रार्थना करती है कि आप के स्नान हेतु पानी गरम करके लाए हैं। आप सपरें-खोरें मतलब स्नान कर लें और दूध के लड्डू तथा गरम जलेबी प्रसाद हेतु तैयार हैं। प्रसाद ग्रहण करने के पश्चात् स्वर्ण कलश में गंगा जल है, ग्रहण कर लें, तत्पश्चात् पीले रंग के वस्त्र तैयार हैं, इन्हें धारण करके ही आप प्रस्थान करें माँ।

भोग-प्रसाद, सेवा-पूजा के उपरांत भक्तगण गीत के माध्यम से विनय करते हैं—

सुमर-सुमर मोई तौरौ जस गाऊँ,
चरण छोड़ कहाँ जाऊँ हो माँ!
दुखन की मारी गोरी ठांडी,
विरछ तरें अँसुवा रही बहाय हो माँ!

देवी माँ अपने भक्त से पूछती हैं कि—

कै तोरी सास-ननद दु:ख दीन्हो,
कै मायके तोरे दूर हो माँ!
न मोरी सास-ननद दु:ख दीन्हों
न मोरे मायके दूर हो माँ!
घरई के सइयाँ बाँझ कहत हैं
जे दु:ख सहे न जाय हो माँ!
सुमर-सुमर माई तोरो जस गाऊँ
चरण छोड़ कहाँ जाऊँ हो माँ!
अंधन को तो नैन दये हैं
कोढ़िन को दई काया हो माँ
निर्धन को माया दई तुमने
बाँझन भरा दई गोद हो माँ

देवी माता को स्मरण कर चरण वंदन करके एक स्त्री पेड़ के नीचे खड़ी दु:खी होकर आँसू बहा रही है। देवी माता जानना चाहती हैं कि तुम्हारी सास, ननद ने दु:ख दिया है अथवा तुम्हारे माता-पिता ने या मायका दूर है, इस कारण से तुम दु:खी होकर रोदन कर रही हो, इस पर भक्त स्त्री कहती है कि मेरी सास-ननद ने कोई दु:ख नहीं दिया और न ही मेरा मायका दूर है। बल्कि मेरा पति मुझे बाँझ कहता है, इसलिए माता मुझे संतान दे दो, क्योंकि मैं बाँझ अर्थात् नि:संतान हूँ।

हे मातेश्वरी, आपको कुछ भी अदेय नहीं है। आप अंधे व्यक्तियों को ज्योति देती और कोढ़ी की काया को सुंदर बना देती हैं। नि:संतान को संतान देती हैं। देवी माता प्रसन्न होकर स्त्री की मनोकामना पूर्ण कर देती हैं।

इसी आस्था के साथ देवी भक्ति-पूजा-भजन करते हैं। देवी शक्ति की पूजा करते हैं। भूत-प्रेत योनियों में विश्वास करते हैं। जिसमें गौंड बाबा, करुवा बाबा तथा घटौइया, मसान को पूजते हैं। त्योहारों पर नाच-गान, खाना-पीना होता है। गौंड बाबा का चबूतरा बनाकर, उनकी स्थापना कर पूजा-भजन और नृत्यों के आयोजन किए जाते हैं। इसी प्रकार करुवा बाबा के स्थान स्थापित किए जाते हैं। किंतु घटौइया बाबा तो नदी-नालों के घाटों पर ही चबूतरा बनाकर पूजे जाते हैं। जिस नदी-नाले के घाट पर घटौइया विराजमान होते हैं, उस रास्ते से शादीशुदा कोई भी बेटी-बहू निकलती है तो वहाँ रुककर पूड़ी, पापड़िया, मीठा, बतासा, नारियल आदि जरूर चढ़ाती हैं। जो लोग ऐसा नहीं करते हैं, तो उनकी ऐसी मान्यता रहती है कि उस बहू-बेटी पर घटौइया प्रेत सवारी कर लेता है और उसे परेशान करने लगता है। जिसके निवारण के लिए उन्हीं की बिरादरी में तांत्रिक होते हैं। वे भूत भगाने, घटौइया को भक्त का साथ छोड़ने के लिए मनाते हैं, जिसके लिए पशु-पक्षी की बलि चढ़ाई जाती है, शराब भी चढ़ाते हैं। फिर लोग इस पशु-पक्षी के मांस को पकाते-खाते, उत्सव मनाते और गीत गाते हुए नृत्य करते हैं।

मसान : इन आदिवासियों में अल्प आयु में जिन बालकों का असामयिक निधन हो जाता है। कहते हैं कि उनकी आत्मा प्रेत योनि में भटकती रहती है। ऐसी प्रेत योनि को मसान के रूप में पूजते हैं। जब मसान बाबा किसी पर रुष्ट हो जाते हैं तो तांत्रिक पूजा कर इन्हें मनाते हैं। तब पीड़ित को मुक्ति मिलती है।

विवाहोत्सव एवं लोकनृत्य : विवाहोत्सव प्रत्येक समुदाय में खुशी

का समय, उत्सव मनाने व नाच-गान का अवसर माना जाता है। सर्वप्रथम हम यहाँ वर पक्ष के विवाहोत्सव का वर्णन करते हैं, जिसमें दूल्हा को 'बना' कहा जाता है और दुलहन को 'बनी' करते हैं। दूल्हे का शृंगार हल्दी, उबटन तथा स्नान कराकर नए वस्त्र धोती-कुरता पगड़ी एवं लाल कपड़े का 'वागौ' (दूल्हे का परिधान) पहनाया जाता है। आँखों में काजल, हाथ में कंगन और बगल में कटार लटकाते हैं। घर में महिलाएँ मंगल गीत गाती हैं, जिसे 'बना गीत' कहा जाता है—

बना की बनरी हेरे बाठ, बना मोरो कब घर आवेजू
बना के आजुल चतुर सुजान, बना खों ऐसा सजदवो जू
जैसे सज गए लछमन राम भरत खों आगें करलवो जू
बना के बाबुल चतुर सुजान, बना खों ऐसा जसदवो जू
जैसे सज गए लछमन राम शत्रुघन आगें करलवो जू
हाथी घुडला सजे सवार तुरई रमतूला बाते जू
बना की बनरी हेरे बाठ, बना मोरो कब घर आवेजू

यहाँ एक बात उल्लेखनीय है कि वरपक्ष को राम और वधूपक्ष को सीताजी मानकर संबोधित किया जाता है।

दूल्हा सजकर, तैयार बारात सज-धजकर तैयार होकर तुरई रमतूला बजाती नगड़िया ढोलक के साथ दुलहिन के घर पहुँचती है।

जुगिया नृत्य : जब बारात वधूपक्ष के यहाँ पहुँच जाती है, तो उस समय वर के घर पर महिलाएँ जुगिया बाबा का नृत्य करती हैं। कुछ महिलाएँ मर्दों का भेष बना लेती हैं, मर्दों जैसे कपड़े पहनकर अपने चेहरे पर नकली दाढ़ी-मूँछ लगा लेती हैं और हाथ में शस्त्र स्वरूप नकली बंदूक और धान कूटनेवाला मूसल लेकर मोहल्ला-गाँव में भ्रमण कर आपस में हँसी-ठिठोली करती, हँसी-मजाक करती है। इतना ही नहीं पुरुष भेषवाली महिलाएँ अन्य साथी महिलाओं के साथ मिलकर के गाती-नाचती हैं। इसे जुगिया नृत्य कहते हैं।

जुगिया नृत्य जहाँ एक हँसी-मजाक मनोरंजन है, वहीं इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि बारात में अधिकांश मर्द वधू पक्ष के यहाँ चले जाते हैं। वर पक्ष में घर में अकेली महिलाएँ रह जाती हैं तो जुगिया नृत्य में मर्द बनकर चोर-बदमाशों से रक्षा करती, रातभर नृत्य एवं जागरण होता है, जिससे घर एवं झोंपड़ी सूनी नहीं रहती है। महिलाएँ एक समूह में सचेत रहती हैं। उन्हें अकेलापन एवं असुरक्षा महसूस नहीं होती है। जुगिया नृत्य होता रहता है। इन आदिवासियों के जीवन में आज भी इतने सारे रीति-रिवाज, रस्में तथा परंपराएँ निभाई जाती हैं, जब शहरी लोग अपनी विरासत को कब का भूल चुके हैं, पर ये अपढ़ आदिवासी अपनी इस विरासत को अपनी अगली पीढ़ी को जरूर सौंपते हैं और आज भी इन सब रस्मों को जीवंत बनाए हुए हैं। हमारे लोकजीवन की विषमताएँ आज भी इन समुदायों के बीच प्रचलित हैं।

आनंद भवन, मेन रोड पृथ्वीपुर,
जिला-टीकमगढ़-४७२३३८ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२४३४५३५५

गजल

संदेहों का कल

● गोपीनाथ कालभोर

भीतर कोई छल पलता है,
संदेहों का कल पलता है।

बहुत समय से देख रही हूँ,
कोई पुराना डर पलता है।

चेहरे की रेखा बतलाती,
बदला कोई पल पलता है।

लगता है कि नासूरों सा,
घाव कोई पल-पल छलता है।

यहाँ-वहाँ तुम छिपते मानो,
दुश्मन पीछे को चलता है।

बेमतलब क्यों रात गँवाते,
मेरा दिल तिल-तिल जलता है।

तुम्हें नहीं क्यों फिक्र हमारी,
उड़ रहे जैसे पर जलता है।

किसके लिए चाहते मरना,
तुम्हारा धर्म तुम्हें छलता है।

बच्चों के खातिर लौट आओ,
रोज उनका रोना चलता है।

पड़ोसी कब से पूछे 'गोपी',
मित्र फकीरा कहाँ पलता है।

'पुष्पगोरिनी'
शा. कन्या महाविद्यालय गेट
(पूर्व) के सामने,
पड़ावा, खंडवा (म.प्र.)
दूरभाष : ०७३३-२२४३९७२

सौराष्ट्र की तीर्थ परिक्रमा

● प्रेमपाल शर्मा

नव वर्ष २०१६ के दूसरे ही दिन सौराष्ट्र यात्रा का कार्यक्रम बन गया। इस बार चाचा रवि की बिटिया की शादी का कार्ड भगवान् द्वारकाधीश को भेंट करना है। सो सात सदस्यीय यात्री-दल में हैं—मेरे मित्र आनंद शर्मा, इनके चाचा हरिप्रसाद शर्मा, रवि शर्मा के अलावा चौ. वीरेंद्र सिंह, नवीन कांडपाल एवं भाई जीत शर्मा। २ जनवरी को दिल्ली से आश्रम एक्सप्रेस में सवार हुए और रुकते-चलते अगले दिन सायं सात बजे हम द्वारका स्टेशन पर उतर गए। तीर्थ-पुरोहित लालूजी हमें लेने आ पहुँचे और उन्होंने अग्रसेन धर्मशाला में ठहरा दिया। रात्रि को शयन आरती में शामिल हो द्वारकाधीश भगवान् के दर्शन किए। अगले दिन प्रात: गोमती में स्नान कर द्वारकानाथ के पुन: दर्शन किए। इसके बाद हम लोग प्रात: में रुक्मणि मंदिर, माँ त्रिपुरसुंदरि के दर्शन कर बेट द्वारका निकल गए। लौटते में नागेश्वर ज्योतिर्लिंग, गोपी तालाब आदि तीर्थों के दर्शन किए। दोपहर के बाद द्वारका के स्थानीय मंदिरों के दर्शन कर सायं को समुद्र तट पर सूर्यास्त देखा। अगले दिन यानी ६ जनवरी को प्रात: आनंदजी ने द्वारकाधीश प्रभु को माखन-मिसरी का भोग लगवाया तथा रवि चाचा ने शादी-कार्ड भेंट किया और तीर्थपुरोहित लालूजी ने विधि-विधान से तुलादान करवाया। इन सब तीर्थों का विस्तृत विवरण पाठक 'साहित्य अमृत' के मार्च-१५ के अंक में 'मोक्षपुरी द्वारका में दो दिन' शीर्षक लेख में पढ़ चुके हैं।

छह जनवरी को रात्रि ८:४० पर ओखा-सोमनाथ एक्सप्रेस से सोमनाथ के लिए प्रस्थान किया और प्रात: छह बजे सोमनाथ स्टेशन पर उतर गए। सड़क मार्ग से सोमनाथ की दूरी रेल की अपेक्षा काफी कम है, रेल काफी लंबा रास्ता तय कर सोमनाथ पहुँचती है। अस्तु, ऑटो पकड़ हम सोमनाथ मंदिर की ओर चले, जो स्टेशन से एक-डेढ़ कि.मी. से ज्यादा दूर नहीं है। चौराहे पर कमरों के मालिक यात्रियों की तलाश में रहते हैं, सो एक गृहस्थ पंडितजी छह सौ रुपए में दो कमरे देने को तैयार हो गए। परंतु आज भोर से ही यहाँ लाइट नहीं है। कमरे पर सब लोग जब तक दैनिक कर्मों से निवृत्त हों, तब तक मैं आपको 'सोमनाथ' के बारे में बताए देता हूँ।

भारत के एकदम पश्चिमी छोर पर समुद्र तट पर झुकी हुई अटारी सा यह प्रदेश अत्यंत रमणीय है, जिसे हम सब 'सौराष्ट्र' के नाम से जानते हैं। यह भारत देश की पश्चिम सीमा है, यहाँ से आगे दक्षिणी ध्रुव तक समुद्र-ही-समुद्र है, कोई स्थल नहीं है। पूरा सौराष्ट्र पवित्र प्रभास क्षेत्र में फैला है। पहले इसका नाम 'कुशव्रत' था। इसे सोरठ, सौराष्ट्र या काठियावाड के नाम से भी जाना जाता है। पुरा काल में यह पूरा प्रदेश 'आनर्त देश' भी कहा जाता था। सौराष्ट्र तो शूर, संत और सती की भूमि है। एक प्रसिद्ध लोकोक्ति में यहाँ के पंचरत्नों की महिमा इस प्रकार बताई गई है—

सुपरिचित लेखक-संपादक। बुलंदशहर (उ.प्र.) के मीरपुर-जरारा गाँव में जन्म। देसी चिकित्सा लेखन में विशेष दक्षता। 'जीवनोपयोगी जड़ी-बूटियाँ', 'स्वास्थ्य के रखवाले, शाक-सब्जी-मसाले', 'सचित्र जीवनोपयोगी पेड़-पौधे', 'घर का डॉक्टर', 'स्वस्थ कैसे रहें?' तथा 'स्वदेशी चिकित्सा सार' कृतियाँ चर्चित रहीं। इसके अलावा पत्र-पत्रिकाओं में विविध लेख प्रकाशित। श्रीनाथद्वारा (राज.) की सुप्रसिद्ध संस्था 'साहित्य मंडल' द्वारा 'संपादक-रत्न' की मानद उपाधि। संप्रति 'सवेरा न्यूज' (साप्ताहिक) का संपादन एवं आयुर्वेद पर स्वतंत्र लेखन।

सौराष्ट्र पञ्चरत्नानि—नदी, नारी, तुरङ्गमाः।
चतुर्थं सोमनाथ च पञ्चमं हरि दर्शनम्॥

सुप्रसिद्ध सोमनाथ मंदिर पवित्र प्रभास क्षेत्र में ही स्थित है। एक समुद्री बंदरगाह के रूप में प्रभास की ख्याति पूरी दुनिया में रही। इसका प्राचीन नाम 'देवपट्टन' था। दूर-दूर से आनेवाले व्यापारी प्रभास आकर सोमनाथ ज्योतिर्लिंग के दर्शन कर खूब भेंट चढ़ाया करते थे, अत: सोमनाथ मंदिर की समृद्धि अपार थी। व्यापारियों के द्वारा इसकी ख्याति भी देश-विदेश में फैल गई। प्रभास शब्द का अर्थ है, 'अति प्रकाशमान'। सूर्य-चंद्र दोनों प्रकाश के प्रमुख स्रोत हैं, जिनसे पृथ्वी पर जीवन-चक्र चलता है। अत: सोमनाथ स्वयंभू ज्योतिर्लिंग है। सूर्य के नाम पर इसे 'भास्कर-तीर्थ', 'सूर्य-तीर्थ', 'अग्नि-तीर्थ' और चंद्र के नाम पर इसे 'सोम-तीर्थ' कहा गया है। लेकिन इसका नाम 'सोमनाथ' क्यों? इसके बारे में महाभारत में एक कथा आती है कि दक्ष प्रजापति ब्रह्मा के मानस पुत्र हुए। उनकी सत्ताईस कन्याओं में से रोहिणी बड़ी सुंदर तथा बुद्धिमान थी, सब बहनों में बड़ा स्नेहभाव था। विवाह के बाद सब बिछुड़ न जाएँ, इसलिए सबने मिलकर निश्चय किया कि हम सब एक पति से विवाह करेंगी। यह निर्णय उन्होंने अपने पिता को भी बता दिया। ऋषि दंपती अत्रि व अनसूया के पुत्र सोम राजा की उस समय बड़ी ख्याति थी, उनके तीन महा तेजस्वी पुत्र थे—दत्तात्रेय, दुर्वासा और चंद्र। चंद्र (सोम) रूपवान, प्रतापी तथा बुद्धिमान थे। रोहिणी उनके प्रति आकर्षित थी। पुत्री की इच्छा जानकर दक्ष ने सभी कन्याओं का पाणिग्रहण चंद्र के साथ कर दिया। समय के साथ सोम की प्रीति रोहिणी के प्रति बढ़ती गई। दूसरी सब कन्याएँ इससे दुखी होकर पिता के पास गईं तथा अपनी पीड़ा एवं चंद्र के पक्षपात के बारे में बताया। दक्ष ने सोम (चंद्र) को बुलाकर समझाया, लेकिन सोम के व्यवहार में कोई बदलाव नहीं आया। एक पिता के नाते अपनी पुत्रियों की पीड़ा तथा सोम की उद्दंडता पर दक्ष को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने शाप दिया, 'सोम, तेरा क्षय होगा।' आज्ञा

पाकर क्षय चंद्र के शरीर में घुस गया। क्षयग्रस्त होने पर सोम का रूप-सुंदरता तथा तेज प्रतिदिन क्षीण होने लगा। बहुत इलाज के बाद भी कोई लाभ न हुआ। इससे प्रभावित सृष्टि की दारुण दशा देखकर देवता भी चिंतित हो गए। तब देवताओं की उपस्थिति में चंद्र ने दक्ष के सामने पश्चात्ताप किया। लेकिन दक्ष बोले, 'मेरे शाप को महेश्वर के अलावा कोई भी मिटा नहीं सकता। अत: सरस्वती के उत्तरतीर्थ में स्नान कर महेश्वर की तपस्या करो तो कोई बात बने।' चंद्र ने शिवलिंग बनाकर एक सहस्र वर्ष तक शिव की आराधना की। शिव ने प्रसन्न होकर कहा, 'दक्ष की सब कन्याओं के साथ समान व्यवहार करना, मैं दक्ष के शाप को पूरी तरह मिटा तो नहीं सकता। हाँ, इतना अवश्य है कि तुम्हारा तेज पूर्ववत् हो जाएगा, पर मास के एक पक्ष में वृद्धि तथा दूसरे पक्ष में क्षय होता जाएगा।'

इस शाप से मुक्ति के बाद सोम ने महेश्वर से विनती की कि मैंने जिस शिवलिंग की पूजा की है, इसमें आप हमेशा के लिए निवास करें। भोलेशंकर ने सोम की विनती स्वीकार कर ली, तब से भोलेनाथ यहाँ शिवलिंग रूप में विराजमान हैं, उसी समय से यह तीर्थ 'सोम' के नाथ यानी 'सोमनाथ' ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रसिद्ध हो गया। चूँकि चंद्र (सोम) को यहाँ पुन: प्रभा (तेज) प्राप्त हुई, सो उसी दिन से इस क्षेत्र का नाम भी 'प्रभास क्षेत्र' हुआ। इससे इतर खगोलीय दृष्टि से चंद्र और उसके २७ नक्षत्रों की बात इस कथा को सार्थक बनाती है कि अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा प्रभास क्षेत्र में सूर्य तथा चंद्र की किरणें कुछ ज्यादा प्रकाशमान होती हैं, इससे इसका 'प्रभास' नाम सार्थक है।

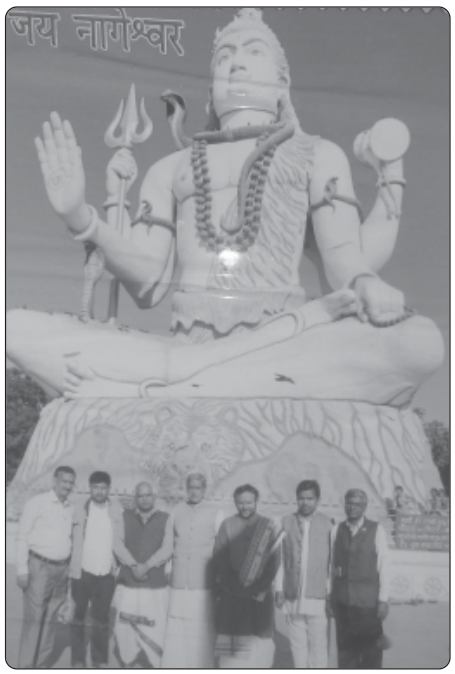

नागेश्वर ज्योतिर्लिंग (दारुका वन) पर हमारा यात्री-दल

चंद्र द्वारा निर्मित इस भव्य मंदिर का वैभव तथा संपन्नता इसके लिए अभिशाप बन गई। आक्रांता मोहम्मद गजनवी ने सन् १००० से १०२६ के बीच भारत पर सोलह बार आक्रमण किए। अंतिम आक्रमण में उसने सोमनाथ मंदिर को निशाना बनाया और इसे लूटकर खंडित कर दिया। इस युद्ध में सौराष्ट्र के सहस्र वीरों ने प्राणाहुति दी, पर वे मंदिर को बचा न सके। लगभग दस करोड़ दीनार की संपत्ति उसने सोमनाथ मंदिर से लूटी, शिवलिंग को खंडित कर मंदिर को आग के हवाले कर दिया। इसी से उसे संतोष न हुआ, उसने पूरे प्रभास क्षेत्र को लूटा। कुछ काल पश्चात् मालवा के राजा भोज परमार, पाटण के भीमदेव सोलंकी और सोरठ के नरेश रानवघण के सहयोग से मंदिर का पुनर्निर्माण हुआ। अब सोमनाथ मंदिर का यश-वैभव पहले से भी ज्यादा हो गया था। दिल्ली के क्रूर शासक अलाउद्दीन खिलजी की वक्रदृष्टि इस ओर हुई, उसके साले अलफखान ने गाजी सेना लेकर सोमनाथ को लूटा, मंदिर का विध्वंश कर डाला तथा शिवलिंग खंड-खंड कर दिया। हालाँकि गुजरात के हिंदू राजा वीरतापूर्वक लड़े। विजय उन्माद में गाजी सेना ने गाँव-के-गाँव जला डाले। १३०८ ई. में रानवघणा (चतुर्थ) के नेतृत्व में सोमनाथ मंदिर की पुन: स्थापना हुई। महमूद तुगलक ने फिर इसे लूटा। इस तरह कई बार मंदिर का विनाश हुआ और हर बार मंदिर का निर्माण होता रहा।

अठारहवीं सदी में रानी अहल्याबाई के द्वारा छठी बार सोमनाथ मंदिर का भाग्योदय हुआ। सोमनाथ मंदिर के अवशेषों से कुछ दूर रानी ने दो मंजिला मंदिर का निर्माण कराकर भूगर्भ में शिवलिंग की स्थापना करा दी, ताकि यह आततायियों के आक्रमण से बचा रहे। ऊपर के तल पर अहल्येश्वर महादेव की प्राण-प्रतिष्ठा हुई। यह मंदिर आज भी तीर्थयात्रियों के आकर्षण का केंद्र है; यहाँ तीर्थयात्री अपने हाथ से जलाभिषेक कर सकते हैं। सन् १९४७ में भारत आजाद हुआ, तब भारत के लोकप्रिय नेता लौहपुरुष वल्लभ भाई पटेल ने इसकी दुर्दशा को देखा तो १३ नवंबर, १९४७, दीपावली के दिन वहीं पर समुद्र जल को हाथ में लेकर सातवें सोमनाथ मंदिर के निर्माण का संकल्प लिया। उनके निर्देश तथा मुरारजीभाई के नेतृत्व में सोमनाथ ट्रस्ट की स्थापना हुई और विधि-विधान से इसका शिलान्यास हुआ। १३ मई, १९५१ को नव-निर्मित गर्भगृह में ज्योतिर्लिंग की प्राण-प्रतिष्ठा भारत के राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र बाबू के कर-कमलों से संपन्न हुई। इस अवसर पर २२ तोपों की सलामी के साथ मंदिर के शिखर पर ध्वजारोहण हुआ। इसके सामने सरदार पटेल की आदमकद प्रतिमा स्थापित की गई। १ दिसंबर, १९९५ को राष्ट्रपति डॉ. शंकर दयाल शर्मा द्वारा यह मंदिर राष्ट्र को समर्पित किया गया।

सब लोग लगभग शौचादि से निवृत्त हो चुके हैं, सो चाय पीकर यहाँ से एक-डेढ़ कि.मी. दूर स्थित हिरण, कपिला और सरस्वती नदी के संगम पर स्नान के लिए पैदल ही चल पड़े। हरिहर वन मार्ग से चलते हुए संगम आ पहुँचे हैं। यहाँ पक्के घाट बने हैं। पानी खूब ठंडा, लेकिन मीठा है। बड़े भक्तिभाव से स्नान किया। सूर्योदय हो रहा है, बालरवि को संगम-जल से अर्घ्य दिया। पौराणिक काल से ही इस त्रिवेणी संगम का बड़ा महत्त्व रहा है। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार तो यहाँ पाँच नदियों का संगम होता था, समयांतर में उनमें से 'रजनी' तथा 'नेन्कु' नदियाँ लुप्त हो गईं, सो वर्तमान में हिरण, कपिला तथा सरस्वती का ही संगम है। अरब सागर का जल इस पवित्र जल से मिल जाने के कारण यह और भी महिमापूर्ण तीर्थ बन गया। इस संगम पर मातृ-पितृ श्राद्ध, सर्वपितृ श्राद्ध, नारायण बलि आदि विधियाँ संपन्न होती हैं। अस्थि-विसर्जन के लिए बड़ी संख्या में लोग यहाँ आते हैं। श्राद्ध पक्ष में तो यहाँ भारी भीड़ होती है। पूजाविधि के लिए पंडा-तीर्थ पुरोहित भी यहाँ उपलब्ध हैं। यहीं पर पूर्व प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई की अस्थियाँ विसर्जित की गई थीं। यहाँ घाट पर उनकी प्रतिमा भी स्थापित है। यह संगम भी स्नानार्थियों की बुरी आदत का शिकार है। स्नान के बाद लोग अपने गीले

कपड़े यहीं छोड़ जाते हैं।

दिनभर घूमने के लिए सवेरे ही एक गाड़ी कर ली गई थी, सो यहाँ से जल्दी लौटकर सब लोग सोमनाथ ज्योतिर्लिंग के दर्शन के लिए चल पड़े। मंदिर के सामने लंबा-चौड़ा विशाल पक्का मैदान जालीदार रेलिंग से घेर दिया गया है। यहाँ कोई शॉर्टकट नहीं है, हजारों की संख्या में कबूतर दाना चुग रहे हैं, तीर्थयात्री इनके लिए बाजरा आदि डाल रहे हैं। अनेक शौकीन यात्री इनके साथ फोटो भी खींच रहे हैं। जूता-चप्पल रखने के लिए निशुल्क व्यवस्था है, फिर भी तीर्थयात्री यत्र-तत्र जूते-चप्पल छोड़ जाते हैं। सोमनाथ का विशाल भवन स्वर्णाभा से देदीप्यमान हो रहा है। दर्शनार्थी कतारबद्ध अंदर जा रहे हैं, प्रवेश-द्वार पर जाँच-पड़ताल की जा रही है। चमड़े की कोई भी चीज तथा मोबाइल अंदर नहीं जा सकता। भगवान् महेश्वर के जलाभिषेक के लिए परची ले ली गई है, इसके साथ प्रसाद के दो लड्डू भी हैं। परची दिखाकर आगे एक लोटा जल मिलेगा। पंक्ति आगे खिसक रही है। सामने लिंगरूप भोलेनाथ विराजमान हैं, साज-सज्जा इतनी मोहक है कि मैं तो अपलक निहारता रह जाता हूँ। मेरी बारी आने पर पुजारीजी ने जल का लौटा मुझे थमाया। मेरे ठीक सामने घड़े के मुँह जितना छेद है, मैं श्रद्धाभाव से 'ॐ नमः शिवाय' का जप करते हुए उसमें जल गिराता हूँ, ठीक सामने कुछ दूर शिवलिंग पर जल की धार गिर रही है। कमाल की व्यवस्था है, आप जलाभिषेक करते-करते जलाभिषेक होते हुए भी देख सकते हैं। भोलेशंकर की अलौकिक आभा यहाँ चहुँ ओर व्याप्त है। अजब लीला है भोलेभंडारी! सब लोग इसी तरह जलाभिषेक करते हैं, मैं पंक्ति से बाहर आकर बाईं ओर बैठ दंडवत् प्रणाम करता हूँ, नमन करता है—करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारं, सदा बसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानि सहितं नमामि। मंदिर में स्थित विभिन्न देव-मूर्तियों को प्रणाम किया, दाईं ओर स्थित दीया सोमनाथ, यानी अखंड ज्योति को प्रणाम कर मंदिर की एक प्रदक्षिणा की।

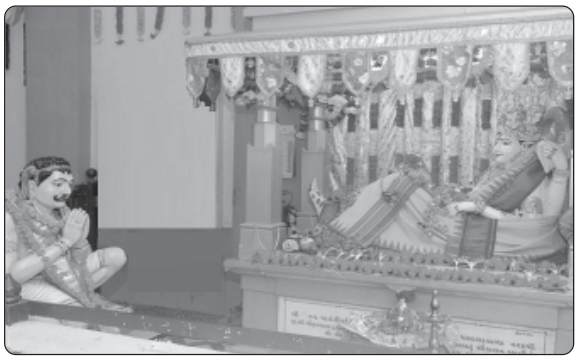

इस सोमनाथ मंदिर की विशेषता यह भी है कि विगत आठ सौ वर्षों में मंदिर-स्थापत्य की नागर थैली में बना यह देश का पहला मंदिर है। इस सात मंजिला मंदिर में शिखर सहित गर्भगृह, सभामंडप तथा नृत्यमंडप बने हैं। भूतल से शिखर की ऊँचाई १५५ फीट है। शिखर पर ध्वजा तथा डमरूयुक्त ध्वजदंड ही ३७ फीट लंबा है, जिसकी परिधि एक फुट की है। ध्वजा १०४ फुट लंबी है। गर्भगृह तथा उसके ऊपर की मंजिल शामिल करें तो यह भव्य मंदिर नौ मंजिला है। शिखर पर जो कलश दिखाई पड़ रहा है, वह पत्थर को तराशकर बनाया गया है और इसका वजन दस टन है। सभागृह तथा नृत्यमंडप तीन-तीन मंजिल के हैं। इनके गुम्मद पर पत्थर के १००१ छोटे-छोटे कलश तराशे गए हैं। पूरा मंदिर नक्काशीदार सुंदर मजबूत ७२ स्तंभों पर टिका है, जिनकी नींव जमीन में तीस फुट नीचे रखी गई है। सायं को यहाँ लाइट ऐंड साउंड शो होता है, जिसे हम आज सायं को देखनेवाले हैं। मंदिर के ठीक सामने दिग्विजय-द्वार भी कम दर्शनीय नहीं है, इसका निर्माण राजमाता गुलाब कुँवर बा द्वारा अपने पति निजाम साहब की याद में कराया गया, इसका अनावरण सत्य साईं बाबा ने किया था। मंदिर के तीन ओर रत्नाकर हहराता है, किंतु शांत-मौन। पुनः-पुनः दंडवत् प्रणाम कर मंदिर से बाहर निकल सरदार पटेल की प्रतिमा को भी प्रणाम किया। इसके ठीक सामने स्थित अहल्येश्वर महादेव मंदिर में भी दर्शन कर आए। अब हम अपने वाहन में बैठ तीर्थों के दर्शन के लिए निकल पड़े।

हरिहर वन मार्ग पर लगभग एक डेढ़ कि.मी. दूर तथा संगम से थोड़ा आगे बाईं ओर कामनाथ महादेव, नृसिंह भगवान्, पांडवों की गुफा, जहाँ माता हिंगलाज विराजमान हैं, कहा जाता है कि यहाँ पर भी पांडवों ने अज्ञातवास किया था, के साथ-साथ सिद्धनाथ महादेव के दर्शन किए। यहाँ से दो कि.मी. आगे चलकर 'श्रीगोलोकधाम तीर्थ' है, इसे 'देहोत्सर्ग तीर्थ' भी कहते हैं। यह विशाल प्रांगण में विस्तृत है। यहीं पर भगवान् श्रीकृष्ण ने योग समाधि लेकर इस धरती पर से अपनी लीला का समापन कर गोलोकधाम को प्रस्थान किया था। उनके पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार यहीं हिरण नदी के तट पर किया गया था। यहाँ नदी के घाट पर भगवान् के चरण-चिह्न स्थापित हैं। यहीं पर शेषावतार बलदाऊ की गुफा है, जहाँ से उन्होंने अपना मूल शेषनाग स्वरूप धारण कर निजधाम को प्रस्थान किया था। यहाँ थोड़ा नीचे उतरना पड़ता है, लेकिन दर्शन भली प्रकार होते हैं। यहाँ महाप्रभु की बैठक भी है।

श्रीभालका तीर्थ (सोमनाथ-पाटण के बीच)

यहाँ के सब पवित्र स्थलों के भली प्रकार दर्शन कर बाहर निकले कि मुख्यद्वार के ठीक सामने एक शबरी माँ मोटे-मोटे बेरों की टोकरी लिये बैठी है। बेर खरीद लिये गए। बेर खाते हुए आगे बढ़े तो 'श्रीभालका तीर्थ' में आ पहुँचे। यह वेरावल और सोमनाथ पाटण के बीच स्थित है। गांधारी के शापवश और श्रीकृष्ण की इच्छा से जब यादव मदिरा पी उन्मत्त हो एक-दूसरे को मारने लगे तो देखते-ही-देखते यादव कुल नष्ट हो गया। इस विनाश के बाद श्रीकृष्ण यहाँ विश्रांति के लिए पीपल वृक्ष के नीचे उसका सहारा लेकर घुटने पर पैर रखकर लेट गए। उसी समय जरा नाम के शिकारी ने उनके चरण-कमल को हिरण समझकर बाण चला दिया, जो उनके दाहिने पैर के तलवे में लगा और उनकी अंतिम लीला का कारण बना। जब व्याध अपने शिकार के पास पहुँचा तो मृग की जगह यादव पीतांबरधारी पुरुषोत्तम को देखकर भयभीत हो अपने अपराध के लिए क्षमा माँगने लगा। तब भगवान् श्रीकृष्ण ने उसे समझाया, 'तू दुःखी न हो, जो कुछ हुआ है, वह मेरी इच्छा से ही हुआ है।' व्याध को क्षमा कर उन्होंने निजधाम को प्रस्थान किया। यहाँ व्याध ने भल्ल (बाण)

मारा था, इसलिए यह स्थान भल्ल या 'भालका तीर्थ' कहलाता है। हमने देखा, भगवान् कृष्ण विश्राम मुद्रा में लेटे हुए हैं तथा दाहिने पैर में बाण लगा है, सामने विनयावनत एवं दुखी शिकारी बैठा है। यह प्रतिमा अत्यंत सुंदर है, मैं इसे अपलक निहारता रह जाता हूँ। इस मूर्ति की प्राणप्रतिष्ठा १९ मई, १९६७ में तत्कालीन उप-प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई के द्वारा हुई। हम देख रहे हैं कि यहाँ श्रीकृष्ण मंदिर निर्माण का कार्य युद्ध स्तर पर चल रहा है। पीपल का वह पुराण-वृक्ष आज भी हरा-भरा है। इसे ५५०० वर्ष पुराना यानी कृष्ण-काल का बताया जाता है। यहाँ पर ट्रस्ट द्वारा भालका कुंड का निर्माण भी कराया जा रहा है। इसके बाईं ओर प्रकटेश्वर महादेव मंदिर स्थित है।

यहाँ भली प्रकार दर्शन कर हमारा काफिला आगे बढ़ा। रास्ते में ही भीरभंजन महादेव तथा उस स्थान पर स्थित शिवलिंग के दर्शन किए, जहाँ से व्याध ने बाण चलाया था। यहाँ तीन शिवलिंग बिल्कुल समुद्र के अंदर हैं। सिंधुजल की जलतरंगें बराबर इनका अभिषेक करती रहती हैं। यहाँ से लौटकर अब हमारा वाहन सोमनाथ-दीव राजमार्ग पर दौड़ रहा है। लगभग दोपहर हो चला है, भूख भी लग रही है, सो सड़क के दाईं ओर स्थित जलराम गेस्ट हाऊस ढाबे पर खाना खाया—दाल-रोटी। खाना एकदम स्वादु है। खाने से निबटकर अब हम दीव की ओर बढ़े। यहाँ सड़क के दोनों ओर गहन खेती हो रही है। अचंभित-विस्मित मैं रबी और खरीफ की फसल एक साथ फलते-फूलते हुए देख रहा हूँ। गेहूँ और बाजरा की बालियाँ साथ-साथ लहरा रही हैं। गन्ना, नारियल, ज्वार के खेत हैं तो धनिया के बड़े-बड़े खेत भी दिखाई पड़ रहे हैं। यहाँ उत्तर भारत की अपेक्षा गेहूँ की फसल जल्दी तैयार हो जाती है। कृषि की दृष्टि से यह बड़ा संपन्न इलाका है। बाहर प्रकृति की सुंदरता तथा चहुँ ओर बिखरा वैभव देखकर मेरा मन रोमांचित है, पर गाड़ी के अंदर राजनीतिक बहस छिड़ी हुई है। नवीनभाई बड़े प्रफुल्लित हैं। फोन पर जुटे हैं, संभवत: उनके विवाह के संबंध में बात हो रही है। हम लोग दीव आ पहुँचे। यहाँ क्रमश: किला, निर्मल माता चर्च, दीव म्यूजियम, पाँच पांडवों द्वारा स्थापित पाँच शिवलिंग, गंगेश्वरी मंदिर, पारसी बँगली आदि देखे, फिर नागवा बीच पर आनंदजी और जीतभाई ने स्नान किया। इसी बीच पर सब लोगों ने चाय का आनंद लिया। छह बजे ड्राइवर को छोड़ना था, सो यहाँ से तुरंत वापस लौट पड़े। रास्ते में एक जगह गुड़ की महक आ रही थी; देखते हैं कि दाहिनी ओर क्रेशर चल रहा है, गुड़ बन रहा है। ड्राइवर को भेजकर गुड़ मँगवाया। यहाँ का गुड़ हमारे यहाँ की तरह सूखकर सख्त नहीं होता, मुलायम ही रहता है, इसलिए डिब्बों में मिलता है, पर गुड़ बड़ा स्वादिष्ट है। सब लोगों ने गुड़ खाया। बड़ा मजा आया।

करीब सायं सवा सात बजे हम वापस सोमनाथ मंदिर परिसर में आ पहुँचे और तुरत-फुरत टिकट लेकर सुविधाजनक स्थान पर बैठ गए। मंदिर के खुले प्रांगण के एक कोने में स्टेडियम जैसा बना है और ठीक पीछे रत्नाकर रात-दिन भगवान् भोलेनाथ की अभ्यर्थना करता रहता है। शो शुरू हुआ। समुद्रदेव ने गुरुगंभीर मगर करुण आवाज में मंदिर पर पड़नेवाली लाइट की दृश्यावलियों के माध्यम से आद्योपांत मंदिर के उत्थान-पतन तथा पुनर्निर्माण की गाथा को बड़े ही सुंदर ढंग से पेश किया। पचपन मिनट के इस शो को दर्शकों ने साँसें रोककर सुना। यह अपने आप में बहुत रोचक और जिज्ञासा पैदा करनेवाला शो है, यहाँ जानेवाले तीर्थयात्रियों को इसे अवश्य देखना चाहिए। मंदिर के बाईं ओर सारे ज्योतिर्लिंग प्रदर्शित किए गए हैं। रंग-बिरंगी रोशनी में रात्रि को इनकी शोभा देखते ही बनती है। शो देखने के बाद अपनी समृद्ध आध्यात्मिक-सांस्कृतिक विरासत पर कैसा गर्व और रोमांच हो आया, उसे शब्दों में कैसे व्यक्त करूँ!

रात्रि साढ़े नौ बजे तक कमरे पर लौट आए। फिर सब भोजन करने निकले। एक दुकानदार ने बताया कि केशुभाई पटेल द्वारा अपनी पत्नी की याद में स्थापित ट्रस्ट में भोजन अच्छा मिलता है। वास्तव में वहाँ भोजन बढ़िया था, साठ रुपए थाली, यानी भरपेट भोजन। कमरे पर लौटकर सोने का उपक्रम करने लगे। चौधरी वीरेंद्र सिंह, जीत शर्मा तथा मैं एक कमरे में सोए, बाकी सब दूसरे कमरे में। दिनभर के थके-माँदे थे, सो बड़ी मीठी नींद आई। प्रात: शौचादि से निवृत्त हो स्नान किया। नवीन भाई आज सबसे पहले तैयार हुए, वैसे उनकी तैयारी सबसे बाद तक चलती है। उनके साथ आनंदजी तथा अन्य लोगों ने अहल्येश्वर महादेव का दुग्धाभिषेक किया। आचार्य की पोशाक में होने के कारण तीर्थ पुरोहित जल्दी ही उनसे प्रभावित हो जाते हैं। मैं और जीतभाई स्नान कर एक बार पुन: सोमनाथ ज्योतिर्लिंग के दर्शन करने गए, वापसी में प्रसाद भी लिया। फिर हम दोनों भी अहल्येश्वर महादेव मंदिर में दूध से शिवलिंग का अभिषेक करने के लिए पंक्तिबद्ध हो गए। आज भीड़ ज्यादा है। जीतभाई आगे हैं, उन्होंने लंबा हाथ कर दुग्धाभिषेक किया। मेरे आगे एक महिला दुग्धस्नान करा रही है, पुजारियों द्वारा जोर-जोर से मंत्रोच्चार हो रहा है। महिला आगे नहीं खिसक नहीं है। 'बड़ी भीड़ है, मैं···अभिषेक नहीं कर पाऊँगा?' मैं आगे की ओर झुका हुआ पूरी कोशिश करता हुआ इन्हीं विचारों में खोया था। दुग्ध की थैली मैंने दाँत से फाड़ भी ली थी कि अचानक वह महिला थोड़ा आगे बढ़ी, कि कोई सपोर्ट न होने के कारण मैं धड़ाम से शिवलिंग पर गिरा, शिवलिंग का पूरा-का-पूरा आलिंगन हो गया। इस अचानक घटना से पुजारी भी दो कदम पीछे हट गए। मैं भी सकपकाकर उठ बैठा। सब बोले, चोट तो नहीं लगी। जीतभाई आगे निकल आए थे। मैंने उन्हें बताया कि भाई, गजब हो गया, दूध क्या, मैं तो पूरा ही शिवलिंग पर चढ़ गया—कहाँ तो स्पर्श करने का मौका भी नहीं मिल पा रहा था! तो ऐसी लीला है भोलेशंकर की! घट-घटवासी भोलेबाबा बड़े दयालु हैं, सबकी सुनते हैं, औघड़दानी जो ठहरे!

आज प्रात: ९:४० पर हमें जूनागढ़ के लिए गाड़ी पकड़नी है, सो अपना सामान बाँध नौ बजे ऑटो पकड़ स्टेशन के लिए निकल पड़े। स्टेशन पर टिकट खिड़की खाली थी, सो टिकट लेकर सोमनाथ-जबलपुर एक्सप्रेस में बैठ गए। जब तक गाड़ी जूनागढ़ पहुँचे, हम आपको वहाँ के माहात्म्य के बारे में बताए देते हैं। जूनागढ़ का पुराना नाम 'सोरठ प्रदेश' है। यह गिरिनार तथा दातार की तराई में फैला है। युगों से यह साधु-संतों तथा तीर्थयात्रियों का प्रिय स्थल रहा है। 'स्कंद पुराण' में भी गिरनार का

उल्लेख आया है। भगवान् कृष्ण को एक नाम 'रणछोड़' यहीं पर मिला। कान्हा के बड़े भ्राता बलदाऊ की यह ससुराल है। भगवान् कृष्ण के महान् भक्त नृसिंह महेता का जन्मस्थान भी है। सिंहों के लिए प्रसिद्ध गिरिवन यहीं पर है। जूनागढ़ सिद्ध क्षेत्र है। इसके बारे में एक कहावत प्रचलित है—

सोरठ देश सुहावनो सुंदर गढ़ गिरनार।
वीर, शेर, पर्वत, गुफा योगी तपे निहार॥

दो घंटे की यात्रा में ही हम जूनागढ़ आ पहुँचे। स्टेशन पर लॉकर में सामान रख दिया गया, चूँकि दिनभर घूम-फिरकर शाम को गाड़ी पकड़नी है तो सबसे पहले अहमदाबाद जाने के लिए रात्रि ८:४५ बजे का आरक्षण कराया, फिर स्टेशन के बाहर आकर चाय-नाश्ता किया। यहीं से शाम तक के लिए एक बड़ा ऑटो कर लिया गया। रेलवे स्टेशन के ठीक सामने वास्तु-शिल्प का बेजोड़ नमूना 'सरदार पटेल द्वार' सीना ताने खड़ा है। जूनागढ़ का सक्कारबाग चिड़ियाघर देखते हुए हम उस पावन स्थल पर आ पहुँचे हैं, जहाँ कृष्णभक्तों के सिरमौर नृसिंह महेता का जन्म हुआ, यानी 'नृरसिंह महेता चौरा'। नरसी अकेले ऐसे भक्त हैं, जिन्हें भगवान् कृष्ण ने बावन बार दर्शन दिए, उनकी मुसीबत में संकटमोचक बने। यह स्थान बस्ती के अंदर जगमाल चौराहे के पास है। प्रवेश-द्वार के बाईं ओर नरसीजी का पुराना निवास-स्थान है। इसमें भक्तराज नरसी तथा भगवान् दामोदर की मूर्तियाँ विराजमान हैं। दोपहर में यह मंदिर बंद मिला, पर मंदिर के चबूतरे पर हमारी हलचल सुनकर पुजारीजी आ गए, उन्होंने अंदर से ही हमें विस्तार से नरसी की कथा तथा इस स्थान का माहात्म्य बतलाया। उन्होंने ही नरसीजी के मूलचित्र का फोटो खींचकर दिया तथा भोग लगा प्रसाद भी। पुजारीजी इस बात से बड़े दु:खी थे कि भक्तजन भी यहाँ बहुत कम आते हैं। यहाँ हम काफी देर रुके। सच में, यहाँ बैठकर बड़ा सुकून मिला। यह सुनकर ही मन में रोमांच हो आया कि भगवान् कृष्ण बावन बार इस पवित्र स्थल पर नाना रूप धर अपने भक्त नरसी के काम संपन्न करने आए। कितना पावन और अद्‌भुत है यह स्थान! इसके बाईं ओर वह स्थान है, जहाँ नरसीजी अपने कीर्तनियों के साथ हरि-कीर्तन करते हुए सबकुछ भूल जाते थे। यहाँ आजकल निर्माण कार्य चल रहा है। नरसी-निवास के ऊपर नरसीजी का जीवन-चरित्र चित्रों तथा रेखांकनों के द्वारा दरशाया गया है। श्रीनृसिंह महेता चौरा टस्ट इसकी देखरेख कर रहा है। यहाँ पर दर्शन कर मन गद्‌गद हो गया।

बड़े हर्षित मन से हम यहाँ से निकले और चलकर सीधे दामोदर तीर्थ पर आ पहुँचे। रवि चाचा को दस्त की शिकायत हो गई है, सो वे ऑटोवाले को लेकर दवाई लेने चले गए। यहाँ स्थित दामोदर कुंड में नरसीजी नित्य स्नान करने आया करते थे। इस पावन तीर्थ के बारे में एक कथा आती है कि एक बार ब्रह्माजी को यज्ञ करने की इच्छा हुई, सो उन्होंने इस रेवताचल क्षेत्र में यज्ञ करने के लिए ऋषि-मुनि तथा देवताओं को आमंत्रित किया। सब लोग आए भी, तो सायंकाल में उन सबने अपने-अपने तीर्थ में स्नान करने की इच्छा व्यक्त की। उसी समय ब्रह्माजी ने सब नद-तीर्थों का आह्वान किया। उनके पुकारते ही सब तीर्थदेव उपस्थित हो गए तो ब्रह्माजी ने अपने कमंडलु से गंगाजी को भी प्रकट किया। इस तरह उस दिन इस यज्ञ-स्थल पर गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, कावेरी, क्षिप्रा, चर्मवती, गंडकी, तापी, सरयू, गोदावरी इत्यादि पवित्र तीर्थ तथा ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इंद्र आदि सब देव इस पवित्र क्षेत्र में वास करने लगे। यह देखकर सभी ऋषि-मुनि बड़े प्रसन्न हुए। ब्रह्माजी का वह यज्ञ पूरे विधि-विधान से संपन्न हुआ। यज्ञ समाप्ति पर सब देवता अपने-अपने धाम को लौटने लगे, उसी समय ब्रह्माजी ने भगवान् विष्णु से हमेशा के लिए इस तीर्थ में बस जाने की विनती की। दयालु प्रभु मान गए, अत: तभी से विष्णुजी यहाँ 'भगवान दामोदर' के रूप में विराजमान हैं। उन्हीं के नाम पर इस तीर्थ का नाम 'दामोदर तीर्थ' पड़ा। इसी को 'ब्रह्मकुंड' या 'ब्रह्मतीर्थ' भी कहा जाता है। इस कुंड के किनारे पर ही प्राचीन राधादामोदर मंदिर स्थित है। प्रारंभ में इसका निर्माण भगवान् कृष्ण के वंशज वज्रनाभ ने कराया था, बाद में यानी ४६२ ई. में इसका जीर्णोद्धार राजा स्कंदगुप्त द्वारा कराया गया। हम यहाँ दोपहर में पहुँचे हैं, तो चौरासी खंभोंवाला यह मंदिर बंद है, सायं चार बजे खुलेगा। इसके चौरासी खंभे चौरासी योनियों को इंगित करते हैं। यहाँ दामोदर भगवान् के साथ राधाजी, प्रद्युम्न (श्रीकृष्ण के पुत्र), लक्ष्मीजी, इसी परिसर में बलदाऊ, रेवती, यानी एक स्थान पर दुर्लभ सात स्वरूपों के दर्शन होना बड़े सौभाग्य की बात है।

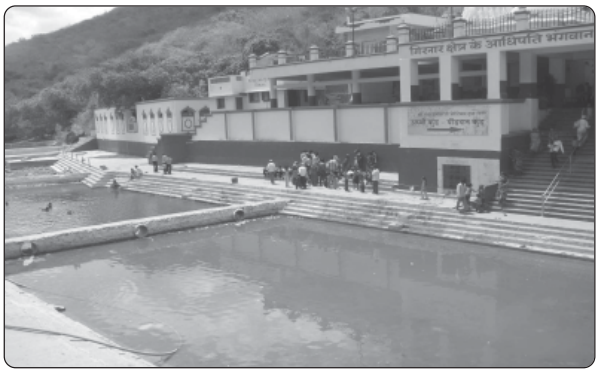

दामोदर तीर्थ (ब्रह्मकुंड), गिरनार (जूनागढ़)

यह ब्रह्मकुंड इतना ख्यातिप्राप्त तथा चमत्कारी है कि दूर-दूर से लोग यहाँ पिंडदान तथा अस्थियाँ विसर्जित करने आते हैं। इस जल की विशेषता है कि इसमें अस्थियाँ पूरी तरह गल जाती हैं, जबकि गंगाजी में अस्थियाँ काई रूप हो जाती हैं। इस बात से इस तीर्थ का महत्त्व और बढ़ जाता है कि भगवान् कृष्ण ने अंतिम बार दर्शन देते हुए अपने भक्त नरसी को यहाँ माला पहनाई थी। आजकल इस कुंड के जीर्णोद्धार का कार्य प्रगति पर है। हमने सीढ़ियों से नीचे उतरकर पतली सी धार से जल लेकर शिरोधार्य किया। इस मंदिर में एक महिला सेवादार ने बड़े अपनेपन से हमें यहाँ की बहुत सी जानकारी दी। बातों से पता चला कि वे एक डॉक्टर की अच्छी-भली नौकरी छोड़कर भगवान् की सेवा कर रही हैं। यहीं पर महाप्रभु की बैठक भी है। दामोदर कुंड के पीछे, यानी ऊपर की ओर रेवतीकुंड है। यहीं के रेवतक महाराज की पुत्री रेवती से श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलदाऊ का विवाह हुआ था, अत: यह दाऊ का ससुराल भी है। जब बलराम अपनी पत्नी रेवती के साथ गिरनार यात्रा पर आए थे, तब गर्ग ऋषि के कहने पर रेवतीकुंड का जीर्णोद्धार रेवती के हाथों करवाया

और यहाँ सत्ताईस नक्षत्रों की स्थापना की, तब से यह कुंड बड़ा प्रसिद्ध है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ इसमें श्रद्धापूर्वक स्नान करती हैं और बैकुंठ की अधिकारी बनती हैं। इसी के ठीक सामने मुचुकुंदेश्वर महादेव मंदिर तथा मुचुकुंद गुफा है। भगवान् श्रीकृष्ण ने कालयवन को यहाँ लाकर गुफा में सोए राजा मुचुकुंद के द्वारा भस्म करवाया था। जिस राक्षस के कारण उन्हें मथुरा से रण (युद्ध स्थल) छोड़कर भागना पड़ा, इससे उनका एक नाम 'रणछोड़' ही पड़ गया। गुजरात में वे इस नाम से ज्यादा जाने जाते हैं। इस घटना के बाद श्रीकृष्ण ने यहाँ महादेव की स्थापना की, जिससे यह 'मुचुकुंदेश्वर महादेव' के नाम से प्रसिद्ध हो गया। हम सब लोग एक-एक कर गुफा में घुसे और फिर उल्टे होकर बाहर निकले। यहाँ पुजारी वृद्धा माँ ने हमें प्यार से बैठाकर राजस्थानी-गुजराती मृदु भाषा में बड़े भाव-विभोर होकर राजा मुचुकुंद की कथा सुनाई, फिर प्रसाद दिया। हम सबने उनके चरण-स्पर्श कर आशीर्वाद लिया। हम लोग यहाँ पर काफी देर रुके, फिर आगे चल पड़े।

अब हमारा ऑटो सीधे गिरनार पर्वत की तलहटी में आ पहुँचा है। इस पर्वत पर चढ़ने के लिए ९९९९ सीढ़ियाँ हैं। इसके आने-जाने में पाँच घंटे से कम नहीं लगते हैं। हमारे पाँच साथी १०१ सीढ़ियाँ चढ़े, पर मैं और जीतभाई काफी आगे तक गए। पहाड़ पर पेड़-पौधे भरपूर हैं। खूब अच्छी-खासी गरमी पड़ रही है। १५१ सीढ़ियाँ चढ़कर हम लोग भी यहाँ एक टैंटनुमा दुकान पर बैठ गए। यहाँ पर जोड़ों के दर्द का शर्तिया तेल बेचा जा रहा है। जीतभाई ने दोनों घुटनों पर तेल मलवाया और फिर सौ रुपए में तेल की एक शीशी खरीद ली। ऊपर से नीचे तक यहाँ तमाम दुकानदार अपनी दुकानें सजाए बैठे हैं। गिरनार पर्वत पर अंबा माता, दत्तात्रेय भगवान्, दिगंबर जैन आदि अनेकों मंदिर हैं।

यहाँ से निकल अब हमारा ऑटो भवनाथ महादेव मंदिर पर आ पहुँचा है। यह बड़ा ही भव्य मंदिर है, मंदिर के स्तंभों को चाँदी से मढ़ने का कार्य चल रहा है। हम सबने भगवान् महेश्वर को दंडवत् प्रणाम किया। इसके बाईं ओर मृगीकुंड है। कहा जाता है कि इसकी स्थापना भोज राजा ने कराई थी। शिवरात्रि पर यहाँ भारी मेला लगता है। यहाँ पर नागा साधु ही ज्यादा आते हैं। रात्रि में इन नागा संतों का जुलूस निकलता है, जिसे यहाँ के लोग 'रवाड़ी निकालना' कहते हैं। रात्रि में ही मृगीकुंड में स्नान तथा महादेव की महापूजा कर सब वापस लौट जाते हैं। हमने देखा कि इस कुंड को मजबूत लोहे के जाल से ढका हुआ है, यह शिवरात्रि में ही खोला जाता है। यहाँ दर्शन कर हमने स्वामी नारायण मंदिर देखा, तत्पश्चात् जूनागढ़ संग्रहालय देखने गए, जल्दी से टिकट लेकर दो-चार कमरे ही देख पाए कि इसके बंद होने का समय हो गया। हालाँकि यह बड़ा दर्शनीय संग्रहालय है। मजबूरन यहाँ से लौटना पड़ा। ऑटो भी छोड़ना था, परंतु उसको सौ रुपए अतिरिक्त देकर शहर के बाहर और जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय के सामने स्थित भव्य स्वामी नारायण मंदिर में दर्शन किए। यहाँ की सजावट तथा भगवान् का शृंगार अद्भुत है। यह मंदिर विशाल प्रांगण में फैला है, तराशे गए सुंदर-सुंदर उद्यान हैं, यहाँ खूब फोटो खींचे गए, फिर यहीं मंदिर की दुकान से खरीदारी भी की और सीधे रेलवे स्टेशन लौट आए।

स्टेशन के बाहर आधा घंटा बैठकर खुले में विश्राम किया, फिर आठ बजे स्टेशन रोड पर स्थित 'गीता लॉज' में भोजन करने गए। इस भोजनालय में सफाई, शुद्धता तथा सेवाभाव बेमिसाल है। थाली सौ रुपए की है, इसमें तीन सब्जी, दाल, चटनी, सलाद, छाछ, रोटी (मक्का, बाजरा, गेहूँ), जो इच्छा हो, खाओ; पापड़, अचार-क्या नहीं है भोजन में। ऐसा स्वादु शुद्ध भोजन हमें पूरी यात्रा में कहीं नहीं मिला। चारों ओर भगवान् श्रीनाथजी की शीशे में जड़ी तसवीरें लगी हैं, वातावरण बड़ा सुगंधित और आभामय है। यहाँ के बैरे बड़े सेवाभावी हैं, बार-बार पूछकर, मनुहार करके खाना परोसते हैं, न कोई हड़बडी, न कोई शोर-शराबा, सब मशीन चालित से अपना-अपना काम बखूबी कर रहे हैं।

भोजन के बाद स्टेशन पर लॉकर से अपना सामान लिया। रात्रि के सवा आठ बज रहे हैं, ८:४५ पर अहमदाबाद के लिए हमारी गाड़ी है, पता चला कि सब टिकटें कन्फर्म हो गई हैं। ठीक समय पर गाड़ी प्लेटफॉर्म नंबर एक पर आ लगी और हम सब इसमें सवार हो गए। कुछ देर गपशप चली, नवीनभाई वाट्सअप पर व्यस्त हो गए हैं। रात्रि को सब लोग ठीक से सोए और प्रातः छह बजे ही गाड़ी ने हमें अहमदाबाद स्टेशन पर उतार दिया। आनंदजी और जीतभाई की नींद पूरी नहीं हो पाई, सो दोनों आकर वेटिंगरूम में फर्श पर ही सो गए। बाकी हम सब एक-एक कर शौचादि और स्नान से निवृत्त हो लिये। नवीनभाई मोबाइल चार्ज कर रहे हैं, चौधरी साहब चाय पीने निकल गए हैं। आखिर साढ़े आठ बजे जीतभाई को जगाया, वे भी नहा-धोकर तैयार हुए, बाद में आनंदजी को भी उठना पड़ा, वे भी स्नान कर तैयार हुए। सामान यहाँ के लॉकर में रखकर स्टेशन के बाहर चाय-नाश्ता किया, फिर यहीं से बस पकड़कर पहले साबरमती आश्रम देखने के लिए निकले। हमें पता नहीं था, बस ने हमें नदी के इस पार ही उतार दिया।

पैदल चलकर नदी पार की। रास्ते में पहले स्व. मुरारजी देसाई की समाधि पर प्रणाम किया, गांधी आश्रम देखा, साबरमती नदी के दर्शन किए, आश्रम के सामने स्थित खादी ग्रामोद्योग में खरीदारी की। फिर यहीं से ऑटो लेकर काँकरिया झील देखने निकल गए। चौधरी साहब और चाचाजी ने रेल की सवारी, रवि चाचा और नवीनभाई ने झील में मोटरवोट से सैर की। जीतभाई और मैंने झील का पैदल एक चक्कर लगाया। यह सब घूम-फिरकर पाँच बजे हम स्टेशन लौट आए। लॉकर से अपना सामान लेकर ठीक साढ़े छह बजे आश्रम एक्सप्रेस में सवार हुए और फिर दिल्ली की वापसी यात्रा शुरू हो गई। रुकते-चलते गाड़ी प्रातः साढ़े दस बजे पुरानी दिल्ली स्टेशन पर आ लगी। यहाँ से सब अपने-अपने घर निकल गए और मैं अपने कार्यालय। अभी कितना कुछ अनदेखा पड़ा है। सौराष्ट्र राज्य के तीर्थ बेमिसाल हैं। सच में, एक अनोखे अहसास, अद्भुत आनंद की अनुभूति हो रही है, जिसे शब्दों में व्यक्त कर पाना कठिन है।

साअ
जी-३२६ अध्यापक नगर
नांगलोई, दिल्ली-११००४१
दूरभाष : ९८६८५२५७४१

बाल-गीत

अम्माँ है पहला स्कूल

● होड़िल सिंह 'मधुर'

२ जनवरी, १९५२ में जनमे सुपरिचित लेखक एवं बाल रचनाकार। शिक्षण कार्य से सेवा-निवृत्त हो लेखन कार्य में रत। आध्यात्मिक लेखन में विशेष दक्षता।

ईश-वंदना

हम बालक छोटे नादान।
सब जग पालक आप महान॥

विनय भावना हम क्या जानें,
गिनती, अक्षर पढ़ना जानें।
खेल-कूद और धमा-चौकड़ी,
मन-मरजी के हम दीवाने।

गुरु, परमेश्वर एक समान।
हम बालक छोटे नादान॥

इतना ज्ञान हमें है आता,
आप ही मात-पिता, गुरु ज्ञाता।
मात-पिता, गुरु पूजा नित कर,
विद्यालय को जी ललचाता।

करते सदा बड़ों का मान।
हम बालक छोटे नादान॥

करते बात न लंबी-चौड़ी,
खेल न खेलें गोली-कौड़ी।
रहें सदा हम प्रेमभाव से,
द्वेष भावना मन से छोड़ी।

हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान।
हम बालक छोटे नादान॥

ज्ञान और बल हमको दे दो,
द्वेष-बुराई सारी ले लो।
सुख-साधन सब हमें गहाकर,
पीड़ा विपति कष्ट तुम झेलो।

टूटे नहीं 'मधुर' मुसकान।
हम बालक छोटे नादान॥

पढ़ाई

जो बालक नित उठकर पढ़ते,
पाठ याद कर आगे बढ़ते।
पढ़ने में रहते हैं तेज,
नेक बनें वे कभी न लड़ते॥

उठते रोज सबेरे भाई,
मात-पिता, गुरु शीश नवाई।
आँख, नाक, मुँह, कान, दाँत की,
करते हैं वे नित्य सफाई॥

भोजन सदा नहाकर खाते,
ठीक समय पर पढ़ने जाते।
पूरा समय रहें विद्यालय,
पढ़ने से जी नहीं चुराते॥

सदा साफ कपड़ों को रखते,
मेहनत का फल मीठा चखते।
एक समय में एक काम कर,
खेलकूद में कभी न थकते॥

छूते रोज बड़ों के पैर,
करते नहीं किसी से बैर।
मेलजोल से रहें 'मधुर' संग,
समझें नहीं किसी को गैर॥

वर्णमाला गीत

अम्माँ है पहला स्कूल,
आओ, सभी चलें स्कूल।

इमली खट्टी लगती भाई,
ईख पेरकर करी मिठाई।

उल्लू भौं मटकाता भाई,
ऊधम खूब मचाता भाई।

एक इकाई गणित सिखाती,
ऐनक सबकी निगाह बचाती।

ओला वर्षा के संग आता,
और जोर का जल बरसाता।

अं स्वच्छ सुंदर मनहारी,
अः दूर रहती बीमारी।

कलम पकड़कर करो लिखाई,
खत भैया को दो पहुँचाई।

गपशप कभी करो मत भाई,
घर भी रहकर करो पढ़ाई।

ङ में करो कभी मत भूल,
चलो चलें पढ़ने स्कूल।

छतरी तान चले इतराते,
जल से अपना वसन बचाते।

झम-झम पानी पकड़े तूल,
ञ को समझ चलें स्कूल।

टमटम का अब नहीं जमाना,
ठग जाओगे भूल न जाना।

डगर चलत देरी होएगी,
ढप ढोलक मुरली खोएगी।

ण को समझो करो न भूल,
तख्ती थाम चलो स्कूल।

थरमस भोजन ताजा रखता,
दवात का है प्रचलन थमता।

धन-दौलत सब खूब कमाओ,
नल पर जाकर रगड़ नहाओ।

पल-प्रतिपल का रखना ध्यान,
फल मिलता है कार्य समान।

बने काम नहिं बिगड़ सकेंगे,
भल मानस से अगर रहेंगे।

मत भूलो करना उपकार,
यद्यपि हो कितना भी भार।

रहें ठीक कम हो संतान,
लड़की-लड़का एक समान।

वन को काट करो मत भूल,
शठता छोड़ चलो स्कूल।

षट कौने में छह हो कौन,
सत्य बात में रहो न मौन।

हम सब मिलकर साथ रहेंगे,
क्षत्री हमको सभी कहेंगे।

त्र का अर्थ तीन हैं शूल,
ज्ञानी बनो चलो स्कूल।

गाँव-मुहम्मदपुर, डाकघर-ढोलना
जनपद-कासगंज (उ.प्र.)
दूरभाष : ९५६८८९५२२१

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

उज्जैन के सिहंस्थ पर्व पर आधारित 'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक एक यादगार अंक बन गया है। लेख 'सनातन परंपरा है सिंहस्थ कुंभ-महापर्व', 'उज्जैन सिंहस्थ पर्व कब और क्यों', 'अमृत की एक बूँद, जिसने धन्य किया उस धरा को', 'उज्जैन से अमर है सनातन संस्कृति का वैभव' बेहद शिक्षाप्रद और ज्ञानवर्धक लगे। कहानी 'माटी की ढलान' एवं 'गुरु दक्षिणा' पसंद आईं। कविताएँ, स्मरण, यात्रा-संस्मरण भी खूब अच्छे लगे। साहित्यिक गतिविधियों के समाचार बहुत ही सूचनाप्रद लगते हैं। आज उन साहित्यकारों को कोई पुरस्कार नहीं देता, जिनकी पहुँच और पहचान न हो।

—बद्रीप्रसाद वर्मा 'अनजान', गोरखपुर

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक प्राप्त हुआ, संपादकीय (जेएनयू प्रकरण) समसामयिक लगा। प्रतिस्मृति में 'काका के कहकहे' श्रोताओं को होली का उपहार ही कहा जाएगा। 'उसने कहा था' गुलेरीजी की कहानी की लोकप्रियता का मर्म सत्येंद्र चतुर्वेदी ने खोजने का प्रयास किया है। 'श्रद्धा सुमन' कविता में कवयित्री द्वारा माँ को सच्ची श्रद्धांजलि कही जा सकती है।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़ (हरि.)

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक मिला। गत अंक की ही तरह इस बार का अंक भी स्तरीय है। 'रेखांकनों में सिंहस्थ' एक सराहनीय प्रस्तुति है। चित्रकार को बधाई। सत्यजीत रे की कहानी 'दो जादूगर' में सरल शब्दों में चित्रात्मकता उभरी है। इसके अतिरिक्त अन्य रचनाएँ भी अच्छी लगीं। पत्रिका की स्तरीयता बनी हुई है। ***—श्रीकांत व्यास, पटना (बिहार)***

'साहित्य अमृत' का हर अंक विशेषांक ही होता है, घोषित करें या न करें। हिंदी पत्रिकाओं की भीड़ में अलग से पहचान देनेवाली विशिष्ट पत्रिका, आकर्षक और सार्थक। मार्च अंक वसंत और होली के उल्लास के साथ आया। कविवर संजय पंकज के फागुनी गीत और दोहे रंग-गंध के स्पर्श से अभिभूत और आनंदित कर गए। प्रयोग में ताजगी है। कहने में सादगी है। विद्यानिवासजी काशी ही नहीं, पूरे देश और काल के अंतरंग मनीषी रहे हैं और आज भी हैं। सारी रचनाएँ पठनीय हैं। फिर से सुंदर अंक के लिए शुभकामनाएँ।

—विमल कुमार, मोतिहारी (बिहार)

'साहित्य अमृत' का अंक इस बार किंचित् विलंब से मिला। आते ही आद्योपांत पढ़ गया। उज्जैन के सिंहस्थ कुंभ महापर्व पर सुशील शर्मा, मोहन यादव, सिद्धार्थ गौतम, सीमा शर्मा, निर्जला शर्मा, राजेश व्यास के आलेखों के साथ संदीप राशिनकर के रेखांकन बहुत बढ़िया रहे। विनोद चंद्र पांडेय की मालवीयजी पर कविता बहुत अच्छी लगी। जल संकट के दौर में पानी पर अशोक अंजुम के दोहे क्या खूब रहे। हमेशा की तरह वर्ग पहेली अत्यंत ज्ञानवर्धक है। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना के साथ अगले अंक की प्रतीक्षा है। ***—रजनीश त्रिवेदी, बरेली (उ.प्र.)***

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक यथासमय प्राप्त हुआ। सभी रचनाएँ स्तरीय लगीं, लेकिन ऋता शुक्ल का यात्रा-संस्मरण 'स्याम देश का भ्रमण' पढ़कर मन प्रफुल्लित हुआ। एक सामान्य पर्यटक के लिए अन्य देशों का भ्रमण एक मनोरंजन हो सकता है, लेकिन देश का प्रतिनिधित्व करते हुए वहाँ की संस्कृति और इतिहास का अवलोकन अपना महत्त्व रखता है। हर नई चीज अच्छी नहीं होती और हर पुरानी चीज खराब नहीं होती। ऋताजी ने अपने विवेक से दोनों में से सही और उपयोगी चीज का चयन किया है। दरअसल, मैं रचना में इस कदर मुतासिर हुआ कि बैंकॉक के विभिन्न प्रदेश और सांस्कृतिक स्थल मेरे मानस में छा गए। ***—बी.डी. बजाज, दिल्ली***

'साहित्य अमृत' के मार्च अंक में डॉ. सत्येंद्र चतुर्वेदी ने अमर कहानी 'उसने कहा था—एक अंतरंग भावयात्रा' में जिस सूक्ष्मता एवं व्यापकता से गुलेरीजी की भावाभिव्यक्ति को निरूपित किया है, वह सराहनीय है। पाठक भी भावना की गहराइयों में डूब जाता है। मूल कथा को जो संकेतों के द्वारा व्यक्त किया गया है, उसका संपूर्ण चित्र नेत्रों के समक्ष साकार हो जाता है, तदर्थ चतुर्वेदीजी को बधाई। अन्य सभी रचनाएँ पठनीय हैं।

—आशा कपूर, रुड़की

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक प्राप्त हुआ। संयुक्त संपादकीय 'उज्जैन सिंहस्थ पर्व कब और क्यों?', 'अमृत की एक बूँद, जिसने धन्य किया इस धरा को' आदि विशेष सामग्री में उल्लेखनीय विवरण है। अवधेश कुमार चंसौलिया का लेख विक्रमी नव संवत्सर व भारतीय नव वर्ष की महत्ता को रेखांकित करनेवाला है। राजेश कुमार व्यास का लेख 'पर्व के बहाने प्रकृति से जुड़ाव', 'चापेकर बंधुओं का बलिदान', 'भारतीय आत्मा माखनलाल चतुर्वेदी की पाठशाला' विशेष उल्लेखनीय हैं। कहानियों में 'निपूती' और 'गुरु दक्षिणा' के लिए विजय कुमार सिंह और शकुंतला आर्य की सराहना की जानी चाहिए। कविताओं में बलदेव वंशी 'सागर भी सीमाएँ जानते हैं', 'महामना मालवीय' पर विनोद चंद्र पांडेय, अशोक 'अंजुम' के दोहे 'पानी के अनुवाद' पठनीय हैं। 'करो सम्मान बेटी का' राजेंद्र सिंह ढेला की कविता प्रशंसनीय है। लघुकथाओं में 'चप्पल की कील' के बहाने विनोद शंकर गुप्त द्वारा रवींद्रनाथ ठाकुर की मानसिक दृढता को अभिव्यक्त करना अच्छा लगा। राम झरोखे बैठ के में 'स्मार्ट भारत की परिकल्पना', स्मरण में 'खड़ी बोली के शब्द' तथा राजेश्वरी शांडिल्य द्वारा नवरात्र के विषय में मातृपूजा के विवेचन के लिए जो विचार प्रस्तुत किए हैं, ये सब पत्रिका के स्वरूप को द्विगुणित करते लगते हैं। इस विशेषांक के लिए संपादक मंडल को बधाई।

—कृष्ण मित्र, गाजियाबाद (उ.प्र.)

बसंत ऋतु के पावन, उल्लासपूर्ण पर्व होली के शुभ अवसर पर 'साहित्य अमृत' ने अपनी रचनाओं से अमृत वर्षा कर नवज्ञान भाव जागृति से ओत-प्रोत कर दिया। 'एक-एक का कष्ट जलाएँ' बहुत ही शिक्षाप्रद बहूपयोगी, भावनात्मक कविता है, जो अपनाने से अपना व दूसरों का जीवन सार्थक बना सकती है। काका हाथरसी के कहकहों ने होली के रंगों की सतरंगी छटा बिखेर दी है। सभी आलेख, कविताएँ, संग्रहणीय है।

—लाभांशु व्यास, इंदौर (म.प्र.)

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक देखा और अत्यंत सावधानी से उसका अध्ययन किया। अनेक लेख उपयोगी हैं, किंतु श्री योगेंद्र शर्माजी के लेख 'न्यायी पुरुषोत्तम राम' ने चित्त को जो आनंद प्रदान किया, उसकी जितनी प्रशंसा की जाए, कम है। उन्होंने जिन छिद्रान्वेषियों की बखिया उधेड़ी है, वह श्लाघनीय है। ऐसा लेख प्रकाशित कर आपने भी एक बड़े भारी क्षेपक का पर्दाफाश किया है। अत: आप भी साधुवाद के अधिकारी हैं। अवधेश कुमार चंसौलिया का लेख 'नवसंवत्सर : भारतीय नववर्ष' सभी भारतवासियों के दिलों पर राज करेगा।

—ओमप्रकाश शर्मा, सोनीपत (हरि.)

वर्ग पहेली (१२८)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा–

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ मई, २०१६ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते जुलाई २०१६ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१२६) का शुद्ध हल

१ह	ल	२ध	३र	■	४बा	५रं	बा	६र
स्ता	■	७रा	ज	८ति	ल	क	■	सा
९क्ष	१०य	■	११क	न	क	■	१२चि	त
१३र	क	१४म	■	के	■	१५बे	क	ल
■	१६बा	ल	बाँ	का	न	हो	ना	■
१७फि	र	का	■	स	■	१८श	ह	१९र
२०स	गी	■	२१मु	हा	२२सा	■	२३ट	स
ल	■	२४म	दि	रा	ल	२५य	■	दा
२६न	व	जा	त	■	२७न	म	स्का	र

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री लाभांशु व्यास**
५१, पाराशर नगर, राजेंद्र नगर
इंदौर (म.प्र.)

२. **श्री अखिलेश्वर मिश्र**
मद्रास संस्कृत कॉलेज
८४, रॉयपेठ हाइ रोड
मिलापोर, चेन्नई-६००००४

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली १२६ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री मोहन जगदाले, आशागंगा प्रमोद शिरढोणकर (इंदौर), ओमप्रकाश गोयल (शिवपुरी), सुनीता वर्मा (भिलाई), सरिता दशोत्तर (रतलाम), रामेश्वर कुलमित्र (कबीरधाम), नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), साहिल ढुल (कैथल), विजयपाल सेहलंगिया, ब्रह्मानंद खिच्ची (महेंद्रगढ़), निखिल नाहड़िया (नारनौल), विवेक (जींद), पुखराज वार्ष्णेय, राजेंद्र कुमार सिंह, बी.डी. बजाज, शिखा जैन, निर्मला गुजराती, सुभाष शर्मा, छवि सहल, महेश्वर सिंह विष्ट (दिल्ली), रुक्मणी संगल (पटियाला), किरण साहनी (लुधियाना), शालिग्राम एस तिवारी (मुंबई), गिरधारीलाल अग्रवाल (यवतमाल), विश्वनाथ चटर्जी (नागपुर), मोहन उपाध्याय, रमा गर्ग (अजमेर), विष्णु विनोद सक्सेना (आबू रोड), शोभा दानी (नोएडा), कनकलता सरस, योगेंद्र वर्मा 'व्योम' (मुरादाबाद), शिवानंद सिंह (मेरठ), ओंकारनाथ मिश्र (लखनऊ), बाल सोम गौतम (बस्ती), सत्यपाल सिंह बिष्ट, कमला पंत (देहरादून)।

बाएँ से दाएँ—

१. अचेत (५)
४. आभा (३)
७. निस्वाद होने का भाव (५)
९. नेत्र (२)
१०. धोखा (३)
११. एक मनोहर पक्षी (२)
१३. अप्रिय (४)
१५. पुच्छल तारा (४)
१८. बेहया (४)
२०. दुर्लभ पदार्थ (४)
२२. मालिक (२)
२३. दीये की लौ से बनाई कालिख (३)
२४. बाजार (२)
२५. क्षमा-प्राप्त, वंचित (५)
२८. बारह राशियों में से एक (३)
२९. मोर (५)

ऊपर से नीचे—

१. दुश्चरित्रता (५)
२. जिद (२)
३. खिसकना (४)
४. खटाई के योग से जमाया दूध (२)
५. मन में सोची हुई सुखद, पर असंभव बात (५)
६. पंक्ति (३)
८. काम पूरा करना (४)
१२. नदी (३)
१४. दोगला (३)
१६. नुकसान करनेवाला (५)
१७. कागज-पत्र (४)
१९. बहाना (५)
२१. अनुभव (४)
२२. मनुष्य का आदि प्रजापति (४)
२६. मूल युक्ति, फॉर्मूला (२)
२७. कपट का व्यवहार (२)

वर्ग पहेली (१२७) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१२८)

१		२		३	■	४	५	६
	■		■	७	८			
९		■	१०			■	११	
	■	१२	■	१३		१४		■
१५	१६		१७	■	१८			१९
■	२०			२१	■		■	
२२		■	२३			■	२४	
२५		२६			■	२७	■	
२८			■	२९				

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

डॉ. सुनीता जैन को 'व्यास सम्मान'

विगत दिनों साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी की अध्यक्षता में आयोजित बैठक में के.के. बिरला फाउंडेशन द्वारा हिंदी में प्रकाशित उत्कृष्ट साहित्यिक कृति को दिए जानेवाले प्रतिष्ठित व्यास सम्मान के लिए प्रख्यात कवयित्री एवं साहित्यकार डॉ. सुनीता जैन के काव्य-संग्रह 'क्षमा' को चयनित किया गया है। सम्मानस्वरूप उन्हें ढाई लाख रुपए की राशि दी जाएगी। १३ जुलाई, १९४१ को हरियाणा के अंबाला में जनमी सुनीता जैन की करीब सौ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें 'ए गर्ल ऑफ हर ऐज', 'बोज्यू', 'सफर के साथी', 'हेरवा', 'रंग-रति', 'जाने लड़की पगली' प्रमुख हैं। ☐

श्रीमती पद्मा सचदेव को 'सरस्वती सम्मान'

विगत दिनों नई दिल्ली में श्री ए.एस. आनंद की अध्यक्षता में हुई बैठक में भारतीय भाषा में किसी भारतीय द्वारा लिखी उत्कृष्ट साहित्यिक कृति के लिए दिए जानेवाले प्रतिष्ठित २५वें 'सरस्वती सम्मान' के अंतर्गत कवयित्री श्रीमती पद्मा सचदेव को डोगरी भाषा में लिखी उनकी आत्मकथा 'चित-चेते' को चयनित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें १५ लाख रुपए की राशि एवं प्रशस्ति-पत्र भेंट किया जाएगा। जम्मू में जनमी सचदेव हिंदी और डोगरी दोनों भाषाओं में लिखती हैं। उन्होंने ६० पुस्तकें लिखी हैं। कविता-संग्रह 'मेरी कविता मेरे गीत' के लिए उन्हें १९७१ में साहित्य अकादेमी पुरस्कार दिया गया था। ☐

'बिहारी पुरस्कार से सम्मानित'

विगत दिनों श्री नंद भारद्वाज की अध्यक्षता एवं सर्वश्री अर्जुनदेव चारण, हेमंत शेष, माधव हाड़ा, लता शर्मा एवं सुरेश ऋतुपर्ण की उपस्थिति में के.के. बिरला फाउंडेशन द्वारा २००५ से २०१४ के बीच प्रकाशित हुए डॉ. भगवतीलाल व्यास के काव्य-संग्रह 'कठा सूं आवे है सबद' को 'बिहारी पुरस्कार' से सम्मानित करने के लिए चयनित किया गया है। सम्मान-स्वरूप उन्हें एक लाख रुपए की राशि भेंट की जाएगी। ☐

'यश भारती' सम्मान से सम्मानित

२१ मार्च को लखनऊ में डॉ. राम मनोहर लोहिया विधि विश्वविद्यालय के सभागार में उ.प्र. के मुख्यमंत्री श्री अखिलेश यादव द्वारा समाज के अलग-अलग क्षेत्रों में योगदान के लिए विभिन्न क्षेत्रों के ४६ महानुभावों को साहित्य के लिए सम्मानित किया। सर्वश्री गोपाल चतुर्वेदी, अरुणिमा सिन्हा, अशोक चक्रधर, हेमंत शर्मा, सुनील जोगी को 'यश भारती सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें ११ लाख रुपए की राशि, शॉल व प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। श्री हेमंत शर्मा ने ११ लाख रुपए की राशि में अपनी ओर से एक लाख रुपए और मिलाकर कुल बारह लाख रुपए प्रभाष परंपरा न्यास को देने की घोषणा की, ताकि युवा पत्रकारों के लिए प्रभाषजी द्वारा शुरू की गई सामाजिक सरोकारों की पत्रकारिता और टकसाली भाषा का काम आगे भी जारी रहे। इस राशि के ब्याज से वार्षिक फेलोशिप प्रारंभ की जाएगी। तीन से छह महीने की यह वृत्ति केवल ऐसे पत्रकारों के लिए होगी, जो भारतीय विधाओं को, खासकर कारीगरों को, समझना चाहते हैं। कस्बों और जिलों में ऐसे पत्रकार ढूँढ़ने चाहिए, जो कारीगरों से उनकी भाषा समझ सकें, उस भाषा पर कुछ अच्छी जानकारी निकाल सकें। ☐

डॉ. दामोदर खड़से को 'साहित्य अकादेमी पुरस्कार'

विगत दिनों नई दिल्ली की केंद्रीय साहित्य अकादेमी ने अनुवाद पुरस्कारों की घोषणा की है, जिसमें हिंदी में अनुवाद के लिए डॉ. दामोदर खड़से द्वारा मराठी से हिंदी में अनूदित पुस्तक 'बारोमास' को वर्ष २०१५ के लिए चयनित किया गया। डॉ. खड़से की पैंतालीस से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं, जिनमें १६ कृतियाँ अनूदित हैं। ☐

श्रीमती शुभांगी मुकुंद भडभडे सम्मानित

४ अप्रैल को कोलकाता की साहित्यिक-सामाजिक संस्था श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय द्वारा प्रवर्तित २७वाँ 'डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान' का 'पद्मगंधा प्रतिष्ठान' की संस्थापक अध्यक्ष श्रीमती शुभांगी मुकुंद भडभडे को २८ अप्रैल को स्थानीय कलामंदिर प्रेक्षागृह में आयोजित समारोह में त्रिपुरा के महामहिम राज्यपाल श्री तथागत राय द्वारा प्रदान किया जाएगा। सम्मान-स्वरूप उन्हें एक लाख रुपए की राशि एवं मानपत्र भेंट किया जाएगा। ☐

प्रो. बृज किशोर कुठियाला सम्मानित

१५ अप्रैल को कोचीन में ऑल इंडिया फेडरेशन ऑफ मास्टर प्रिंटर्स द्वारा प्रिंटिंग शिक्षा में उत्कृष्ट योगदान के लिए माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. बृज किशोर कुठियाला को सम्मानित किया गया। ☐

डॉ. माधवी भंडारी सम्मानित

१० अप्रैल को बेंगलुरु में भारतीय विद्या भवन में श्रीयुत् श्रीकांत पाराशर की अध्यक्षता में डॉ. माधवी भंडारी को उनकी कृति 'खुदी को किया बुलंद' के लिए कमला गोइन्का फाउंडेशन द्वारा घोषित इकतीस हजार रुपए के 'पिताश्री गोपीराम गोइन्का हिंदी कन्नड़ अनुवाद पुरस्कार' से एवं श्री विजय कुमार सप्पत्ति को उनकी कृति 'एक थी माया' के लिए इकतीस हजार रुपए के 'बाबूलाल गोइन्का हिंदी साहित्य पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. किरण कुमार थे। इस अवसर पर सुश्री शांताबाई को 'गोइन्का हिंदी साहित्य सम्मान' से तथा साहित्येतर क्षेत्र के लिए डॉ. नरपत सोलंकी को 'दक्षिण ध्वजधारी सम्मान' से सम्मानित किया गया। अंत में आयोजित हास्य कवि-सम्मेलन में सर्वश्री सुभाष काबरा, महेश दूबे, श्याम गोइन्का, घनश्याम अग्रवाल व सुमिता केशवा ने काव्य पाठ किया। ☐

श्री उमेश चौहान सम्मानित

विगत दिनों दिल्ली में साहित्य अकादेमी सभागार में श्री नरेश सक्सेना की अध्यक्षता एवं सर्वश्री अनीता श्रीवास्तव, अखिलेश, बद्रीनारायण, कौशल किशोर की उपस्थिति में डॉ. नामवर सिंह द्वारा 'रेवांत' पत्रिका लखनऊ के 'मुक्तिबोध साहित्य सम्मान-२०१५' से श्री उमेश चौहान को सम्मानित किया गया। साथ ही उनकी दो पुस्तकों का लोकार्पण भी हुआ। ☐

'अ.भा. शब्द सहचर सम्मान' से सम्मानित

विगत दिनों इंदौर में सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान के सभागार में आयोजित राष्ट्रीय साहित्यिक समागम में सर्वश्री श्रीति-संदीप राशिनकर की सद्य:प्रकाशित कृति 'कुछ मेरी कुछ तुम्हारी' के लिए 'अ.भा. शब्द सहचर सम्मान' से सम्मानित किया गया। □

सम्मान समारोह संपन्न

१९ मार्च को कोलकाता की साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'वाक्' द्वारा श्री शैलेंद्र चौहान के मुख्य आतिथ्य में हो ची मिन्ह सरणी व्याख्यान हॉल में सम्मान समारोह आयोजित किया गया, जिसमें श्री सेराज खान बातिश के कथा संग्रह 'अनपढ़ आंधी' पर सर्वश्री राज्यवर्धन, जितेंद्र धीर, अभिज्ञात, गीता दुबे, जितेंद्र जितांशु द्वारा विचार व्यक्त किए गए। डॉ. जसबीर चावला ने बुद्धकीय प्रबंधन पर अपने विचार रखे। द्वितीय सत्र में सर्वश्री अभिज्ञात, गीता दुबे, राज्यवर्धन, शहीद फरोगी, करमर अशरफ ने काव्य पाठ किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

१३ मार्च को लखनऊ में डॉ. हरशरण दास की अध्यक्षता में सम्मान समारोह आयोजित किया गया, जिसमें मुख्य एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री जयशंकर मिश्र, हरिओम, कर्ण सिंह चौहान, अनीस अंसारी, मनीष शुक्ला थे। २०१५-१६ सत्र के लिए विभिन्न विभागों में नियुक्त हिंदी एवं उर्दू भाषा में साहित्य-सृजन में रत २४ रचनाकारों, जिनमें सर्वश्री गदाधर नारायण सिन्हा को 'प्रताप नारायण मिश्र पुरस्कार', ब्रजभूषण सिंह गौतम 'अनुराग' को 'शिवसिंह 'सरोज' पुरस्कार', किशोरीशरण शर्मा को 'बालकृष्ण भट्ट पुरस्कार', गिरिजाशंकर दुबे को 'महादेवी वर्मा पुरस्कार', मंजूर अहमद सिद्दीकी को 'मीर तकी मीर पुरस्कार', बशीरुद्दीन अहमद बशीर फारूकी को 'जोश मलिहाबादी पुरस्कार', तरसेम लाल को 'शरतचंद्र चट्टोपाध्याय पुरस्कार', उमेश कुमार सिंह चौहान को 'सुब्रह्मण्यम भारती पुरस्कार', प्रियदर्शन मालवीय को 'पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार', मनोज कुमार सिंह को 'सुमित्रानंदन पंत पुरस्कार', राजेंद्र यादव को 'भगवती चरण वर्मा पुरस्कार', आनंद ओझा को 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', सर्वेंद्र विक्रम को 'जयशंकर प्रसाद पुरस्कार', संतोष तिवारी 'कौशिल' को 'अमृतलाल नागर पुरस्कार', कमलेश भट्ट 'कमल' को 'डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' पुरस्कार', मनु स्वामी को 'डॉ. विद्यानिवास मिश्र पुरस्कार', रविशंकर पांडेय को 'गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' पुरस्कार', अनिल कुमार मिश्र को 'श्याम सुंदर दास पुरस्कार', हमीद खाँ को 'मिर्जा असद उल्ला खाँ 'गालिब' पुरस्कार', वजाहत हुसैन रिजवी को 'फिराक गोरखपुरी पुरस्कार', मेराजुल हसन को 'अमीर खुसरो पुरस्कार', अली साहिल को 'अकबर इलाहाबादी पुरस्कार' से एवं १८ विद्वानों, जिनमें सर्वश्री सैयद मेहदी हसन रिजवी, उमाशंकर शुक्ल, नरेंद्र कुमार श्रीवास्तव, साधुशरण वर्मा, श्याम नारायण श्रीवास्तव, अरुणेंद्र चंद्र त्रिपाठी, शिवशंकर त्रिपाठी, दीपक कोहली, आभा मिश्रा, सुभाष चंद्र गुरुदेव, उमा शरण वर्मा 'करुण', अलका 'विजय', आदित्य द्विवेदी, अनिल बाँके, संजय कुमार सिंह, संजीव तिवारी, राम प्रसाद शर्मा, सुशील चंद्र श्रीवास्तव, तनवीर अहमद को 'साहित्य गौरव सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप सभी को ५१-५१ हजार रुपए की राशि भेंट की गई। इस अवसर पर श्रीमती शोभा दीक्षित 'भावना' की 'नियति', श्री कृष्ण कुमार वर्मा 'कृष्ण लखनवी' की 'कृष्ण काव्य कुंज', बलदेव त्रिपाठी की 'अर्थागमन' तथा रामलखन यादव 'पवन कौशांबवी' की 'गुलदस्ता' कृतियों का लोकार्पण किया गया। संचालन डॉ. रश्मिशील व इं. सुनील कुमार बाजपेयी ने किया तथा आभार श्री विजय त्रिपाठी ने ज्ञापित किया। □

गोष्ठी एवं सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों लखनऊ में देवनागरी संस्था, आगरा एवं राष्ट्रीय एकीकरण टाइम्स के संयुक्त तत्त्वावधान में साहित्य भवन में काव्य-गोष्ठी एवं साहित्यिक सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर डॉ. सुरेश उजाला को साहित्य, पत्रकारिता एवं संपादन क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान हेतु 'संपादक रत्न २०१६' से अलंकृत किया गया। 'बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ' विषय पर काव्य-गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री अशोक अश्रु, मोहित माथुर, ए.के. सिंह, मुनीश्वर दयाल, शशी गोयल, शैल अग्रवाल शैलजा, यशोयश, डिंपल शर्मा, सुनीता सुवेंद्र, अनिल अरोरा संघर्ष, सुधांशु साहिल, ब्रज किशोर शर्मा, बंटी भाई, अनुराग शर्मा, रवि शुक्ला, शीलेंद्र सिकरवार, रविंद्र, प्राची मिश्र, रति शर्मा व्यथा ने काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. यशोयश ने किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

८ मार्च को इलाहाबाद विश्वविद्यालय कैंपस की निराला आर्ट गैलरी में कवयित्री डॉ. अनुराधा चंदेल 'ओस' को 'सुभद्रा कुमारी चौहान' सम्मान से सम्मानित किया गया। सम्मान-स्वरूप उन्हें गुफ्तगू परिवार की ओर से सम्मान-पत्र, शील्ड व शॉल भेंट की गई। इस अवसर पर गुफ्तगू पत्रिका के 'महिला विशेषांक' का विमोचन श्रीमती अभिलाषा गुप्ता द्वारा किया गया। साथ ही सर्वश्री चित्रा देसाई, अर्चना पांडेय, तलत परवीन, निवेदिता श्रीवास्तव, सुधा आदेश, तारा गुप्ता, तनु श्रीवास्तव, स्नेहा पांडेय, शबीहा खातून, रुचि श्रीवास्तव को भी सम्मानित किया गया। □

हिंदी सेवी सम्मान समारोह संपन्न

१९ अप्रैल को नई दिल्ली के राष्ट्रपति भवन में केंद्रीय हिंदी संस्थान द्वारा वर्ष २०१२, २०१३ तथा २०१४ का हिंदी सेवा सम्मान समारोह आयोजित किया गया, जिसमें केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री तथा केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, आगरा अध्यक्ष श्रीमती स्मृति इरानी विशेष रूप से उपस्थित थीं। इस अवसर पर भारत के राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी द्वारा 'गंगाशरण सिंह पुरस्कार' के अंतर्गत हिंदी प्रचार-प्रसार एवं हिंदी प्रशिक्षण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिए वर्ष २०१२ के लिए सर्वश्री बी. सत्यनारायण, राधांकात मिश्र, पी.वी. विजयन व आर. सुरेंद्रन, वर्ष २०१३ के लिए क्षीरदा कुमार शाइकिया, ता.शि.क. कण्णन, रवींद्रनाथ मिश्र, रवींद्रनाथ मिश्र, डी.एम. सावित्री, वर्ष २०१४ के लिए एम. वेंकटेश्वर, वी.डी. हेगड़े, देवेन चंद दास, बीना बुदकी को; 'गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार' के अंतर्गत हिंदी पत्रकारिता तथा रचनात्मक साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिए वर्ष २०१२ के लिए महेश दर्पण, विश्वनाथ सचदेव, वर्ष २०१३ के लिए राजीव कटारा, बी.वाइ. ललितांबा, वर्ष २०१४ के लिए देवेंद्र दीपक, शत्रुघ्न प्रसाद को; 'आत्माराम पुरस्कार' के अंतर्गत वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य और उपकरण विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिए वर्ष २०१२ के

लिए ओम प्रकाश शर्मा, गणेश शंकर पालीवाल, वर्ष २०१३ के लिए बालेंदु शर्मा दाधीच, दिनेश मणि, वर्ष २०१४ के लिए सुरेश कुमार जिंदल, सुरेश तिवारी को; सुब्रह्मण्यम भारती पुरस्कार' के अंतर्गत हिंदी के विकास से संबंधित सर्जनात्मक/आलोचनात्मक साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाओं के लिए वर्ष २०१२ के लिए एस. विजया, अमृता भारती, वर्ष २०१३ के लिए आई.एन. चंद्रशेखर रेड्डी, मुक्ता, वर्ष २०१४ के लिए नरेंद्र कोहली, श्यौराज सिंह 'बेचैन' को; 'महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' के अंतर्गत हिंदी में खोज और अनुसंधान करने तथा यात्रा-विवरण आदि के लिए वर्ष २०१२ के लिए एस. रहमतुल्लाह, जी. गोपीनाथन, वर्ष २०१३ के लिए विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पूर्ण सिंह डबास, वर्ष २०१४ के लिए सुरेश गौतम, बलदेव वंशी को; 'डॉ. जॉर्ज ग्रियर्सन पुरस्कार' के अंतर्गत विदेशी हिंदी विद्वान् को विदेशों में हिंदी के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय कार्य के लिए वर्ष १०१२ के लिए अलका धनपत, वर्ष २०१३ के लिए ग. फू-फिड्., वर्ष २०१४ के लिए शिचिरो सोमा को एवं 'पद्मभूषण डॉ. मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार' के अंतर्गत भारतीय मूल के विद्वान् को विदेशों में हिंदी के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान के लिए वर्ष २०१२ के लिए सुषम बेदी, वर्ष २०१३ के लिए स्नेह ठाकुर व वर्ष २०१४ के लिए सुधा ओम ढींगरा को सम्मानित किया गया। □

'साहित्य अमृत' युवा हिंदी कहानी प्रतियोगिता पुरस्कार अर्पण समारोह संपन्न

१८ अप्रैल को नई दिल्ली स्थित हिंदी भवन के सभागार में साहित्य एवं संस्कृति की संवाहक मासिक पत्रिका 'साहित्य अमृत' द्वारा 'युवा हिंदी कहानी प्रतियोगिता' का पुरस्कार अर्पण समारोह आयोजित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रेमचंद साहित्य के मर्मज्ञ एवं साहित्यकार डॉ. कमल किशोर गोयनका ने की। मुख्य अतिथि केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण राज्य मंत्री कर्नल राज्यवर्धन सिंह राठौड़ तथा विशिष्ट अतिथि प्रख्यात साहित्यकार श्रीमती चंद्रकांता थीं। 'साहित्य अमृत' के संपादक एवं पूर्व राज्यपाल श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी का विशेष सान्निध्य मिला।

इस सारस्वत समारोह की शुरुआत विद्यादायिनी माँ शारदा को माल्यार्पण के साथ हुई। मंचस्थ अतिथियों का स्वागत पुस्तक संच भेंट कर डॉ. पीयूष कुमार द्वारा किया गया। साहित्य अमृत के संयुक्त संपादक डॉ. हेमंत कुकरेती ने युवा हिंदी कहानी प्रतियोगिता के आयोजन पर विस्तृत प्रकाश डालते हुए कहा कि साहित्य-मर्मज्ञ जानते हैं कि साहित्य अमृत के विशेषांकों की एक लंबी और समृद्ध परंपरा रही है। ऐसे कई अंक हैं, जिनकी माँग आज भी हिंदी साहित्य के अध्येता और पाठक करते रहते हैं। पत्रिका विचारों का खुला मंच है। साहित्य अमृत बिना किसी कोलाहल के अपने समय के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विचारों को प्रस्तावित करनेवाली पत्रिका का दायित्व वहन कर रही है।

इसके बाद सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्रीमती चंद्रकांता ने अपने उद्बोधन में कहा कि मैं इस बात से बेहद खुश हूँ कि साहित्य अमृत पत्रिका देश के कोने-कोने में पहुँच रही है और पढ़ी जा रही है। इस प्रतियोगिता में देश भर से कहानियाँ आईं, मेरी दृष्टि में रचनाओं का चयन करना बड़ा कठिन काम है। आज के युवा लेखकों की रचनाओं को पढ़कर मुझे सुखद अहसास होता है कि वे किसी प्रकार का दबाव महसूस नहीं करते हैं, समय की नब्ज को पहचान रहे हैं और अपने विचार स्वच्छंदता से व्यक्त कर रहे हैं।

इसके बाद विजेताओं को पुरस्कार अर्पण किए गए। सुश्री श्रद्धा थवाईत को उनकी कहानी 'हवा में फड़फड़ाती चिट्ठी' के लिए प्रथम पुरस्कार के अंतर्गत इक्कीस हजार रुपए; द्वितीय पुरस्कार के लिए श्री नवनीत नीरव की कहानी 'अंगेया' के लिए ग्यारह हजार रुपए तथा तृतीय पुरस्कार के तहत श्री अभिषेक पांडेय की कहानी 'अनुबंधित जीवन' के लिए इक्यावन सौ रुपए का चैक के साथ सभी को श्रीफल, शॉल एवं प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। सुश्री मेघा दुग्गल मेहरा की कहानी 'दोबारा लौटकर', श्री जीतू कुमार गुप्ता की कहानी 'नो एंट्री', श्री संदेश नायक की कहानी 'जिंदगी दोबारा' को प्रोत्साहन पुरस्कार के अंतर्गत इक्कीस सौ रुपए, श्रीफल, शॉल एवं प्रशस्ति-पत्र माननीय अतिथियों द्वारा भेंट किए गए। प्रोत्साहन पुरस्कार के तीन विजेता सर्वश्री सुभाष चंद बैरवा, प्रमोद राय व विनय गुदारी कार्यक्रम में नहीं आ सके।

इस अवसर पर साहित्य अमृत के संपादक श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ने अपने उद्बोधन में कहा कि वह निर्णायक मंडल के सदस्यों सर्वश्री कमल किशोर गोयनका, गंगाप्रसाद विमल तथा लक्ष्मीशंकर वाजपेयी की सूझबूझ की सराहना करते हैं कि उन्होंने कितनी मेहनत से सब कहानियों को पढ़ा और फिर इन्हें चुना। कोई पुरस्कार छोटा-बड़ा नहीं होता है, बल्कि यह देखा जाता है कि उसकी विश्वसनीयता कितनी है। उन्होंने युवा लेखकों से आग्रह किया कि वे निरंतर लिखते रहें।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण राज्य मंत्री कर्नल राज्यवर्धन सिंह राठौड़ ने कहा कि साहित्य अमृत पत्रिका अब इक्कीस वर्ष, यानी युवा हो गई है और वह युवाओं को प्रोत्साहित कर रही है। हर व्यक्ति में एक हीरो होता है, चाहे वह किसी भी क्षेत्र में हो, पर उसे एक मंच चाहिए होता है। साहित्य अमृत ने उन्हें यह मंच दिया है। उन्होंने कहा कि भारत की युवा शक्ति हर क्षेत्र में प्रभावी उपस्थिति दर्ज करा रही है। आज के सम्मानित युवा कथाकार भविष्य में सफल साहित्यकार बनेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में डॉ. कमल किशोर गोयनकाजी ने कहा कि उन्हें इस बात की बड़ी खुशी है कि कर्नल राठौड़ जैसा योद्धा भी संस्कृति और साहित्य से इतनी गहराई से जुड़ा है। आज एक अच्छी युवा लेखक पीढ़ी तैयार हो रही है। उन्होंने मुंशी प्रेमचंद की सन् १९०८ में लिखी उनकी पहली कहानी 'सबसे अनमोल रत्न' सुनाई। उन्होंने कहा कि लेखन में निरंतरता बनी रहनी चाहिए। लेखक बनना ईश्वरीय कृपा है। उन्होंने युवाओं का आह्वान किया कि जिंदगी को गहराई से देखिए और इस पर विचार कीजिए कि देश और समाज को हम क्या दे रहे हैं? जो साहित्य उत्कर्ष नहीं करता, वह साहित्य जल्दी ही खत्म हो जाता है। लेखक अपने समय की समस्याओं से द्रवित हो उन बातों को अपने लेखन में उठाता है, समाज के सामने लाता है। □

जयंती समारोह संपन्न

१७-१८ जनवरी को विजयनगर में तेलुगु के लेखक श्री चांगरि सोमयागुल चासो के जयंती समारोह का दो दिवसीय साहित्य उत्सव श्री

विश्वनाथ रेड्डी की अध्यक्षता में किया गया। इस अवसर पर भारतीय साहित्य निर्माता की शृंखला में चासो और केतु विश्वनाथ रेड्डी की साहित्य अकादेमी से अनूदित, प्रकाशित और पुरस्कृत कहानी संकलनों पर विचार-विमर्श किया गया। श्री के. निवासराव द्वारा कार्यक्रम का उद्घाटन एवं पुस्तकों का लोकार्पण किया गया। सुश्री कमल कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए। इसी अवसर पर चासो पुरस्कार से सम्मानित और पुरस्कृत कृति के लेखक श्री के.बी. रमणाराव को शॉल, श्रीफल तथा पुरस्कार राशि देकर सम्मानित किया गया। □

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

७ मार्च को कुशीनगर में कुसुमांजलि फाउंडेशन के सहयोग से विद्याश्री न्यास, श्रद्धानिधि न्यास, अज्ञेय भारतीय संस्कृति संस्थान एवं राजकीय बौद्ध संग्रहालय के संयुक्त तत्त्वावधान में 'अज्ञेय के उपन्यासों का पुनरावलोकन' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसकी अध्यक्षता प्रो. रामदेव शुक्ल ने की। मुख्य अतिथि प्रो. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी थे। उद्घाटन समारोह में श्री अरुणेश नीरन एवं प्रो. महेश्वर मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। धन्यवाद डॉ. गणेश प्रसाद शुक्ल ने ज्ञापित किया। प्रथम सत्र में 'शेखर एक जीवनी' विषय पर प्रो. प्रमोद कुमार सिंह एवं श्री प्रकाश उदय ने, 'नदी के द्वीप' विषय पर श्री गिरिराज किशोर एवं प्रो. अपूर्वानंद ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय सत्र में 'अपने-अपने अजनबी' पर सर्वश्री नंदकिशोर आचार्य, अवधेश प्रधान, चितरंजन मिश्र एवं ओम थानवी ने अपने विचार व्यक्त किए। समापन सत्र में श्री अनंत मिश्र की अध्यक्षता में सर्वश्री सरोज पांडेय, उद्भव मिश्र, इंद्र कुमार दीक्षित, गिरिधर करुण, अवधेश प्रधान, नंद किशोर आचार्य और प्रकाश उदय द्वारा काव्य पाठ किया गया। संचालन श्री प्रकाश उदय ने किया। □

प्रादेशिक हास्य-व्यंग्य गोष्ठी संपन्न

२७ मार्च को भोपाल के हिंदी भवन के नरेश मेहता गोष्ठी कक्ष में प्रादेशिक हास्य-व्यंग्य गोष्ठी का आयोजन मुख्य अतिथि श्री बटुक चतुर्वेदी व विशिष्ट अतिथि डॉ. हरि जोशी की उपस्थिति में हुआ, जिसमें सर्वश्री राज गोस्वामी, रामगोपाल रायकवार, उमाशंकर मिश्रा, प्रकाशचंद्र सेठ, महेंद्र भट्ट, जुझार सिंह भाटी, रमेश शर्मा 'धुआँधार', शिवप्रताप सिंह भदौरिया, इशरत अली 'बेकस', विजया तैलंग, राजेंद्र गट्टानी, कैलाशचंद्र जायसवाल, सुशील गुरु ने रचना पाठ किया। □

काव्य-संध्या आयोजित

विगत दिनों ग्वालियर में सनातन धर्म मंदिर के राधा कुटीर में डॉ. कृष्ण मुरारी शर्मा की अध्यक्षता एवं श्री प्रकाश मिश्र के मुख्य आतिथ्य में काव्य-संध्या आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री बाबूराम माहौर 'प्रयासी', जानकी प्रसाद 'विवश', सत्या शुक्ला 'सुरभि', बी.एल. शर्मा, बंगाली बाबू 'विनम्र', श्यामलाल माहौर, अशोक सिंह राजपूत, नरेंद्र कुमार शर्मा ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री अशोक राजपूत ने किया। □

साहित्य कुंभ का ऐतिहासिक आयोजन संपन्न

१९-२० मार्च को उज्जैन में 'शब्द प्रवाह' साहित्यिक-सांस्कृतिक एवं सामाजिक मंच और संवाद शोध संस्थान के तत्त्वावधान में साहित्य कुंभ का ऐतिहासिक आयोजन संपन्न हुआ, जिसमें सर्वश्री दरवेश भारती, राजकुमार जैन राजन, वरुण आचार्य, सतिंदर कौर सलुजा ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर डॉ. शिव शर्मा एवं श्री नरेंद्र श्रीवास्तव को 'शब्द साधक सम्मान', डॉ. दरवेश भारती को 'स्व. श्रीमती सरस्वती सिंह स्मृति सम्मान', श्री देवेंद्र कुमार मिश्रा को 'श्रीमती माया मालवेंद्र बदेका शब्द प्रवाह गौरव सम्मान', डॉ. बी.के. मिश्रा को 'श्रीमती सत्यभामा शुकदेव त्रिवेदी स्मृति गीतकार सम्मान', श्रीमती प्रतिमा अखिलेश को 'स्व. बालशौरि रेड्डी बाल साहित्य सम्मान', श्रीमती मंदाकिनी श्रीवास्तव को 'इं. प्रमोद शिरढोणकर बिरहमन स्मृति कविता सम्मान', श्री विजय कुमार एवं डॉ. इंदु गुप्ता को 'इं. प्रमोद शिरढोणकर बिरहमन स्मृति कथा सम्मान', श्रीमती श्रीति राशिनकर एवं श्री संदीप राशिनकर को 'शब्द सहचर विशिष्ट सम्मान', डॉ. पद्मजा रघुवंशी को 'सांस्कृतिक सम्मान', सर्वश्री ज्वालाप्रसाद शांडिल्य दिव्य, अंजुल कंसल कनुप्रिया, दीपेंद्र शर्मा, अनिरुद्ध सिंह सेंगर, कीर्ति श्रीवास्तव, स्वामीनाथ पांडे, अरविंद शर्मा को 'साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री राजेश चौहान की 'शब्द शिल्पी-२', कोमल वाधवानी प्रेरणा की 'सहित यादों का दस्तावेज', देवेंद्र कुमार मिश्रा की 'बाकी सब बढ़िया है', राधेश्याम पाठक उत्तम की 'विश्वामित्र के राम', विजय कुमार नन्हा की 'शोषण के खिलाफ', राजेश रावल सुशील की 'मालवी चौपाल' कृतियों का विमोचन अतिथियों द्वारा किया गया। संचालन श्री राजेश रावल ने किया तथा आभार श्री संदीप सृजन के व्यक्त किया। इस अवसर पर कवयित्री सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री आरती तिवारी, मनीषा प्रधान, कीर्ति मेहता कोमल, इंदू गुप्ता, श्रीति राशिनकर, मंदाकिनी श्रीवास्तव, अंजुल कंसल, रचना नंदिनी सक्सेना, शशि निगम, सीमा जोशी, कोमल वाधवानी प्रेरणा, आशा गंगा शिरढोणकर, चित्रा जैन, मीरा जैन, आशा टंडन ने काव्य पाठ किया। संचालन सुश्री कीर्ति श्रीवास्तव ने किया तथा आभार सुश्री भाव्या रावल ने व्यक्त किया। □

त्रिदिवसीय कार्यक्रम संपन्न

१३-१५ मार्च को नागपुर में हिंदी साहित्य सम्मेलन का ६८वाँ अधिवेशन महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री श्री देवेंद्र फड़नवीस के मुख्य आतिथ्य एवं केंद्रीय परिवहन मंत्री श्री नितिन गडकरी के विशिष्ट आतिथ्य में संपन्न हुआ। आभार श्री विभूति मिश्र ने ज्ञापित किया। द्वितीय सत्र में 'हिंदी-मराठी अंतर्संबंध' विषय पर सर्वश्री रणसुभे, शरद पगारे, त्रिभुवननाथ राय ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. पृथ्वीनाथ पांडेय ने 'शिक्षण का माध्यम : मातृभाषाएँ' विषय पर अपना व्याख्यान दिया। संचालन श्री श्यामकृष्ण पांडेय ने किया। □

अभिव्यक्ति में परिचर्चा

विगत दिनों 'अभिव्यक्ति' संस्था द्वारा श्री नरेंद्र नागदेव के भोपाल गैस त्रासदी पर आधारित किताबघर से प्रकाशित उपन्यास 'एक स्विच था भोपाल में' पर परिचर्चा कार्यक्रम श्रीमती चंद्रकांता के सान्निध्य में आयोजित किया गया। □

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों झाँसी में प्रो. सुरेंद्र दुबे की अध्यक्षता में 'बुंदेलखंड में साहित्य की परंपरा : खड़ी बोली एवं बुंदेली के विशेष संदर्भ में' विषय पर

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न हुई, जिसमें सर्वश्री रामशंकर द्विवेदी, सदानंद प्रसाद गुप्त, त्रिभुवन नाथ शुक्ल, दिनेश कुशवाह एवं रवींद्र शुक्ल ने अपने विचार व्यक्त किए। कथा साहित्य की परंपरा सत्र की अध्यक्षता श्रीमती मैत्रेयी पुष्पा ने की। □

संगोष्ठी एवं वार्षिकोत्सव संपन्न

१९-२० मार्च को लखनऊ के सी.एम.एस. इंदिरानगर में भारतीय भाषा प्रतिष्ठापन राष्ट्रीय परिषद्, उत्तर प्रदेश द्वारा दो दिवसीय कार्यक्रम आयोजित किया गया। प्रथम दिवस में डॉ. विजय कुमार भार्गव की अध्यक्षता एवं डॉ. दाऊजी गुप्त के मुख्य आतिथ्य में 'हिंदी में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी लेखन' विषय पर संगोष्ठी हुई, जिसमें सर्वश्री गजेंद्र गिरि, चंद्र मोहन नौटियाल, सुशील कुमार, गौरी शंकर वैश्य, त्रिबेनी प्रसाद दुबे व जगदीश नारायन राय ने विचार व्यक्त किए। द्वितीय दिवस श्री महेश चंद्र द्विवेदी की अध्यक्षता एवं डॉ. भारती गांधी के मुख्य आतिथ्य में वार्षिकोत्सव का आयोजन हुआ, जिसमें सर्वश्री गजेंद्र गिरि, लक्ष्मीकांत शंखधर एवं जगदीश नारायन राय को सम्मानित किया गया। डॉ. अर्चना प्रकाश के कहानी-संग्रह 'दुष्यंती फेरे' का लोकार्पण किया गया। परिषद् द्वारा विभिन्न विद्यालयों में आयोजित निबंध, वाद-विवाद, अंत्याक्षरी एवं सुलेख प्रतियोगिता में श्रेष्ठता प्राप्त छात्रों को पुरस्कृत किया गया एवं उनके अध्यापकों को सम्मानित किया गया। □

राष्ट्रीय विज्ञान संगोष्ठी संपन्न

१९ मार्च को जयपुर के राजस्थान विश्वविद्यालय के रसायन शास्त्र विभाग एवं विज्ञान परिषद् प्रयाग की जोधपुर शाखा के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रो. जे.पी. सिंघल की अध्यक्षता एवं प्रो. पी.एस. सिंघल के मुख्य आतिथ्य में 'बदलते परिवेश पर्यावरण सरंक्षण आवश्यक' विषय पर पहली बार हिंदी में 'राष्ट्रीय विज्ञान संगोष्ठी' का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री अरुण आर्य, एम.ए. हक, डी.डी. ओझा, नरेंद्र सिंह, के.एम.एल. माथुर, पी.एस. वर्मा एवं अलका शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संयोजक प्रो. अंशु डांडिया थे तथा कृतज्ञता डॉ. नीलिमा गुप्ता ने ज्ञापित की। □

आचार्य विष्णुकांत शास्त्री की पुण्यतिथि संपन्न

१७ अप्रैल को कोलकाता के श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय कक्ष में लोकप्रिय राजनेता तथा उत्तर प्रदेश के पूर्व राज्यपाल आचार्य विष्णुकांत शास्त्री की ग्यारहवीं पुण्यतिथि पर भावपूर्ण कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री शुभ्रा उपाध्याय, बंशीधर शर्मा, दिनेश पांडेय, ओमप्रकाश मिश्र, तारा दूगड़ ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री मनोज काकड़ा के संयोजन में आचार्य विष्णुकांत शास्त्री पर केंद्रित श्रीमती सुषमा स्वराज का व्याख्यान तथा विष्णुकांतजी के वक्तव्य की दृश्य-श्रव्य प्रस्तुति दी गई। संचालन श्री योगेशराज उपाध्याय ने किया तथा धन्यवाद श्री गिरिधर राय ने ज्ञापित किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

'वर्तिका' द्वारा अपने वार्षिकोत्सव (मई) में साहित्य के क्षेत्र में सक्रिय संस्थाओं को पुरस्कृत करने की योजना है। अत: 'सिंहस्थ कुंभ धार्मिक ही नहीं एक साहित्य और पर्यटन का सांस्कृतिक आयोजन' विषय पर साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान हेतु नामांकन सादे कागज पर स्वयं का तथा नामांकित व्यक्ति या संस्था का पूर्ण विवरण वर्तिका, ओ.बी. ११, विद्युत मंडल कॉलोनी, रामपुर जबलपुर के पते पर भेज सकते हैं। □

याद-ए-के.पी. कार्यक्रम संपन्न

१२ मार्च को लखनऊ में साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'व्यंग्यार्थ' में 'व्यंग्यार्थ : विचारों के आईने में' विषय पर रचना पाठ किया गया, जिसमें सर्वश्री सूर्य कुमार पांडेय, सर्वेश अस्थाना, अंशुमान खरे, नसीम साकेती, मुकुल महान, पंकज प्रसून, अलंकार रस्तोगी, इंद्रजीत कौर, अनूप मणि त्रिपाठी, परवेश जैन, प्रेमेंद्र श्रीवास्तव अशोक चंद्र सक्सेना, मधुलिका सक्सेना ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती अमिता दुबे ने किया। १२ अप्रैल को श्री उर्मिल कुमार थपलियाल की अध्यक्षता में हुए एक अन्य कार्यक्रम में पद्मश्री के.पी. सक्सेना के जन्मदिवस के अवसर पर 'याद···ए···के.पी.' का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री सुधाकर अदीब, नसीम साकेती, अशोकचंद्र सक्सेना, मधुलिका सक्सेना, आलोक शुक्ल, संजीव जायसवाल, श्याम मिश्र, अंशुमान खरे, कुमार तरल, अलंकार रस्तोगी, पंकज प्रसून व अनूप मणि त्रिपाठी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अमिता दुबे ने किया। □

'शिल्पकार टाइम्स दैनिक' विमोचित

२० मार्च को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब के स्पीकर हॉल में श्री कांता प्रसाद के मुख्य आतिथ्य में 'शिल्पकार टाइम्स दैनिक' का विमोचन किया गया, जिसमें सर्वश्री चंद्रबल्लभ टम्टा, जोगा राम, आर.पी. टम्टा, अजय टम्टा, जयप्रकाश कर्दम, एम.पी. सिंह व कमला रावत ने अपने विचार व्यक्त किए। □

वार्षिकोत्सव एवं लोकार्पण समारोह संपन्न

१० अप्रैल को नगर की प्रसिद्ध साहित्य एवं सामाजिक संस्था 'शब्द सारांश' का द्वितीय वार्षिकोत्सव डॉ. राजेंद्र मिलन की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। प्रथम सत्र में सुश्री सपना मांगलिक द्वारा संपादित कहानी-संग्रह 'बातें अनकही' एवं उनके द्वारा रचित हाइकु संग्रह 'बोंसाई' का विमोचन किया गया, जिसमें श्री पवन जैन एवं श्री राकेश त्यागी' ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. शुभम त्यागी ने किया। द्वितीय सत्र में डॉ. शुभम त्यागी और श्री राकेश त्यागी का सम्मान किया गया। इस अवसर पर श्री पवन जैन द्वारा डॉ. रामावतार शर्मा को 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' से सम्मानित किया गया। तृतीय सत्र में आयोजित काव्य-गोष्ठी में सभी आगत कवियों ने काव्य पाठ किया। धन्यवाद सुश्री श्रुति सिन्हा ने ज्ञापित किया। □

'रोशनी है मगर अँधेरा' कृति लोकार्पित

२८ मार्च को रायबरेली में सदर तहसील के लेखपाल संघ सभागार में श्री नाज प्रतापगढ़ी की अध्यक्षता में कवि श्री रमाकांत के सद्य:प्रकाशित गजल-संग्रह 'रोशनी है मगर अँधेरा' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री अवनीश सिंह चौहान, स्वामी गीतानंद, रामनारायण रमण, विनय भदौरिया, शमसुद्दीन अजहर व संतोष डे ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री जय चक्रवर्ती ने किया तथा धन्यवाद श्री प्रमोद प्रखर ने ज्ञापित किया। □

पुस्तक लोकार्पित

२० फरवरी को हैदराबाद में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के खैरताबाद स्थित सम्मेलन कक्ष में 'साहित्य मंथन' द्वारा आयोजित समारोह में सुश्री गुर्रमकोंडा नीरजा की 'अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की व्यावहारिक परख' पुस्तक

का लोकार्पण प्रो. एम. वेंकटेश्वर की अध्यक्षता में किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री गोपाल शर्मा, वुल्ली कृष्णा राव, दिलीप सिंह, राधेश्याम शुक्ल, ऋषभदेव शर्मा, बी. सत्यनारायण, एम. रंगय्या, राजकुमारी सिंह, सुनीला सूद, बालकृष्ण शर्मा 'रोहिताश्व', के. श्याम सुंदर, मंजुनाथ एन. अंबिग, बलबिंदर कौर, मिथिलेश सागर, गोरखनाथ तिवारी, करन सिंह ऊटवाल, बी.एल. मीणा, ए.जी. श्रीराम, गुरुदयाल अग्रवाल, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, वेमूरि ज्योत्स्ना कुमारी, मटमरि उपेंद्र, जी. परमेश्वर, भँवरलाल उपाध्याय, मनोज शर्मा, संतोष विजय मुनेश्वर, टी. सुभाषिणी, संतोष कांबले, के. नागेश्वर राव, किशोर बाबू, इंद्रजीत कुमार, आनंद, वी. अनुराधा, जूजू गोपीनाथन, गहनीनाथ, झांसी लक्ष्मीबाई, माधुरी तिवारी, सी.एच. रामकृष्णा राव, प्रमोद कुमार तिवारी, रामकृष्ण दुर्गाश्री, जयपाल, अरुणा, नागराज, जूडे लेसली ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

'बुंदेलखंड : संस्कृति और साहित्य' विमोचित

२८ फरवरी को मध्य प्रदेश के श्यामल संस्था के तत्त्वावधान में रवींद्र भवन में डॉ. रामकृष्ण कुसमारिया की अध्यक्षता में डॉ. रामेश्वर प्रसाद पांडेय की लिखित पुस्तक 'बुंदेलखंड : संस्कृति और साहित्य' का विमोचन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री उमाकांत मिश्रा, मृणाल पांडेय, ओमप्रकाश चौबे, शैलेंद्र जैन व सुरेश आचार्य ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

'पेड़ चढ़े पहाड़' कृति लोकार्पित

२० मार्च को बुरहानपुर के खंडवा में मध्य प्रदेश का ३८वाँ आंचलिक साहित्यकार सम्मान समारोह श्री रामवल्लभ आचार्य की अध्यक्षता में संपन्न हुआ, जिसमें श्री संतोष परिहार द्वारा बाल साहित्य पर रचित पुस्तक 'पेड़ चढ़े पहाड़' का लोकार्पण किया गया। ☐

'अठन्नी वाले बाबूजी' कृति विमोचित

२७ मार्च को मुंबई के प्रेस क्लब में श्री सूरज प्रकाश एवं श्री विनोद कुमार श्रीवास्तव द्वारा कथाकार एवं पत्रकार श्री पवन तिवारी के उपन्यास 'अठन्नी वाले बाबूजी' का विमोचन किया गया। विशिष्ट अतिथि सर्वश्री शचींद्र त्रिपाठी, राकेश दुबे एवं सत्यजीत शेरगिल थे। इस अवसर पर श्री नामदार राही एवं सुश्री हेमा चंदानी ने रचना पाठ किया। संचालन श्री रास बिहारी पांडेय ने किया तथा आभार श्री मनोज सिंह ने व्यक्त किया। ☐

लोकार्पण एवं चर्चा कार्यक्रम संपन्न

२७ मार्च को लखनऊ में सी.एम.एस. गोमतीनगर में श्री के. विक्रम राव की अध्यक्षता एवं डॉ. गोपाल सिंह के मुख्य आतिथ्य में श्रीमती नीरजा द्विवेदी की पुस्तक 'रुहेलखंड के परंपरागत लोकगीत' पर चर्चा एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उत्तर प्रदेश के पूर्व पुलिस महानिदेशक श्री महेश चंद्र द्विवेदी की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'इंट्रस्टिंग एक्पोसर्स ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन' का लोकार्पण किया गया, जिसमें डॉ. उषा सिन्हा एवं सुश्री विमल पंत ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अंजना मिश्रा ने किया। ☐

लोकार्पण एवं काव्य संध्या संपन्न

३ अप्रैल को मुरादाबाद की साहित्यिक संस्था 'हिंदी साहित्य संगम' के तत्त्वावधान में आकांक्षा इंटर कॉलेज के सभागार में डॉ. माहेश्वर तिवारी की अध्यक्षता एवं डॉ. रामानंद शर्मा के मुख्य आतिथ्य में डॉ. कृष्ण कुमार 'नाज' की दो कृतियों 'हिंदी गजल और कृष्ण बिहारी नूर' तथा 'व्याकरण गजल का' का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर आयोजित काव्य-संध्या में मंचासीन अतिथियों ने रचना पाठ किया। संचालन श्री योगेंद्र वर्मा 'व्योम' ने किया तथा आभार श्री रामदत्त द्विवेदी ने व्यक्त किया। एक अन्य कार्यक्रम में डॉ. मीना नकवी के गीत-गजल संग्रह 'धूप-छाँव' का लोकार्पण किया गया, जिसमें अध्यक्ष डॉ. अजय 'अनुपम', मुख्य अतिथि श्री अनवर कैफी, विशिष्ट अतिथि डॉ. चंद्रभान सिंह यादव, सर्वश्री योगेंद्र वर्मा 'व्योम', मधु चतुर्वेदी ने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अंकित गुप्ता 'अंक' ने किया। ☐

'कहाँ हो तुम?' कृति लोकार्पित

विगत दिनों अलीगढ़ में संत फिदेलिस स्कूल जूनियर विंग के सभागार में डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ की अध्यक्षता एवं श्री संतोष कुमार शर्मा के मुख्य आतिथ्य में श्री अशोक अंजुम के गीत-संग्रह 'कहाँ हो तुम?' का लोकार्पण सर्वश्री महेंद्र कुमार मिश्र, प्रेमकुमार, फादर जॉर्ज पॉल, विवेक बसंल, संतोष कुमार शर्मा द्वारा किया गया। इस अवसर पर मंचासीन अतिथियों के साथ सर्वश्री राजेश कुमार, मंजू शर्मा व सुरेश कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. पूनम शर्मा ने किया। ☐

'आधारशिला' पत्रिका विमोचित

२० मार्च को मीरजापुर में लक्ष्मीबाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी के कुलाधिपति प्रो. पंजाब सिंह द्वारा महंत शिवाला, वरिष्ठ नागरिक कल्याण केंद्र, अमृत सभागार में वार्षिक पत्रिका 'आधारशिला' का विमोचन किया गया, जिसमें सर्वश्री बृजदेव पांडेय, चंद्रभूषण पांडेय, बाबू राजकुमार सिंह, सिद्धनाथ सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री रामगोपाल गोयल ने किया तथा धन्यवाद श्री मोहनलाल आर्य ने ज्ञापित किया। ☐

'एम.बी.ए. मेरी मंजिल' कृति लोकार्पित

१५ अप्रैल को नोएडा में जयपुरिया प्रबंधन संस्था के निदेशक डॉ. राजीव आर. ठाकुर द्वारा लिखित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'एम.बी.ए. मेरी मंजिल' का लोकार्पण केंद्रीय पर्यटन, संस्कृति और नागरिक उड्डयन मंत्री डॉ. महेश शर्मा द्वारा किया गया। ☐

साहित्यिक क्षति

श्री अजामिल माताबदल नहीं रहे

१४ मार्च को मॉरीशस में प्रख्यात हिंदी सेवी, लेखक, संपादक व प्रचारक श्री अजामिल माताबदल का ७१ वर्ष की आयु में देहांत हो गया। वे हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु सतत क्रियाशील रहे। हिंदी स्पीकिंग यूनियन और विश्व हिंदी सचिवालय के माध्यम से मॉरीशस और विश्व भर में हिंदी के सम्मान के लिए समर्पित रहे। सितंबर २०१५ में उन्हें दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन में हिंदी के लिए उनकी अद्वितीय सेवाओं हेतु विश्व हिंदी सम्मान से सम्मानित किया गया था।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।